भारत में आदिवासी विकास में पंचायती राज की भूमिका : उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले के विशेष संदर्भ में

हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय की पीएचडी उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध प्रस्तुति

शोध-निर्देशक
डॉ शांतेष कुमार सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग

शोधार्थी
सुधाकर चौबे
अनुक्रमांक:180204

राजनीति विज्ञान विभाग
स्कूल ऑफ़ आर्टस, ह्यूमनिटीज एंड सोशल साइंस
हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय, 123031 – महेंद्रगढ़ हरियाणा

2022

घोषणा-पत्र

मैं, सुधाकर चौबे यह घोषणा करता हूँ कि मैं डॉ. शांतेष कुमार सिंह के शोध निर्देशन में **"भारत में आदिवासी विकास में पंचायती राज की भूमिका: उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले के विशेष संदर्भ में"** विषय पर पीएच.डी. की उपाधि प्राप्ति के लिए शोध-प्रबंध प्रस्तुत कर रहा हूँ। मेरा यह शोध कार्य पूर्णत: मौलिक एवं शोधपरक है। मेरी जानकारी में इससे पूर्व हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय तथा अन्य किसी भी शैक्षणिक संस्थान अथवा विश्वविद्यालय में इस विषय पर कोई शोध कार्य नहीं हुआ है।

शोधार्थी
सुधाकर चौबे
अनुक्रमांक: 180204

दिनांक _____
हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय

प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि शोधार्थी सुधाकर चौबे ने मेरे निर्देशन में पीएच.डी. (राजनीति विज्ञान विभाग) की उपाधि हेतु **"भारत में आदिवासी विकास में पंचायती राज की भूमिका: उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले के विशेष संदर्भ में"** विषय पर शोध कार्य किया है। यह शोध कार्य इनके मौलिक प्रयास का प्रतिफलन है। मैं इस शोध-प्रबंध की मौलिकता और प्रतिपादित तथ्यों की उपयोगिता को दृष्टिगत कर इसे मूल्यांकनार्थ प्रस्तुत करने की संस्तुति करता हूँ।

शोध प्रबन्ध के मूल्याकंन हेतु संस्तुति करते हुये, मैं इनके उज्जवल भविष्य एवं उत्तरोत्तर प्रगति की भगवान से कामना करता हूँ।

दिनांक _____

विभागाध्यक्ष
डॉ. रमेश कुमार
एसोसिएट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग
हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय

दिनांक _____

शोध-निर्देशक
डॉ. शांतेष कुमार सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग
हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय

भूमिका

प्रस्तुत शोध प्रबंध में संबंध विन्यास में परिवर्तन का दौर आया है जो शोध कार्य को समकालीन बनाता है। अध्ययन की दृष्टि से मैंने अपने शोध प्रबंध को मुख्य रूप से छह अध्यायों में विभाजित किया है। प्रथम अध्याय परिचय के रूप में है जिसमे वर्तमान अध्ययन के लिए प्रासंगिक अवधारणाएँ जैसे कि विकेंद्रीकरण, राजनीतिक सशक्तिकरण, परिभाषाएँ और अनुसूचित जनजातियों की विशेषताएं शामिल है। इस अध्याय में अध्ययन के महत्व, इसके उद्देश्यों, पद्धति के अध्ययन पर भी चर्चा की गई है। दूसरा अध्याय सम्बंधित साहित्य की समीक्षा से है। तीसरा अध्याय पंचायती राज की संस्थाओ की ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य से सम्बंधित कानून एवं संवैधानिक प्रावधानो को शामिल किया गया है। चौथा अध्याय में उत्तरप्रदेश राज्य में पंचायती राज संस्थायें और जनजातियों की सहभागिता का सामाजिक आर्थिक ,जनगणना और पहचान संस्कृति का अवलोकन किया गया है। पांचवा अध्याय में उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज संस्थाओ में जनजातियों की सहभागिता :एक आनुभविक अध्ययन यह अध्याय शोध की विषय वस्तु के दृष्टीकोण से सबसे महत्वपूर्ण है ।छठा अध्याय जो की अंतिम है इसमें निष्कर्ष एवं सुझाव दिया गया है।

शोध करते हुए मैंने यह अनुभव किया कि शोध का बाह्य क्षेत्र जितना आकर्षक होता है उसकी आंतरिक प्रक्रिया उतनी ही जटिल होती है। इस शोध प्रबंध के विषय चयन प्रक्रिया एवं उसे गति व दिशा में कुशल निर्देशन के साथ-साथ शोध संबंधित समस्याओं को परिष्कृत करने के लिए सबसे पहले मैं अपने शोध निर्देशक डॉ शांतेष कुमार सिंह का हार्दिक आभारी हूँ। उन्होंने मुझे शोध के दौरान जो भी समस्याएँ या चुनौतिया उत्पन्न हुई सर ने मुझे उन समस्याओं से जूझना सिखाया। उन्होंने मेरी सीमाओं का मूल्यांकन करते हुए मेरे शोध प्रबंध

को व्यवस्थित स्वरूप देने में सदैव अपनी तत्परता दिखाई। मैं राजनीति विज्ञान विभाग के डॉ राजीव कुमार सिंह सर का भी अपने शोध प्रबंधन में निरंतर समर्थन और सम्यक मार्गदर्शन प्रेरणा के लिए आभार व्यक्त करता हूँ। मैं आशा करता हूँ कि भविष्य में भी इसी प्रकार मुझे आपका मार्गदर्शन मिलता रहेगा।

मुझे शोध कार्य करने की अनुमति देने के लिए अपने राजनीति विज्ञान विभाग के अनुसंधान समिति का भी धन्यवाद करता हूं। मैं विश्वविद्यालय के पुस्तकालय, वित्त और परीक्षा विभाग केअधिकारियों,कर्मचारियों का धन्यवाद करना चाहता हूं जिन्होंने कई बार मुझे अपने शोध कार्य से संबंधित समस्याओं का उपचार किया।

प्रस्तुत शोध प्रबंध के लिए मैं बड़े भाई श्री राहुल चतुर्वेदी जी का भी आभारी हूँ जिनके प्रेरणा स्रोत से मैं उच्च शिक्षा ग्रहण कर पाया।

मैं अपने सभी साथी सहपाठियों दोस्तों को धन्यवाद देता हूँ, जिन्होंने अपना समर्थन तथा प्रतिकूल परिस्थितियों में भी मेरा सहयोग किया।

दिनांक _____

शोधार्थी

सुधाकर चौबे

अनुक्रमांक-180204

राजनीति विज्ञान विभाग

हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय

अनुक्रमणिका

अध्याय संख्या		पृष्ट संख्या
	घोषणा	i
	प्रमाण-पत्र	ii
	भूमिका	iii-iv
	अनुक्रमणिका	v
	तालिकाओं एवं सारणीयों की सूची	vi-viii
पहला अध्याय	**प्रस्तावना**	**1-46**
दूसरा अध्याय	**साहित्य समीक्षा**	**47-82**
तीसरा अध्याय	**पंचायती राज संस्थाएं : ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य से सम्बंधित कानून एवं संवैधानिक प्रावधान**	**83-120**
चौथा अध्याय	**उत्तरप्रदेश में पंचायती राज संस्थाओं और जनजातियों की सहभागिता :एक अवलोकन**	**121-161**
पंचम अध्याय	**उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज संस्थाओ में जनजातियों की सहभागिता :एक आनुभविक अध्ययन**	**162-214**
छठा अध्याय	**निष्कर्ष एवं सुझाव**	**215-240**
	संदर्भ शोध सामग्री सूची-	**241-258**
	परिशिष्ट- सूचनादाता- साक्षात्कार प्रश्न अनुसूची	

तालिकाओं एवं सारणीयों की सूची

तालिका संख्या	तालिका का नाम	पृष्ट संख्या
4.1	यूपी राज्य में पंचायत चुनाव का कालक्रम	126
4.2	यूपी में पंचायतों के के स्तरों लिए नामकरण	128
4.3	प्रत्येक स्तर पर पंचायतों की संख्या	128
4.4	पंचायत के तीन स्तरों के लिए जनसंख्या मानदंड	129
4.5	चुनाव प्रचार के दौरान मौद्रिक व्यय के लिए, वर्ष के 2021 आंकड़े	130
4.6	स्थायी समितियां सभी तीनो स्तरों पर	133
4.7	विशिष्ट जिले में अनुसूचित जनजाति के रूप में मान्यता प्राप्त समुदाय	135
4.8	उत्तर प्रदेश में सभी अनुसूचित जनजातियों, कुल पुरुष महिला की रोजगार स्थिति	140
4.9	उत्तर प्रदेश में विभिन्न कार्यों के विवरण के साथ जनजातिवार सूची	143
4.10	उत्तर प्रदेश में अनुसूचित जनजातियों में साक्षरता दर	146
सारणी संख्या	**सारणी का नाम**	**पृष्ट संख्या**
5.1	उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था और अनुसूचित जनजाति सूचनादाताओं के ग्राम प्रधान का चुनाव लड़ने के कारणों के आधार पर वर्गीकरण	167
5.2	उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था और अनुसूचित जनजाति सूचनादाताओं द्वारा ग्राम प्रधान चुनाव में विजयी होने के कारणों के आधार पर वर्गीकरण	168
5.3	ग्राम पंचायतों की बैठकों में नियमित भाग लेने के ग्राम पंचायतों बैठकों में आधार पर वर्गीकरण	170
5.4	उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था और अनुसूचित जनजाति सूचनादाताओं द्वारा ग्राम प्रधानों के अधिकार एवं कर्तव्यों की विस्तार से जानकारी के आधार पर वर्गीकरण	171

तालिका संख्या	तालिका का नाम	पृष्ट संख्या
5.5	कृषि विकास कार्यक्रमों को लागू कराने में भूमिका के आधार पर वर्गीकरण	173
5.6	उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था का अनुसूचित जनजाति सूचनादाताओं द्वारा पशु सुधार कार्यक्रमों को लागू करवाने मे भूमिका के आधार पर वर्गीकरण	175
5.7	उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था का अनुसूचित जनजाति सूचनादाताओं द्वारा स्वास्थ्य कार्यक्रमों को लागू कराने मे भूमिका के आधार पर वर्गीकरण	177
5.8	अनुसूचित जनजाति कल्याण कार्यक्रमो को लागू कराने मे भूमिका के आधार पर वर्गीकरण	181
5.9	निर्बल आदिवासियों के कल्याण कार्यक्रमो को लागू कराने मे भूमिका के आधार पर वर्गीकरण	183
5.10	वैकल्पिक ऊर्जा कार्यक्रम को लागू कराने में भूमिका के आधार पर वर्गीकरण	185
5.11	आदिवासी ग्रामीण विकास के विभिन्न कार्यक्रमों को पंचायत द्वारा लागू कराने मे भूमिका के आधार पर वर्गीकरण	187
5.12	उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था का अनुसूचित जनजाति सूचनादाताओं द्वारा ग्राम्य विकास के अन्य कार्यक्रमों में भूमिका का औसत प्रतिशत	189
5.13	आदिवासी ग्रामीण पंचायत क्षेत्र की समस्याओं के आधार पर वर्गीकरण	192
5.14	समस्याओ के निराकरण के प्रयासों के आधार पर वर्गीकरण	193
5.15	समस्याओं के निराकरण मे प्राप्त सफलता का प्रतिशत के आधार पर वर्गीकरण	194
5.16	समस्याओं के निराकरण मे महसूस की गयी कठिनाइयो के आधार पर वर्गीकरण	196
5.17	ग्राम पंचायतो को प्रदत्त अधिकारो के प्रति मनोवृत्ति के आधार पर वर्गीकरण	199

तालिका संख्या	तालिका का नाम	पृष्ट संख्या
5.18	ग्राम पंचायतो मे महिलाओं की भागीदारी से होने वाले लाभो के आधार पर वर्गीकरण	201
5.19	पंचायती राज और और आदिवासी ग्रामीण विकास मे लघु कुटीर उद्योगो की भूमिका के आधार पर वर्गीकरण	206
5.20	आदिवासी ग्रामीण विकास कार्यक्रम चलाने हेतु ग्रामीण कार्यक्रम हेतु उपयोगी संस्थाओं के आधार पर वर्गीकरण	207
5.21	विकास कार्यक्रमों से ग्रामीण आदिवासी समाज में परिवर्तन हुआ है के आधार पर वर्गीकरण	208
5.22	आदिवासी ग्रामीण समाज मे परिवर्तन के क्षेत्रो के आधार पर वर्गीकरण	210

अध्याय-प्रथम

परिचय

आधुनिक समय में लोकतंत्र एक प्रकार का जीवन-दर्शन है। राजनीति में इसकी अवधारणा शासन में इसके विकेन्द्रीकरण के विचार के रूप में समाहित है। राजनीति में लोकतंत्र के प्रयोग का तात्पर्य केवल राज्य सत्ता में लोगों की भागीदारी का प्रयास ही नहीं है, बल्कि सरकार के दैनिक कामकाज में लोगों को सहभागी बनाना भी है। लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण लोगों को सहभागिता प्राप्त करने का एक सशक्त उपाय है। इसका उद्देश्य शासन कार्यो में लोगों की अधिकतम और जीवंत सहभागिता को सुनिश्चित करना होता है।[1] यहाँ उल्लेख करना आवश्यक है कि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण और स्थानीय स्वशासन की अवधारणाएँ एक-दूसरे की पर्यायवाची है या इनमें कोई भिन्नता है ? दोनों अवधारणाएँ इस अर्थ में पूरक है कि दोनों का मूल उद्देश्य शासन के कार्यो में लोगों की अधिकतम सहभागिता और स्वायत्तता प्राप्त करना होता है, और दोनों में अतंर यह है कि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण एक राजनीतिक अवधारणा है वहीं स्थानीय शासन उसका एक संस्थागत रुप है। लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के तीन रुप है-राजनीतिक, आर्थिक और प्रशासनिक। राजनीतिक विकेन्द्रीकरण का अर्थ है कि स्थानीय संस्थाओं में शासन की स्वायता अधिक हो और उसमे जनता की सहभागिता सुनिश्चित रहे। ये संस्थाएँ अपने कार्य क्षेत्र में स्वायत्त हो और उसमे केन्द्रीय तथा प्रान्तीय शासन का नियंत्रण कम हो। आर्थिक विकेन्द्रीकरण का अर्थ है कि इन संस्थाओं को निर्धारित दायित्वों को पूर्ण करने के लिए आर्थिक संसाधनों के प्रबंध का अधिकार और आत्मनिर्भरता का होना सुनिश्चित रहे । प्रशासनिक दृष्टिकोण से तात्पर्य स्थानीय शासन में

बिना ऊपर के हस्तक्षेप के कार्यों के निर्देशन, पर्यवेक्षण और व्यावहारिक आयोजन का अधिकार।[2]

पंचायती राज संस्था, भारत में जमीनी स्तर पर स्थानीय स्वशासन और लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण दोनों के रूप में अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। पंडित नेहरू का विचार था कि भारत तभी प्रगति करेगा जब गाँव में रहने वाले लोग राजनीतिक रूप से सचेत हो । इसलिए, उन्होंने जमीनी स्तर पर लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की शुरुआत करने का निर्णय लिया जिसे पंचायती राज के रूप में जाना जाता है। बाद में यही शासन व्यवस्था विकसित होकर भारत के संविधान 73 वां संशोधन अधिनियम, 1992 पंचायती राज को संवैधानिक दर्जा प्रदान करने के साथ पूरे भारत में लागू हुआ। इस अधिनियम में पंचायतों के अधिकारों, जिम्मेदारियों, आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए अपनी स्वंम की योजनाओं की तैयारी व कार्यान्वयन का अधिकार दिया गया है। जमीनी स्तर पर आदिवासी समुदायों के स्व-शासन के लिए, संविधान के तहत जनजातीय क्षेत्रों के लिए अलग-अलग कानूनों को लागू करने का प्रावधान है, जिसे संविधान की 5 वीं और 6 वीं अनुसूची के रूप में जाना जाता है।[3]

आदिवासी लोग देश के मूल निवासी हैं जिन्हें 'भूमि पुत्र' के रूप में जाना जाता है। अफ्रीका के बाद भारत में दुनिया की दूसरी सबसे अधिक जनजातीय आबादी निवास करती है। अनुसूचित जनजाति एक प्रशासनिक शब्द है जिन्हें ऐतिहासिक रूप से वंचित और पिछड़ा माना गया है । प्रशासनिक तंत्र आदिवासी लोगों के लिए कुछ विशिष्ट संवैधानिक विशेषाधिकारों के संरक्षण, और कल्याण करने के लिए प्रयास करता है। लोकुर समिति द्वारा एक समुदाय को अनुसूचित जनजाति के रूप में पहचाने जाने के लिए (क) आदिम विशिष्ट शारीरिक लक्षण (ख) विशिष्ट संस्कृति (ग) बड़े पैमाने पर समुदाय के साथ संपर्क के

शर्मीलेपन (घ) भौगोलिक अलगाव (ड़)) पिछड़ापन- सामाजिक और आर्थिक जैसी विशेषता होना अनिवार्य बताया। आदिवासी समुदाय देश के लगभग 15% क्षेत्रों में रहते हैं। ये विभिन्न पारिस्थितिक और भू-जलवायु परिस्थितियों में मैदानी, वन, पहाड़ियों और दुर्गम क्षेत्रों में निवास करते हैं। भारत में आदिवासी समूदाय सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक विकास के विभिन्न चरणों में हैं। सन 1975-76 में तथा 1993-94 में पहली बार कुछ समूहों की पहचान एसटी के बीच हाशिए पर माना गया। इन्हें विशेष योजनाओं के लाभ के उद्देश्य से आदिम जनजातीय समूह (पीटीजी) नामक एक नई श्रेणी में शामिल किया गया। वर्तमान में भारत के 75 आदिम जनजातीय समूह (पीटीजी) हैं, जो 17 राज्यों और एक केंद्रशासित प्रदेश में रहते हैं। इनकी प्रमुख विशेषता (क) पूर्व-कृषि कार्य निर्वहन (ख) उनकी एक स्थिर या घटती जनसंख्या (ग) बहुत ही कम साक्षरता (घ) आजीविका का एक निर्वाह निम्न स्तर रहा है।[4]

अनुसूचित जनजातियां

2011 की जनगणना के अनुसार, देश की जनजातीय आबादी 10.42 करोड़ जो लगभग 8.6 प्रतिशत है। हालाँकि, जनगणना के अनुसार एसटी की आबादी अनुपात आंशिक रूप से बढ़ रहा है क्योंकि इस श्रेणी में उच्च प्रजनन दर रही है। 2001 की अवधि के दौरान जनजातियों की जनसंख्या 23.7% की वृद्धि दर से बढ़ी थी। भारत में आधे से अधिक एसटी मध्य या मध्य भारतीय क्षेत्र में निवास करते हैं और कुछ उत्तर-पूर्वी राज्यों में अच्छी आबादी रहती हैं। भारत के राज्यों / केंद्रशासित प्रदेशों में कुल जनसंख्या में एसटी का अनुपात क्रमशः लक्षद्वीप (94.8%), मिजोरम (94.4%) नागालैंड (86.5%), मेघालय (86.1%) और अरुणाचल प्रदेश (68.8%) तथा प्रमुख राज्यों में क्रमशः आबादी छत्तीसगढ़ (30.6%)

झारखंड (26.2%) और उड़ीसा (22.8%) था। भारत के 28 राज्यों और 8 केंद्र शासित प्रदेशों में पंजाब, चंडीगढ़, हरियाणा, दिल्ली और पांडिचेरी को छोड़कर सभी राज्यों में एसटी हैं । भारत के संविधान के अनुच्छेद 342 के तहत कुल अधिसूचित 533 विभिन्न राज्यों में हैं, जिनमें से 62 अधिसूचित क्षेत्र उड़ीसा राज्य में स्थित हैं।

भारत के योजना आयोग के अनुसार अनुसूचित जनजाति मुख्य रूप से भूमिहीन गरीब वनवासी हैं जो खेती करने वाले, छोटे किसान और पशुपालक और घुमंतू चरवाहे हैं। कुल एसटी श्रमिकों का 81.56%, दोनों ग्रामीण और शहरी क्षेत्र में रहने वाले प्राथमिक कार्य कृषि में लगे हुए हैं, सामान्य आबादी का इनमे लगभग 31.65% कृषक हैं, तथा 36.85% खेतिहर मजदूर हैं। जो यह इंगित करता है कि अनुसूचित जनजाति अनिवार्य रूप से कृषि पर निर्भर हैं। वर्ष 2018 में भारत की कुल जनसंख्या का ग्रामीण क्षेत्रों में 60.30% और शहरी क्षेत्रों में 40.70% में रहती है। ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी क्रमशः 28.3%, शहरी क्षेत्रो में 25.70% है। उड़ीसा में, लगभग 75% एसटी परिवार गरीबी रेखा से नीचे थे। गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले बड़ी संख्या में एसटी आदिवासी भूमिहीन हैं, जिनके पास कोई स्थाई संपत्ति नहीं है और न ही स्थायी रोजगार और न्यूनतम मजदूरी दर प्राप्त करते है। समान और न्यूनतम मजदूरी से वंचित होने के कारण इन समूदायो से संबंधित महिलाएं और भी अधिक पीड़ित हैं। 2001 -2011 की अवधि के दौरान अनुसूचित जनजातियों के बीच साक्षरता दर 35.62% से बढ़कर 57.10% हो गई है। एसटी पुरुषों के बीच साक्षरता दर 40.65% से बढ़कर 59.20% हो गई और एसटी महिला साक्षरता 2001-2011 की अवधि के दौरान 18.20% से बढ़कर 34.80% हो गई। कुल महिला साक्षरता की तुलना में एसटी महिला साक्षरता की दर लगभग 20% कम है।

प्रारम्भ काल से ही पंचायतें भारतीय गांवों की रीढ़ रही हैं। महात्मा गांधी ने भी आत्मनिर्भर ग्राम गणराज्यों की परिकल्पना की थी। यही वजह रही की राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत के तहत भारतीय संविधान के अनुच्छेद 40 में जगह दी गई थी। यह वास्तव में पूर्णा स्वराज और ग्राम स्वराज की अवधारणा का एक अभिन्न अंग था। पूर्ण स्वराज की उनकी अवधारणा का अर्थ था स्थानीय समुदाय के द्वारा स्वायत्तपूर्ण विकास सुनिश्चित हो सके । इसका सीधा मतलब जीवन के हर पड़ाव में स्थानीय समुदाय के अंतिम व्यक्ति के विकास से है। महात्मा गांधी ने कहा:

"गाँव में हर वर्ष वयस्क ग्रामीणों, जिनमे पुरुषों और महिलाओं द्वारा पंचायत सदस्यों का न्यूनतम निर्धारित योग्यता के साथ चुनाव हो । इसमें स्वीकृत सभी स्वायत प्राधिकरण और क्षेत्राधिकार शामिल हों। इस पंचायत में अपने कार्यप्रणाली के संचालन के लिए संयुक्त विधायी, न्यायपालिका और कार्यपालिका हो।"[5]

बलवंतराय मेहता के नेतृत्व में समिति के अध्ययन समूह दल की सिफारिश की गयी जिसे लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की योजना अर्थात पंचायती राज के रूप में जाना जाता है। इसका उद्घाटन राजस्थान में नागौर में 2 अक्टूबर, 1959 को भारत के प्रथम प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरु द्वारा किया गया था। उन्होंने पंचायती राज संस्थान को अभिन्न, लोकतांत्रिक स्वशासन और जमीनी स्तर पर लोकतांत्रिक विकास दोनों के रूप में इसकी कल्पना की थी। पंडित नेहरू का विचार था कि भारत तभी प्रगति करेगा जब गाँव में रहने वाले लोग राजनीतिक रूप से जागरुक हों । उनका मानना था की "हमारे देश की प्रगति हमारे गांवों की प्रगति के साथ सीधे से जुडी हुई है। यदि हमारे गांव प्रगति करते हैं, तो भारत एक मजबूत राष्ट्र बन जाएगा और कोई भी इसके आगे बढ़ने से रोक नहीं सकता यदि आप अपने दृढ़ संकल्प

से नहीं बढते हैं और आपसी झगड़े और गुटों में शामिल हो जाते हैं, तो आप अपने विकास के मिशन में सफल नहीं हो पाएंगे।" प्रथम प्रधानमंत्री नेहरू के कहने पर अधिकांश राज्यों ने अपने-अपने राज्यों में पंचायती राज अधिनियम को अपनाया। बलवंतराय मेहता समिति की रिपोर्ट को आमतौर पर अधिकांश राज्यों में पालन किया था, लेकिन इसमें कुछ स्थानीय बदलाव के साथ । सबसे महत्वपूर्ण राज्य में महाराष्ट्रा और गुजरात थे जिन्होंने काफी प्रशासनिक शक्तियों के साथ जिला परिषदों की स्थापना की थी। इसका जो स्थानीय प्रारूप रहा वह विकेंद्रीकृत राजनीतिक और प्रशासनिक शक्ति संरचना की आवश्यकता की सामान्य स्वीकृति के साथ थी।[6]

जमीनी स्तर पर आदिवासी समुदायों के स्वशासन के लिए, संविधान के तहत जनजातीय क्षेत्रों के लिए अलग कानूनों को लागू करने का प्रावधान है, जिन्हें 5 वीं और 6 वीं अनुसूची के रूप में जाना जाता है। इन विशेष प्रावधानों की मूल भावना यह है कि औपचारिक प्रणाली के संबंध में, जिसे आदिवासी क्षेत्रों के लिए अपनाया जा सकता है, आदिवासी समाज की परंपरा को बुनियादी रूप से स्वीकार किया जाना चाहिए ताकि आदिवासी लोगों को पूरी तरह से आगे बढ़ने का अवसर मिले। उनकी स्थिति के बारे में उनकी अपनी समझ के अनुसार और कोई भी बाहर की व्यवस्था आदिवासी समाज को मजबूर नहीं करती है जो कि जनजातीय आबादी की समझ और हित से परे हो । आदिवासी विकास के पंचशील सिधांत के अनुसार कुछ बुनियादी सिद्धांत तैयार किए थे। इनके प्रमुख पांच बिंदु इस प्रकार से हैं-

(1) आदिवासी लोगों को उनकी भावना और समझ के अनुसार आगे बढ़ना चाहिए।

(2) भूमि और वनों पर उनके अधिकारों का सम्मान किया जाना चाहिए।

(3) कामकाजी टीमों को स्वयं आदिवासी लोगों के बीच से प्रशिक्षित किया जाना चाहिए।

(4) इन क्षेत्रों में प्रशासन की अधिक दखलंदाजी नहीं होना चाहिए।

(5) इन क्षेत्रों में विकास के परिणामों का आकलन आँकड़ों या व्यय के अनुमानों के संदर्भ में नहीं किया जाना चाहिए, और वे आदिवासियों गुणवत्ता के विकास के संदर्भ में होना चाहिए।

पंचायत को संवैधानिक दर्जा

पीआरआई को संवैधानिक दर्जा प्रदान करने के लिए संविधान में 73 वां संशोधन अधिनियम, 1992 लागू हुआ। इसलिए संविधान के 73 वें संशोधन का स्वागत सभी ग्रामीण भारत की राजनीतिक संरचनाओं और संस्थाओ द्वारा किया गया। यह अधिनियम केंद्रीयकृत राज्य संरचनाओं से निर्णय लेने की स्थानीय इकाई को शक्ति प्रदान करके जमीनी स्तर पर लोकतंत्र को गहरा और मजबूत करने का आधार प्रदान करता है। शक्तियों को निर्वाचित प्रतिनिधियों में निहित किया गया था ताकि वे सामाजिक-आर्थिक और राजनीतिक विकास शुरू कर सकें और लोकतांत्रिक सिद्धांतों के आधार पर समाज का निर्माण कर सकें। यह ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के माध्यम से विकेंद्रीकरण और गरीबी में कमी और उनके कल्याण के सिद्धांत में क्रांति की एक शुरुआत थी। संविधान की मुख्य विशेषताएं निम्नलिखित हैं:

(1) त्रिस्तरीय व्यवस्था बनाकर पंचायतों को संवैधानिक दर्जा दिया गया।

(2) सीटें एससी और एसटी और महिलाओं के लिए आरक्षित किया गया।

(3) जिला पंचायत और नगरपालिकाओं के निर्वाचित सदस्य के बीच और चुनाव के माध्यम से जिला योजना समितियों (डीपीसी) का गठन किया गया।

(4) अधिनियम की ग्यारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध विषयों से संबंधित योजनाओं की तैयारी और कार्यान्वयन में राज्य द्वारा शक्ति और जिम्मेदारियों का आवंटन किया गया।

(5) राज्य विधायिका ने पंचायत को उपयुक्त स्थानीय करों को वसूलने, एकत्र करने और उचित करने के लिए अधिकृत किया गया । सरकार संबंधित राज्य की समेकित निधि से पंचायतों को अनुदान दे सकती है।

(6) पंचायतों की वित्तीय स्थिति की समीक्षा एक राज्यों की वित्त आयोग द्वारा की गयी, जिसका गठन हर पांच साल में किया गया।

(7) पंचायतों को स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव सुनिश्चित करने के लिए राज्य निर्वाचन आयोग का गठन किया गया।

73 वां संवैधानिक संशोधन अधिनियम देश भर में इन संस्थानों को त्रिस्तरीय संरचना प्रदान करता है। ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत, मध्यवर्ती स्तर पर पंचायत समिति, जिला स्तर पर जिला परिषद की व्यवस्था की गयी। वर्तमान में भारत में ग्रामीण स्थानीय सरकार में ग्रामीण स्तर पर 2,32,278 पंचायत, मध्यवर्ती स्तर पर 6,022 पंचायत और जिला स्तर पर 535 पंचायत हैं जिनमें लगभग 29.2 लाख निर्वाचित प्रतिनिधि हैं।

पंचायतों को मुख्य रूप से विभिन्न केंद्र प्रायोजित योजनाओं के कार्यान्वयन के लिए सौंपा गया है। इस प्रकार, निर्णय लेने की प्रक्रियाओं के विकेंद्रीकरण का अर्थ है कि पंचायतें बुनियादी सेवाओं के लिए स्थानीय वरीयता और प्राथमिकताओं की पहचान करने के लिए बेहतर स्थिति में रहे। कुशल और प्रभावी लक्ष्यीकरण के मामले में गरीबी का मुकाबला करने के लिए पंचायती राज संस्था एक आशाजनक संस्थागत कड़ी रही है। इसलिए, पंचायती राज संस्थाओं को और प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है, इसलिए इसे जमीनी स्तर पर विभिन्न विकास कार्यक्रमों में भाग लेने की योजना और कार्यान्वयन के लिए एक उपकरण के रूप में

मान्यता दी जा रही है। सरकार कार्यों, शक्तियों और वित्त के मामले में पंचायती राज संस्थाओं को सशक्त बनाने के लिए लगातार प्रयास कर रही है।

अनुसूचित क्षेत्र

दो अनुसूचियां- पांचवीं और छठी अनुसूचियां - भारत के संविधान में एसटी द्वारा बसाए गए क्षेत्रों के लिए विशेष व्यवस्था है। मुख्य रूप से आदिवासियों द्वारा बसाए गए क्षेत्रों की एक बड़ी संख्या को ब्रिटिश काल के दौरान आंशिक रूप से बहिष्कृत क्षेत्रों के लिए घोषित किया गया था। ये क्षेत्र 1874 के अनुसूचित जिला अधिनियम और भारत सरकार के 1936 के अधिनियम बनाये गये । स्वतंत्रता के बाद, इन क्षेत्रों को क्रमशः पांचवें और छठे अनुसूचियों को भारत के संविधान के अनुसूची में शामिल किया गया। अब उन्हें अनुसूचित क्षेत्र के रूप में जाना जाता है। जिनमे कुछ अन्य मुख्य रूप से आदिवासी बहुल क्षेत्रों को राष्ट्रपति द्वारा भी बाद में अनुसूचित क्षेत्र घोषित किया गया है ।

पांचवीं अनुसूची

संविधान की इस अनुसूची के प्रावधानों के तहत राज्यों के राज्यपालों को विशेष शक्तियां और जिम्मेदारियां प्रदान की जाती हैं। राज्यपाल एक राज्य सरकार में राज्य का संवैधानिक प्रमुख होता है और केंद्र सरकार द्वारा नियुक्त किया जाता है। संविधान के अनुच्छेद 163 के तहत, राज्यपाल अपनी शक्तियों का प्रयोग मंत्रिपरिषद की 'सहायता और सलाह', अर्थात् चुनी हुई राज्य सरकार के मंत्रिमंडल के साथ करने के लिए करता है। व्यवहार में, वह मंत्रिमंडल के फैसलों और चुनी हुई सरकार की नीति से बाध्य है। पांचवीं और छठी अनुसूचियों द्वारा राज्यपाल को प्रदत्त अधिकारों को राज्य सरकार से स्पष्ट मंजूरी के बिना प्रयोग किया जा सकता है या नहीं इस पर मुद्दे काफी बहस भी हुई । पांचवीं अनुसूची

'अनुसूचित क्षेत्रों' को राष्ट्रपति के रूप में ऐसे क्षेत्रों को परिभाषित करती है, राष्ट्रपति उस राज्य के राज्यपाल के साथ परामर्श और राज्य सरकार के परामर्श के बाद अनुसूचित क्षेत्र घोषित किया जा सकता है। राष्ट्रपति नए क्षेत्रों को बदल सकते हैं, बढ़ा सकते हैं, घटा सकते हैं, या 'अनुसूचित क्षेत्रों' से संबंधित किसी भी आदेश को संशोधित कर सकते हैं।

आदिवासियों की सुरक्षा और लाभ के लिए अनुसूचित क्षेत्रों में कुछ विशिष्ट प्रावधान किये गये हैं:-

ए. अनुसूचित क्षेत्रों वाले राज्य के राज्यपाल को निम्नलिखित के संबंध में नियम बनाने का अधिकार है।

1. जनजातियों से भूमि के हस्तांतरण को प्रतिबंधित किया गया है।

2. एसटी आदिवासी के सदस्यों के व्यवसाय को विनियमित किया गया है।

3. ऐसा कोई विनियमन करने में, राज्यपाल संसद के या राज्य के विधानमंडल के किसी भी अधिनियम को निरस्त कर सकता है या उसमें संशोधन कर सकता है, जो उस क्षेत्र में लागू होता है।

बी. राज्यपाल सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा यह निर्देश दे सकते हैं कि संसद या राज्य के विधानमंडल का कोई विशेष अधिनियम अनुसूचित क्षेत्रों या राज्य के किसी भी हिस्से पर लागू नहीं होगा या ऐसे अपवादों और संशोधनों के अधीन ऐसे क्षेत्र के लिए लागू होगा जो वह निर्दिष्ट कर सकते हैं।

सी. राज्य के अनुसूचित क्षेत्र वाले राज्यपाल, भारत के राष्ट्रपति द्वारा प्रतिवर्ष, या जब भी आवश्यक हो, राज्य के अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन के संबंध में राष्ट्रपति को एक रिपोर्ट बना

सकते हैं। अनुसूची यह भी शक्ति प्रदान करती है कि संघ राज्य सरकार को उक्त क्षेत्र के प्रशासन के लिए निर्देश दे सकता है।

डी. अनुसूचित क्षेत्रों वाले राज्यों में जनजातीय सलाहकार परिषद (टीएसी) की स्थापना का प्रावधान है। भारत के राष्ट्रपति के निर्देश पर अनुसूचित क्षेत्रों में नहीं बल्कि एसटी होने वाले किसी भी राज्य में एक जनजातीय सलाहकार परिषद की स्थापना की जा सकती है। जनजातीय सलाहकार परिषद में बीस से अधिक सदस्य नहीं होने चाहिए, जिनमें से तीन-चौथाई राज्यों के विधान सभा में अनुसूचित जनजातियो के प्रतिनिधि होने चाहिए। राज्य में अनुसूचित जनजातियो के कल्याण और उन्नति से संबंधित मामलों पर राज्य सरकार को सलाह देने के लिए जनजातीय सलाहकार परिषद की अहम् भूमिका है।

ई. पंचायतें (अनुसूचित क्षेत्रों का विस्तार) अधिनियम 1996 जिसके तहत अनुसूचित क्षेत्रों के लिए विस्तारित पंचायतों (निर्वाचित ग्राम सभाओं) से संबंधित प्रावधान भी अनुसूचित जनजातियों के लाभ के लिए विशेष प्रावधान करता हैं।

किसी भी क्षेत्र को पांचवीं अनुसूची के तहत 'अनुसूचित क्षेत्र' घोषित करने के लिए मानदंड हैं:

आदिवासी आबादी का पूर्वानुभव, क्षेत्र की संरचना और उचित आकार, एक व्यवहारिक प्रशासनिक इकाई जैसे जिला, ब्लॉक या तालुक, पड़ोसी क्षेत्रों की तुलना में क्षेत्र का आर्थिक पिछड़ापन दिखाई दे।

छठी अनुसूची

संविधान की छठी अनुसूची असम, मेघालय, त्रिपुरा और मिजोरम राज्यों में कुछ 'आदिवासी क्षेत्रों' के प्रशासन पर लागू होती है। ये क्षेत्र स्वायत्त जिलों और स्वायत्त क्षेत्रों द्वारा शासित हैं और इनमें जिला परिषद, स्वायत्त परिषद और क्षेत्रीय परिषद भी हैं। इन परिषदों में व्यापक विधायी, न्यायिक और कार्यकारी शक्तियाँ हैं। उन्हें प्राथमिक विद्यालय, औषधालय, बाजार, मवेशी तालाब, घाट, मछली पालन, सड़क परिवहन और जलमार्ग आदि जैसे मामलों के संबंध में जिला परिषद की मंजूरी अनिवार्य है। उत्तरी कैचर हिल्स की स्वायत्त परिषदों और असम में कार्बी आंगलोंग को माध्यमिक शिक्षा, कृषि, सामाजिक सुरक्षा और सामाजिक बीमा, सार्वजनिक स्वास्थ्य और स्वच्छता, लघु सिंचाई आदि जैसे मामलों के संबंध में कानून बनाने के लिए जिला परिषद को अतिरिक्त अधिकार दिए गए हैं (बोडोलैंड और त्रिपुरा को छोड़कर)। सिविल प्रक्रिया संहिता और आपराधिक प्रक्रिया संहिता के तहत कुछ मुकदमों और अपराधों, अपने क्षेत्र में राजस्व और करों को इकट्ठा करने के लिए एक राजस्व प्राधिकरण की शक्तियों के साथ-साथ प्राकृतिक संसाधनों को विनियमित करने और प्रबंधित करने के लिए शक्तियों को प्राप्त करने के लिए अधिकार दिया गया है। छठी अनुसूची विशेष रूप से जिला परिषदों के अधिकार क्षेत्र से जैसे कि आरक्षित वन (एक विशेष प्रकार के सरकारी वन) और राज्य सरकार द्वारा भूमि का अधिग्रहण जैसे कुछ मुद्दों को शामिल करती है। सर्वोच्च न्यायालय ने यह भी माना है कि इन अनुसूचित जिला परिषदों के पास 'पूर्ण' विधायी शक्तियां नहीं हैं, उनकी शक्तियाँ छठी अनुसूची में निर्दिष्ट विषयों तक सीमित हैं और उदाहरण के लिए, भूमि के हस्तांतरण पर उनकी शक्तियाँ शामिल हैं या गैर-रॉयल्टी वसूलना, वन उत्पाद के लाभ के बटवारा के रूप में देख सकते हैं।[7]

पंचायतों के प्रावधान (अनुसूचित क्षेत्रों तक विस्तार) अधिनियम, 1996

1996 में अनुसूचित क्षेत्रों के लिए इन प्रावधानों का विस्तार करने के लिए संसद द्वारा अनुसूचित क्षेत्रों अधिनियम (पीईएसए) के लिए पंचायत विस्तार लागू किया गया । अनुसूचित क्षेत्रों वाले राज्यों को संसद में PESA के पारित होने के एक वर्ष के भीतर राज्य कानून बनाये गये । आंध्र प्रदेश, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र, उड़ीसा और राजस्थान जैसे अनुसूचित क्षेत्रों में से आठ राज्यों ने पेसा प्रावधानों में शामिल करने के लिए अपने मौजूदा पंचायत अधिनियमों में संशोधन किया है। हालाँकि, नव गठित झारखंड राज्य ने 2001 में एक नया पंचायत अधिनियम बनाया गया ।

अधिनियम की विशेषताएं इस प्रकार हैं:

(1) पंचायतों पर एक ऐसा राज्य कानून बनाया जा सकता है जो प्रथागत नियमो , सामाजिक और धार्मिक प्रथाओं और सामुदायिक संसाधनों के पारंपरिक प्रबंधन प्रथाओं के अनुरूप हो।

(2) इसमें एक गाँव या बस्ती या बस्तियों का समूह या फिर एक समुदाय हो जो परंपराओं और रीति-रिवाजों के अनुसार अपने मामलों का स्वम् प्रबंधन करे ।

(3) प्रत्येक गाँव में एक ग्राम सभा होगी जिसमें ऐसे व्यक्ति शामिल होंगे जिनका नाम ग्राम स्तर पर पंचायत के लिए मतदाता सूची में शामिल हो।

(4) प्रत्येक ग्राम सभा लोगों की परंपराओ, रीति-रिवाजों, उनकी सांस्कृतिक पहचान, सामुदायिक संसाधनों का संरक्षण और आपसी विवाद समाधान के प्रथागत नियमो को लागू करने के लिए सक्षम हो।

(5) प्रत्येक ग्राम सभा- i) इस तरह की योजनाओं, कार्यक्रमों और परियोजनाओं को ग्राम स्तर पर पंचायत द्वारा कार्यान्वित करने से पहले सामाजिक और आर्थिक विकास के लिए योजनाओं, कार्यक्रमों और परियोजनाओं को मंजूरी देती है, ii) लोगो की पहचान, गरीबी उन्मूलन और अन्य कार्यक्रमों के तहत लाभार्थियों के रूप में व्यक्तियों का चयन करती है।

(6) ग्राम स्तर पर प्रत्येक पंचायत को ग्राम सभा से योजनाओं, कार्यक्रम और परियोजनाओं के लिए पंचायत द्वारा धन के उपयोग को पारदर्शी आवंटन आवश्यक हो।

(7) प्रत्येक पंचायत में अनुसूचित क्षेत्रों में सीटों का आरक्षण पंचायत में आदिवासी समुदायों की जनसंख्या के अनुपात में निर्धारित हो बशर्ते कि अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षण कुल सीटों की संख्या के आधे से कम न हो और सभी स्तरों पर पंचायतों के अध्यक्षों की सभी सीटें अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित हों।

ए. राज्य सरकार ऐसे अनुसूचित जनजातियों से संबंधित व्यक्तियों को नामित कर सकती है, जिनका मध्यवर्ती स्तर पर पंचायत या जिला स्तर पर पंचायत में कोई प्रतिनिधित्व नहीं है। बशर्ते ऐसा नामांकन पंचायत में चुने जाने वाले कुल सदस्यों के दसवें हिस्से से अधिक न हो।

बी. विकास परियोजनाओं के लिए अनुसूचित क्षेत्रों में भूमि के अधिग्रहण से पहले और अनुसूचित क्षेत्रों में ऐसी परियोजनाओं से प्रभावित व्यक्तियों के पुनर्वास से पहले, वास्तविक योजना और कार्यान्वयन के लिए ग्राम सभा या पंचायतों से उचित स्तर पर परामर्श किया जाएगा। अनुसूचित क्षेत्रों में राज्य स्तर पर समन्वित किया जाए।

सी. अनुसूचित क्षेत्रों में लघु जल निकायों की योजना और प्रबंधन पंचायतों को उचित स्तर पर सौंपा जाए।

डी. अनुसूचित क्षेत्रों में गौण खनिजों के लिए पूर्वेक्षण लाइसेंस या खनन पट्टे के अनुदान से पहले उचित स्तर पर ग्राम सभा या पंचायतों की सिफारिशों को अनिवार्य किया जाए।

ई. नीलामी द्वारा प्रमुख खनिजों के दोहन के लिए रियायत प्रदान करने के लिए उचित स्तर पर ग्राम सभा या पंचायतों की पूर्व सिफारिश अनिवार्य हो।

फ. अनुसूचित क्षेत्रों में पंचायतों को ऐसी शक्तियों और अधिकारों के साथ समाप्त करने के लिए, जो उन्हें स्व-सरकार की संस्थाओं के रूप में कार्य करने में सक्षम बनाने के लिए आवश्यक हो सकते हैं, एक राज्य विधानमंडल यह सुनिश्चित करे कि पंचायतें उचित स्तर पर और ग्राम सभा विशेष रूप से संपन्न हों। इनमें निषेध लागू करने या किसी भी नशीले पदार्थ की बिक्री और खपत को विनियमित करने या प्रतिबंधित करने जैसी कार्यो को करने की शक्ति शामिल है।

लघु वन उत्पादों का स्वामित्व

अनुसूचित क्षेत्रों में भूमि के बेदखल को रोकने की शक्ति और अनुसूचित जनजाति की किसी भी अवैध रूप से अलग-थलग भूमि को पुनर्स्थापित करने के लिए उचित कार्रवाई करने की शक्ति, गाँव के बाजारों का प्रबंधन करने की शक्ति का प्रावधान है। अनुसूचित जनजातियों को धन उधार पर नियंत्रण करने की शक्ति, सभी सामाजिक क्षेत्रों में संस्थानों और अधिकारियों पर नियंत्रण रखती है, आदिवासी उप-योजनाओं सहित ऐसी योजनाओं के लिए स्थानीय योजनाओं और संसाधनों पर नियंत्रण करने की शक्ति का भी प्रावधान है। राज्य का कानून जो

पंचायतों को शक्तियों और अधिकारों से संपन्न कर सकता है, उन्हें स्व-सरकार की एक संस्था को कार्य करने में सक्षम बनाने के लिए आवश्यक हो सकता है, उच्च स्तर पर पंचायतें किसी ग्राम सभा की पंचायत की शक्तियों और उसके अधिकारों को कम न मानें। राज्य विधानमंडल अनुसूचित क्षेत्रों में जिला स्तर पर पंचायतों में प्रशासनिक व्यवस्था का गठन करते हुए संविधान की छठी अनुसूची के में दिए गये प्रावधानों के पालन करने का प्रयास करे।[8]

पंचायती राज और ग्रामीण और जनजातीय विकास कार्यक्रम

ग्रामीण क्षेत्रो में रहने वाले आदिवासीयो के विकास परस्पर आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय से संबंधित है। ग्रामीण और आदिवासी लोगों के जीवन स्तर में और न्यूनतम बुनियादी जरूरतें, सुधार तथा पर्याप्त गुणवत्ता वाली सामाजिक सेवाएं प्रदान करके ही उनका उचित विकास किया जा सकता हैं। यह एक व्यापक और बहुआयामी अवधारणा है। इसमें कृषि और संबद्ध गतिविधियों, गाँव और कुटीर उद्योगों और शिल्प, सामाजिक-आर्थिक अवसंरचना, सामुदायिक सेवाओं और सुविधाओं के साथ साथ मानव संसाधनों का विकास शामिल है। शासन का विकेंद्रीकरण ग्रामीण और जनजातीय विकास से कई मायनों में जुड़ा हुआ है। निर्णय लेने की प्रक्रिया के विकेंद्रीकरण का मतलब है कि पंचायतें बुनियादी सुविधाओं की सेवाओं के लिए स्थानीय प्राथमिकताओ की पहचान करने के लिए बेहतर स्थिति में रहे । इसमें प्रभावी लक्ष्यीकरण के मामले में गरीबी का मुकाबला करने के लिए पंचायती राज संस्थान एक आशाजनक संस्थागत कड़ी हो सकते हैं। पंचायतों के बढ़ते महत्व के साथ, ग्रामीण और आदिवासी विकास के लिए उनकी सेवाओं का उपयोग करने की आवश्यकता है। पंचायतों को मुख्य रूप से विभिन्न केन्द्र प्रायोजित विकास कार्यक्रमों जैसे कि MGNREGS, RGGVY, PMGSY, IAY, TSE, NRHM, CRSP, ARWSP,

SSA, मिड डे मील, आदि के लिए भारत सरकार के विभिन्न मंत्रालयों द्वारा चलाया किया जा रहा है।

भारत निर्माण: यह योजना अनुसूचित जनजाति क्षेत्र के सम्पूर्ण विकास से भी जुड़ा है। वित्त मंत्री ने 28 फरवरी 2005 को अपने बजट भाषण में, ग्रामीण सड़कों को भारत निर्माण के छह घटकों में से एक के रूप में पहचाना और पहाड़ी के मामले में 1000 (500 की आबादी वाले सभी गांवों को कनेक्टिविटी प्रदान करने का लक्ष्य निर्धारित किया) (आदिवासी क्षेत्र) वर्ष 2009 तक पूरी तरह से सड़कों के साथ। कुल 66,802 बस्तियों को भारत निर्माण के तहत नई कनेक्टिविटी प्रदान करने का प्रस्ताव है। इसमें 1, 46,185 किमी ग्रामीण सड़कों का निर्माण शामिल है। नई कनेक्टिविटी के अलावा, भारत निर्माण ने मौजूदा ग्रामीण सड़कों के 1, 94,130 किमी के उन्नयन / नवीनीकरण की परिकल्पना की है। इसमें 60 प्रतिशत अपग्रेडेशन और 40 प्रतिशत नवीकरण लागत शामिल है।

इंदिरा आवास योजना (आईएवाई): भारत सरकार गरीबी रेखा (बीपीएल) ग्रामीण परिवारों को अनुसूचित जाति/जनजाति से संबंधित आवास इकाइयों के निर्माण / उन्नयन के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए वर्ष 1985-86 से इंदिरा आवास योजना लागू कर रही है। अनुसूचित जनजाति और बंधुआ मजदूर वर्ग को मुक्त कर दिया है । योजना के तहत, वित्तीय संसाधन केंद्र और राज्यों के बीच 75:25 आधार पर साझा किए जाते हैं। चूंकि आश्रयहीनता में कमी प्राथमिक उद्देश्य है, 75 प्रतिशत वेटेज आवास की कमी को दिया जाता है और 25 प्रतिशत गरीबी के अनुपात में राज्य स्तर के आवंटन के लिए योजना आयोग द्वारा निर्धारित किया जाता है। जिला-स्तरीय आवंटन के लिए, 75 प्रतिशत वेटेज फिर से आवास की कमी और 25 प्रतिशत संबंधित जिलों की एससी / एसटी आबादी को दिया जाता है।

किए गए आवंटन और निर्धारित लक्ष्य के आधार पर, जिला ग्रामीण विकास एजेंसी (DRDA / जिला परिषद) IAY के तहत पंचायत वार घरों का निर्माण करने का निर्णय लेती है और संबंधित ग्राम पंचायत को भी शामिल करती है। इसके बाद, ग्राम सभा लाभार्थियों का चयन करती है। स्थायी IAY वेटलिस्ट से पात्र परिवारों की सूची से आवंटित लक्ष्य तक इसकी संख्या को सीमित करना है । इसमें उच्च प्राधिकारी की स्वीकृति की आवश्यकता नहीं है। प्रत्येक IAY घर के लिए सेनेटरी लैट्रीन और धुआं रहित चूल्हा और उचित जल निकासी होना जरूरी है।

सम्पूर्ण स्वच्छता अभियान (TSC): अनुसूचित जनजाति क्षेत्र में सम्पूर्ण स्वच्छता अभियान कार्यक्रम स्वच्छता सुविधाओं के लिए सूचना उत्पादन, शिक्षा और संचार (IEC) की मांग पर जोर देता है। यह लोगों के व्यवहार को बदलने के लिए स्कूल स्वच्छता और स्वच्छता शिक्षा पर जोर देता है इसमें सहस्त्राब्दि विकास लक्ष्य प्राप्त करने और वर्ष 2021 तक सभी के लिए स्वच्छता का लक्ष्य रखा गया है। टीएससी के घटकों में स्टार्ट-अप को भी शामिल किया गया हैं। ग्रामीण आदिवासी क्षेत्रो में सेनेटरी परिसर, घरेलू शौचालय, सामुदायिक स्वच्छता परिसर, स्कूल स्वच्छता और स्वच्छता शिक्षा, आंगनवाड़ी शौचालय और वैकल्पिक वितरण तंत्र पर ध्यान दिया गया है । इस परियोजना में गाँवों में ठोस / तरल अपशिष्ट निपटान के घटक को शामिल किया गया है।

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (MGNREGA): NREGS, जो पहले चरण में 200 सबसे पिछड़े जिलों में 2 फरवरी, 2006 को लॉन्च किया गया था, दूसरे चरण में 330 जिलों तक विस्तारित किया गया । 28 सितंबर, 2008 को अधिसूचित किया गया, जहां यह योजना 1 अप्रैल, 2008 से लागू होगी। वर्तमान में यह योजना सम्पूर्ण भारत में

लागू कर दी गयी है सरकार का प्रमुख कार्यक्रम जो सीधे गरीबों जिनमे आदिवासी क्षेत्र की बहुलता वाले लोगो के आर्थिक हितो को पूरा करता है और समावेशी विकास को बढ़ावा देता है। इस योजना का उद्देश्य देश के ग्रामीण क्षेत्रों में परिवारों को आजीविका के लिए कम से कम एक सौ दिन की गारंटी वाला रोज़गार प्रदान करना है, जिसमे घर के वयस्क सदस्य स्वेच्छा से काम करते हैं।

स्वर्णजयंती ग्राम स्वरोजगार योजना (एसजीएसवाई): एसजीएसवाई को अप्रैल 1999 में राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन में पुनर्गठन किया गया था। ग्रामीण आदिवासी गरीबों के लिए वर्तमान में यह एकमात्र स्वरोजगार कार्यक्रम है।

सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना (SGRY): SGRY को सितंबर 2001 में लॉन्च किया गया था। इस कार्यक्रम का उद्देश्य आदिवासी ग्रामीण क्षेत्रों में खाद्य सुरक्षा के साथ-साथ टिकाऊ समुदाय, सामाजिक और आर्थिक बुनियादी ढाँचे के निर्माण में अतिरिक्त वेतन रोज़गार प्रदान करना रहा है।

राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन (एनआरएचएम): एनआरएचएम 12 अप्रैल 2005 को लॉन्च किया गया था, ताकि दूरस्थ क्षेत्रों में सबसे गरीब घरों में सुलभ, सस्ती और जवाबदेह गुणवत्ता वाली स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान की जा सकें।

मध्याह्न भोजन योजना: अगस्त 1995 में शुरू की गई इस योजना का उद्देश्य प्राथमिक कक्षाओं में छात्रों के पोषण में योगदान करते हुए नामांकन, प्रतिधारण और उपस्थिति बढ़ाकर प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण को बढ़ावा देना है।

सर्व शिक्षा अभियान (एसएसए): 6-14 वर्ष के आयु वर्ग के बच्चों की जरूरतों को पूरा करने के लिए राज्यों के साथ साझेदारी में एसएसए को लागू किया जा रहा है। एसएसए के तहत उपलब्धि में 2,40.888 स्कूल भवनों का निर्माण, 110,20,831 अतिरिक्त कक्षाओं का निर्माण, 1,84,652 पीने के पानी की सुविधा, 2,86,862 शौचालयों का निर्माण, 9.05 करोड़ बच्चों को मुफ्त पाठ्यपुस्तक की आपूर्ति और नियुक्ति शामिल है। 10,11 लाख शिक्षकों के अलावा 2,88,155 नए स्कूल खोलने के लिए। प्रत्येक वर्ष लगभग 21.79 लाख शिक्षकों ने सर्विस प्रशिक्षण प्रदान किया गया। स्कूलों में बच्चों को दाखिला देने में महत्वपूर्ण सफलता के साथ, SSA का महत्वपूर्ण क्षेत्र ड्रॉपआउट्स को कम करने और छात्रों के सीखने की गुणवत्ता में सुधार करने पर है। इस तरह की योजनाओ का सीधा लाभ पंचायतो के माध्यम से आदिवासी क्षेत्रो में सफलतापूर्वक संचालित हुआ है।

अध्ययन का महत्व

आदिवासी अनुसूचित क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के उत्थान के लिए कई कानून पारित किए गए हैं, जिनमे से उन कानूनों योजनाओ के क्रियान्वयन पर प्रस्तुत शोध प्रकाश डालता है। 1996 की PESA कानून, जो पंचायत राज अधिनियम का और अधिक प्रभावशाली बनाता है। अनुसूचित क्षेत्रों में लोगों को खुद को संचालित करना है। इस कानून को लोगों की भागीदारी के बिना सफलतापूर्वक लागू किया जाना काफी असंभव है। इसलिए, लोगों की भागीदारी की प्रकृति मुख्य रूप से बुनियादी सुविधाओं के क्षेत्र तक ही सीमित है। स्थानीय सरकार द्वारा अनुसूचित क्षेत्रों में उत्पन्न राजनीतिक चेतना को लोकतांत्रिक दिशा की ओर उचित रूप से प्रसारित नहीं किया गया है। पंचायत राज के कार्यों के पूरक लोगों की भागीदारी के लिए स्वतंत्र स्वयंसेवी संगठनों, सहकारी समितियों और किसान संघों की भागीदारी लेकिन वे

पंचायत राज संस्थाओं की जाँच के रूप में कार्य करने में विफल रहे हैं। ये सभी संस्थान और स्थानीय निकाय संसाधनों की कमी का सामना कर रहे हैं। वर्तमान प्रशासन में निचले स्तर पर लोगों की भागीदारी का उपयोग हेरफेर के एक उपकरण के रूप में किया गया है जिसके द्वारा प्रमुख जनजातियों और विशेषाधिकार प्राप्त समूहों को लाभान्वित किया गया है। लोगों की भागीदारी को उत्पन्न करने में मुख्य बाधा ज्ञान की कमी, साधन, और लोगों से संपर्क करने के तरीके, उच्च स्तर के अधिकारियों और गैरअधिकारियों से समर्थन की अनुपस्थिति और - रही मान्य उदासीनतास्थानीय स्तर के अधिकारियों की सा इसके अलावा , जाति और राजनीतिक दबाव अधिक बार एजेंसी क्षेत्र में पंचायती राज संगठनों की औपचारिक समितियों के भीतर सत्ता की राजनीति में हेरफेर के उपकरण के रूप में उपयोग किए जाते रहे हैं। विकेंद्रीकरण कार्यक्रम की सफलता निहित जब कार्यों, वित्त, और शक्तियों के पुनर्वितरण में, लेकिन विकेंद्रीकरण के विकास के लिए अनुकूल दृष्टिकोण, व्यवहार और सांस्कृतिक परिस्थितियों में बदलाव किया जाये । यह परिवर्तन केवल सभ्य समाज के माध्यम से लाया जा सकता है। वर्तमान शोध इस बात पर केंद्रित है कि पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से जिला सोनभद्र राज्य उत्तरप्रदेश के आदिवासी स्थानीय स्वशासन में कैसे भाग ले रहे हैं और अध्ययन क्षेत्र में अनुसूचित क्षेत्रों को सशक्त बनाने में पेसा के प्रभाव का आकलन करते हैं। अध्ययन में अनुसूचित क्षेत्रों में ग्राम सभाओं के कामकाज की प्रकृति का विश्लेषण भी किया गया है ताकि वे अपने कर्तव्यों का पालन कर सकें। उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिला आदिवासी बहुल क्षेत्र है जहाँ पर पंचायती राज के माध्यम से राज्य तथा केंद्र की योजनाओं का सफल क्रियान्वयन कराया जा रहा है, आदिवासी समाज की अपनी एक अलग समस्याए और चुनौतिया है जिसके समाधान के लिये पंचायती संस्थाए कार्य कर रही हैं । सोनभद्र जिले में अपने शोध के कार्य में वहां की वास्तविक स्थिति से अवगत हुआ निःसंदेह आदिवासियों से

साक्षात्कार और शोध प्रारूप विषय वस्तु तैयार करने में नए अनुभव प्राप्त हुए। वहां के आदिवासी समुदायों में जागरूकता बढ़ी है और वे खुल कर समाज की मुख्यधरा में शामिल हो रहे हैं।

सोनभद्र परिचय, पंचायती राज और आदिवासियो की स्थिति

उत्तर प्रदेश, भारत का दूसरा सबसे बड़ा जिला है। सोनभद्र भारत का एकमात्र जिला है, जहां मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ झारखंड और बिहार के चार राज्य हैं। जिले में 6788 वर्ग कि.मी. का क्षेत्रफल और 1,862,559 (2011 की जनगणना) की आबादी है, जिसमें जनसंख्या घनत्व 270 व्यक्ति प्रति किमी. है। यह राज्य के चरम दक्षिण-पूर्व में स्थित है, और मिर्जापुर जिले के उत्तर-पश्चिम तक, उत्तर में चंदौली जिले, बिहार के कैमूर और रोहतास जिले, पूर्वोत्तर राज्य, पूर्व झारखंड राज्य के गढ़वा जिले, कोरिया और सर्गुजा जिले दक्षिण में छत्तीसगढ़ राज्य, और मध्य प्रदेश के सिंगरौली जिले पश्चिम में राज्य जिला मुख्यालय राबर्ट्सगंज शहर में है। सोनभद्र जिला एक औद्योगिक क्षेत्र है और यहाँ पर बॉक्साइट, चूना पत्थर, कोयला, सोना आदि जैसे बहुत सारे खनिज पदार्थ उपलब्ध हैं। सोनभद्र को ऊर्जा की राजधानी कहा जाता है क्योंकि यहाँ बहुत सारी बिजली संयंत्र हैं। 1989 में, सोनभद्र जिले को मिर्जापुर जिले से अलग किया गया था।

संसदीय निर्वाचन क्षेत्र: 1, विधानसभा क्षेत्र: 4, मतदान केंद्र: 938, मतदान स्थल: 1475, मतदाता: 13,07,834

मतदाता पुरुष: 7,08,145, मतदाता महिला: 5,99,657

सोनभद्र जनपद 8 विकास खण्ड में विभक्त है, जिनके नाम निम्मवत है :

क्र० स० विकास खण्ड का नाम

1.रॉबर्ट्सगंज 2.घोरावल 3.चतरा 4.नागवा 5.चोपन 6.बभनी 7.म्योरपुर8.दुद्धी 9.कर्मा 10.कोन

सोनभद्र जनपद 3 तहसीलों में विभक्त है, जिनके नाम निम्मवत है :

क्र० स० तहसील का नाम

1.रॉबर्ट्सगंज 2. घोरावल 3.दुद्धी 4.ओबरा

सोनभद्र जिला प्रशासन में कलेक्ट्रेट एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आईएएस के कैडर में कलेक्टर, जिला प्रमुख हैं। वह अपने अधिकार क्षेत्र में कानून और व्यवस्था बनाए रखने के लिए जिला मजिस्ट्रेट के रूप में कार्य करते हैं। वह मुख्य रूप से नियोजन और विकास, कानून और व्यवस्था, अनुसूचित क्षेत्र / एजेंसी क्षेत्रों, सामान्य चुनाव, शस्त्र लाइसेंस आदि के साथ सरोकार रखते हैं | सोनभद्र जिले में ही अनुसूचित जातियों की आबादी 3,85,018 है। संवैधानिक प्रावधानों के अनुसार अब तक भारत सरकार द्वारा 703 जनजातियों को अधिसूचित किया गया है। इनकी भी आदिवासी जनजातियों की भी सैकड़ों उपजातियां एवं उतनी ही बोलियां और संस्कृतियां हैं। इनमें से लगभग 75 जनजातियां आदिम जातियों में शामिल की गई हैं। प्रस्तुत शोध में सोनभद्र जिले की आदिवासी बहुल 16 ग्राम पंचायतों की ग्रामीण विकास गतिविधियों का मूल्यांकन किया गया है। ग्रामीण विकास कार्यक्रमों को लागू करने में सोनभद्र जिले की आदिवासी बहुल 16 ग्राम पंचायतों की समस्याओं की पहचान करना तथा नीतियों और विकास के बेहतर कार्यान्वयन के लिए सुझाव देना है। सोनभद्र के सभी 8 विकास खण्डों से आदिवासी बहुल 2-2 ग्राम पंचायतों का डेटा लिया गया है।

आदिवासी बहुल गांव में सरपंचों का साक्षात्कार लिया गया और आदिवासी बहुल गांवो के ग्रामीणों से प्रश्नावली विधि से डेटा एकत्रित किया गया है।

सोनभद्र के लोकसभा से लेकर पंचायत चुनावों में किस्मत आजमाने से वंचित आदिवासी जनजाति समाज के लिए आने वाले चुनावों में उन्हें चुनाव में आरक्षण मिल सकता है। इसके लिए पार्लियामेंट में बिल पास हो गया है। इस प्रकार वहां लोकसभा सीट का आरक्षण भी बदल सकता है।

जिले में गोड़, खरवार, चेरो, बैगा, भुइयां, पनिका, पठारी, अगरिया और पहरिया जनजातियां हैं। इसके अलावा ललितपुर जिले में इन जातियों के साथ ही सहरिया जनजाति भी हैं। सोनभद्र की करीब 18 लाख आबादी में लगभग छह लाख जनजाति निवास करते हैं। पहले यह जातियां भी अनुसूचित जाति में थीं, लेकिन वर्ष 2002 में इन जातियों को जनजाति में शामिल कर दिया। यूपी में जनजातियों को चुनाव लड़ने का आरक्षण न होने के कारण यह जातियां आम चुनाव से वंचित हो गईं।

चुनाव में आरक्षण की मांग को लेकर दुद्धी क्षेत्र के पूर्व विधायक विजय सिंह ने सुप्रीम कोर्ट में याचिका दाखिल की थी। कोर्ट ने उनकी याचिका पर सुनवाई करते हुए केंद्र सरकार को संविधान के अनुच्छेद के तहत आबादी के अनुपात में जनजातियों को आरक्षण देने का निर्देश केंद्र सरकार को दिया था। इस निर्देश के बाद लोकसभा और राज्य सभा में री एडजेस्टमेंट आफ रीप्रेजेंटेशन आफ शिड्युल कास्ट एंड शिड्युल ट्राइब्ड इन पालियामेंट्री कांस्टिच्यूसी एंड स्टेट एसेंबली बिल 2013 सर्व सम्मति से पास हो गया। अब मामला केंद्रीय निर्वाचन आयोग के पाले में चला गया है। आयोग ने यदि जल्द जनजातियों को आरक्षण देने का फैसला लिया तो इसका सीधा लाभ आदिवासी समाज को मिलेगा। उम्मीद जताई जा रही है

कि आरक्षण मिलने से जनजाति वर्ग के लोग पंचायत चुनाव से लेकर अन्य चुनाव तक लड़ सकेगे। आरक्षण लागू होने से यहां के हर चुनाव में सीटों की गणित बदल सकती है। अनुसूचित जनजाति वर्ग के लोगों को आरक्षण न मिलने से वे चुनाव से वंचित रह जाते हैं। इससे तमाम इलाके ऐसे हैं जहां ग्राम पंचायत सदस्यों की सीट रिक्त रह जाती है। वजह कि ऐसे क्षेत्रों अनुसूचित जाति के लोग मिलते ही नहीं है।

संबंधित जिला सोनभद्र अनुसन्धान पद्धति

प्रस्तुत शोध में एक व्यवस्थित अनुसंधान डिजाइन तैयार किया गया है। अध्ययन के लिए प्रासंगिक डेटा को प्राथमिक और माध्यमिक स्रोतों के माध्यम से एकत्र किया गया है । विभिन्न विकास योजनाओं के 400 लाभार्थियों के नमूने उनके जीवन पर विभिन्न विकास योजनाओं / कार्यक्रमों के प्रभावों का आकलन करने के लिए लिया गया । साक्षात्कार शेड्यूल और प्रतिभागी अवलोकन जैसे अनुसंधान उपकरणों का उपयोग किया गया। माध्यमिक स्रोतों में सोनभद्र जिले की आदिवासी बहुल ग्राम पंचायतों के आधिकारिक रिकॉर्ड शामिल ग्राम पंचायत सदस्यों, और ग्रामीण गरीब आदिवासी लोगों से जानकारी एकत्र करने के लिए अलग प्रश्नावली का उपयोग किया गया जिन्होंने ग्राम पंचायत के अधिकार क्षेत्र के तहत सहायता और अन्य लाभ उठाए है। एक प्रश्नावली तैयार की गयी जिसमें उनके सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक ,शैक्षिक परिस्थितियों, जागरूकता और पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से आदिवासी समुदायों हितो की पूर्ति के विभिन्न पहलुओं पर संबधित प्रश्न शामिल है ।[9]

पंचायती राज पर किये गये अधय्यन के कुछ अन्य द्वितीयक स्रोत

भारतीय आदिवासी समाज प्रकृति और लोगों की विविधता वाला एक अनूठा समाज है। पंचायती राज और सरकारी योजनाओं ने ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में रहने वाले आदिवासियों की स्थितियों की बेहतरी के लिए निवेश समर्थित योजनाओं और परियोजनाओं की एक श्रृंखला के कार्यान्वयन को तैयार किया। आदिवासीयो के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक विकास, आदिवासी संस्कृति आदि के आधार पर भारत में कई आदिवासी अध्ययन हुए हैं। विभिन्न अनुसंधान विद्वानों, आदि द्वारा इन आदिवासी अध्ययनों पर एक नज़र रखना अत्यंत आवश्यक है।

डॉ.राजेश कुमार सिन्हा (2019) "पंचायती राज संस्थाओं की क्षमता निर्माण पर एक पत्रिका", पंचायती राज संस्थानों के विकास के लिए सुशासन और प्रभावी कार्य चलाने के लिए पंचायती राज संस्थाओं को केंद्र और राज्य सरकार को पंचायत की क्षमता विकसित करने के लिए प्रशिक्षण के माध्यम से राज संस्थानों को अधिक प्रभावी बनाया जा सकता है। वैष्णवी.एवं धिव्या आर, (2019) "पर्यावरण संरक्षण में स्थानीय शासन की भूमिका", लोकतांत्रिक स्थानीय स्व-शासन की सबसे नवीन शासन में से एक है पंचायती राज संस्था। लेखक के माध्यम से जानकारी मिलती है आदिवासी ग्रामीणों और पर्यावरण की भलाई और कल्याण की जिम्मेवारी स्थानीय निकायों को दी गई । राज्य सरकारों द्वारा इसका प्रोत्साहन किया जा रहा है परन्तु स्थानीय निकायों, और भ्रष्टाचार, अधिकारियों द्वारा निर्धारित लक्ष्य की प्राप्ति संभव नही हो पा रही है। राजीव कुमार , (2018) "ग्राम पंचायत सदस्यों की सूचना की आवश्यकता: कुरुक्षेत्र जिले, हरियाणा का एक अध्ययन", यह निष्कर्ष निकाला है कि ग्रामीण विकास के लिए वर्तमान में ग्राम पंचायत स्तर का सूचना केंद्र की स्थापना आवश्यक

है। फ़िलहाल पंचायतो में जैसे, प्रिंट नॉन-प्रिंट मीडिया, समाचार पत्र , टेलीविजन, पुस्तकालय का गांवों में पर्याप्त सूचना केंद्रों का अभाव है। डॉ. अंजन कुमार , (2017) "पंचायती राज अरुणाचल प्रदेश के पश्चिम कामेंग जिले का अध्ययन" , प्रस्तुत पुस्तक में लेखक ने चिन्हित एक आदिवासी क्षेत्र के पंचायती राज व्यवस्था की भूमिका के ऊपर अधयन किया है। उनका मानना है की पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से पछिम कामेंग जिला जो अरुणाचल प्रदेश में स्थित है वहां की पारंपरिक आदिवासी ग्राम सभाओं में महत्वपूर्ण बदलाव लाया है। इसने अलग अलग जनजातियों और समुदायों के एक समूह के बजाय अरुणाचल नागरिक समाज के गठन के लिए राज्य राजनीति को एक नई दिशा दी है। वहां पर आदिवासी शिक्षित समुदाय में राजनीतिक जागरूकता तथा प्रतिनिधित्व का दायरा भी बढ़ा है।

बसवराज एस. बेनी (2018) "महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम में पंचायती राज संस्थाओं पर एक अध्ययन", लेखक ने अपने अध्ययन के निष्कर्ष में आदिवासी महिलाओं की भागीदारी को महत्व दिया है। भारत सरकार ने महिला सशक्तीकरण के लिये मनरेगा, एसजीआरवाई जैसे कई विभिन्न योजनाये चला रही हैं। इनमे से एक अधयन आईएवाई, (RGGVY) एक आदिवासी गाँव की प्रगति को दर्शाता है। इसमें कई नई योजनाएँ SHG से भी सम्बंधित हैं। गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम, भारत में ग्रामीण विकास नीतियां, रोजगार सृजन योजनाओं और मनरेगा का अध्ययन, आजीविका सुरक्षा के रूप में रहने वाले ग्रामीण गरीबों पर रोजगार गारंटी योजनाओं के प्रत्यक्ष प्रभाव और पोषण, स्वास्थ्य, शिक्षा और स्वच्छता आदि को सुधारने, 100 दिनों की दैनिक मजदूरी रोजगार की गारंटी प्रदान करने और श्रम प्रवास को रोकने में सफल रहा है। सागर एन, एचएल शिल्पा (2019) "ग्राम पंचायत प्रणाली की ई-सेवाएं", प्रस्तुत लेख में ई-ग्राम पंचायत के लिए ई-सेवाएं सरकार की योजनाओं के बारे में जानकारी प्रदान करता है। इसका उपयोग

करके वे ग्राम पंचायत की प्रत्येक सेवा के लिए आवेदन कर सकते हैं, यह अपडेट करता है ग्राम पंचायत के कर्मचारियों और अधिकारियों द्वारा नियंत्रित किया जाता है। लोग ग्राम पंचायत में जाकर जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। श्रीमती वाणी एच, प्रो. रविन्द्रनाथ एन. कादम, (2016) "भारत में पंचायत राज संस्थान और ग्रामीण विकास: पंचायतों का संरचनात्मक और कार्यात्मक आयाम", लेखक ने अपने अध्यन में पाया की प्राचीन भारतीय ग्रंथ ऋग्वेद में ग्रामीण शासन व्यवस्था के लिये सभाओं और समितियों का उल्लेख है। पंचायत का शाब्दिक अर्थ है पंच (पंच) की सभा (पंच) बुद्धिमान और सम्मानित बुजुर्ग जिन्हें ग्राम समुदाय द्वारा चुना और स्वीकार किया जाता है, वर्तमान पंचायती राज प्रभावी और इन निकायों का सार्थक कामकाज सक्रिय भागीदारी योगदान और इसके नागरिकों की भागीदारी पर निर्भर करेगा, दोनों पुरुष और महिला। ग्रामीण विकास में ऐसे संस्थानों की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण है।

नटराज. जी और डॉ. मीनाक्षी (2016) "कर्नाटक में पंचायत राज प्रणाली में ग्राम सभा", अध्ययन का निष्कर्ष है कि ग्राम सभा स्व-शासन के लिए महत्वपूर्ण है। लेखक ने आदिवासी गरीबों के वर्गीकरण और जरूरतों के प्राथमिकताकरण को समझने के लिए एक तंत्र विकसित करने की आवश्यकता पर जोर देती है। उनका मानना है की लाभार्थियों का चयन करने से पहले परिवारों को ध्यान में रखा जाना चाहिए , यह कार्य कुशल ग्राम सभा के माध्यम से तैयार किये जा सकते हैं। गीता और संजय मिश्रा, (2019) "भारत में पंचायती राज संस्थान: संभावनाएँ और प्रत्याशाएँ, उनके अध्ययन से पता चला है कि पंचायत के निर्वाचित प्रतिनिधि वाली बहुमत जाति समाज के लोग, स्थानीय पंचायत नेताओं, राजनीतिक पार्टी और स्वार्थी लोगो के हस्तक्षेप ने पंचायतो के पारम्परिक कार्य को बुरी तरीके से प्रभावित किया है । लेखक का यह मानना है की यह ध्यान रखना आवश्यक है कि ग्रामीण लोग लोकतांत्रिक

विकेंद्रीकरण और राजनीतिक भागीदारी के बारे में बिल्कुल भी सचेत नहीं हैं। इसके अलावा, भारत में पंचायती राज संस्थाओं को मजबूत करने के लिए, पंचायतों के चुने हुए प्रतिनिधियों की आवश्यकता है, जो एक अधीनस्थ भूमिका निभाने के बजाय पंचायतों की सेवा के लिए सरकारी अधिकारियों के साथ मिलकर कार्य करें। इस प्रकार, स्थानीय नेताओं को राष्ट्र-निर्माण और देश के शासन में उनकी वैध भूमिका के बारे में शिक्षित करने की तत्काल आवश्यकता है। ग्राम सभाओं को ग्राम पंचायतों द्वारा किए जाने वाले विकास कार्यों की योजना निर्माण, कार्यान्वयन, निगरानी और मूल्यांकन में पूरी तरह से शामिल होना चाहिए। योजनाओं के तहत अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों, महिलाओं, कमजोर वर्गों और पिछड़े क्षेत्रों के उत्थान को प्राथमिकता दी गई है। डॉ. निखिल गोपाल अग्रवाल, (2016) "पंचायती राज संस्थाओं में सामुदायिक भागीदारी", बहुत कम लोग ऐसे हैं जो गाँव-स्तर के मामलों में अपनी भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए खुद पर गर्व करते हैं। संभवतः उन लोगों को शासन प्रक्रिया में शामिल किया जाता है वे भाग लेने की संभावना रखते है। लेखक का यह भी मानना है की जब स्थानीय शासन में नौकरशाही का बोलबाला तथा संभ्रांत लोग अपने अल्पकालिक स्वार्थी लक्ष्यों के लिए जनता को अपना दुश्मन मानते हैं।

विजय सिंह, (2016) "हिमाचल प्रदेश में पंचायती राज संस्थानों (पीआरआई) की शक्तियां और कार्य", लेखक का मानना है की हिमाचल प्रदेश में जमीनी स्तर पर पंचायती राज संस्थान अधिक से अधिक लोगों की भागीदारी और विकासात्मक कार्यों की भागीदारी सुनिश्चित कर रहे हैं। पंचायती राज संस्थानों के पास पर्यावरण और ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के निर्माण की जिम्मेदारी है, भविष्य के नेतृत्व के लिए एक अवसर प्रदान करने के लिए, सुझाव सभी खंड स्तर पर प्रशिक्षण, सेमिनार, कार्यशालाएं प्रदान करना है, और प्रेरणा का उद्देश्य स्थानीय प्रतिनिधियों को अच्छे कामों के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।

दुर्गा कल्याण जी (2014) भारत में पंचायती राज संस्थानों में लेखा और लेखा परीक्षा प्रणाली पर एक लेख, लेखक के अध्ययन का निष्कर्ष है कि पंचायती राज संस्थानों, लेखा सॉफ्टवेयर और तकनीकी मार्गदर्शन और पर्यवेक्षण के लिए लेखा लेखा प्रणाली को बनाए रखने और व्यवहार में लागू तथा नियंत्रित करने के लिए एक मजबूत ग्रामीण लोकपाल की आवश्यकता है। इसका कार्य पंचायती राज संस्था को अधिक पारदर्शी बनाने तथा राज्य और केंद्र की जिम्मेदारी भी सुनिश्चित हो पाएगी। कुमार सत्यम(2014) ने "झारखंड में पंचायती राज संस्थाओं में अनुसूचित जनजातियों के राजनीतिक प्रतिनिधित्व" का विश्लेषण किया है । लेखक ने निष्कर्ष निकाला कि पंचायती राज संस्थान ने झारखंड में आदिवासी जीवन के सभी पहलुओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। राजनीतिक प्रस्तुति और भागीदारी उनके जीवन के तरीके हैं नए विचारों को संश्लेषित करने, अपनी इच्छा को दृढ़ संकल्प तथा नए अवसरों को खोलने के लिए अवसर प्रदान कर रही है। झारखंड में ग्रामीण स्तर पर बड़ी संख्या में आदिवासी महिलाएं राजनीति में आ रही हैं। यह बिना किसी लिंग भेद के सभी वर्गों के राजनीतिक हित को दर्शाता है।

एस. थानिकसालम, डॉ. सरावथी (2019), "ग्रामीण विकास में ग्राम पंचायत की भूमिका पर एक अध्ययन", उन्होंने कहा कि ग्रामीण विकास कार्यक्रम के कार्यान्वयन ने चयनित आदवासी क्षेत्र के लोगों के सामाजिक और राजनीतिक मामलों को भी प्रभावित किया है। SJGSY, MNREG, हाउसिंग स्कीम जैसे विकास कार्यक्रम गाँव के कुटीर उद्योगों को मजबूत करने के साथ-साथ आर्थिक स्थिति में सुधार करते हैं । विभिन्न कृषि और संबद्ध गतिविधियों जैसे कि एक पशु, पति भेड़, बकरी पालन हस्तकला छोटे व्यवसाय, हस्तशिल्प, और लोगों को अतिरिक्त आय प्राप्त करते हैं। गरीबी की रेखा से ऊपर चयनित क्षेत्र में गरीबों के लिए लाभकारी स्थिति बनाई गई हैं । यहां तक कि कुछ लाभार्थी विकास कार्यक्रम को

अपनाए जाने के बाद कई गरीब योजनाओं के दायरे में नहीं आते हैं और वे एक औसत दर्जे का जीवन जी रहे हैं।

प्रो. दुर्गा प्रसाद छेत्री (2017) "भारत में लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण और सामाजिक समावेश: संबंधों की खोज" प्रस्तुत लेख में लेखक ने विशेष क्षेत्र जिनमे एससी / एसटी और महिलाओं सहित लोगो को अपने अध्यन में शामिल किया। पंचायती राज व्यवस्था ने सत्ता का विकेंद्रीकरण कर निर्णय लेने में भागीदारी को बढ़ाया है, स्थानीय समुदायों को लोकतांत्रिक चुनावों के माध्यम से अपने स्थानीय नेतृत्व को निर्धारित करने में सक्षम बनाया है, जो स्व-शासन के लिए लोगों को समान अवसर प्रदान करता है।

जटंटा दत्ता (2013), "पंचायतों के वित्तीय प्रबंधन, पश्चिम बंगाल का अवलोकन", लेखक ने अपने अध्ययन का निष्कर्ष है कि जहां तक खातों और अभिलेखों के अध्यन की जाँच से पता चलता है की पंचायती राज व्ययवस्था के कामकाज में विभिन्न प्रकार की अनियमितताएं देखी गई हैं। पश्चिम बंगाल पंचायती राज बजट और कार्य नियम जो वित्तीय संसाधनों के प्रबंधन में पंचायतों का मार्गदर्शन करने के लिए होते हैं उसका ज्यादातर वित्तीय पंचायतों के प्रबंधन में लागू नहीं किए गए हैं। पश्चिम बंगाल में पंचायतों द्वारा शासित प्रक्रिया के अनुसार अभ्यास किया गया है । लेखक का मनना है की पंचायतों को अपने फंड का सही इस्तेमाल करना चाहिए। अश्विनी कुमार, (2016) "जम्मू-कश्मीर के पंचायती राज संस्थानों में कमजोर वर्गों की भागीदारी" पर एक पत्रिका, इस अध्ययन का निष्कर्ष है कि कोई यह कह सकता है कि एससी / एसटी महिलाएं और राजनीतिक क्षेत्र में पूरी तरह से उपेक्षित रही हैं। यद्यपि समग्रता में उनका प्रतिनिधित्व बहुत प्रभावी नहीं है, लेकिन वे जमीनी स्तर पर लोकतांत्रिक सरकार के प्रोत्साहन और सशक्तीकरण के कारण, स्व-प्रेरित और प्रतियोगिता के लिए एक पृष्टभूमि तैयार कर रहीं

है। डॉ. राजेश तिमाने (2015) "स्टडीहोल्डर एंगेजमेंट इन सोशल ऑडिट का एक अध्ययन", प्रसतुत अध्यन में लेखक ने पंचायतो में सोशल ऑडिट उसमे हितधारकों का परिणाम प्रणाली का अधयन किया है । लेखक ने स्थानीय समुदाय एक कार्यक्रम के सभी रिकॉर्ड और प्रक्रियाओं की छानबीन करता है। उनका मानना है की सामाजिक ऑडिट एक सफल संस्थान है। सरकारों को स्थानीय स्तर पर भागीदारी प्रबंधन में उन्हें और अधिक कुशल बनाने तथा ग्राम सभा के माध्यम से पारदर्शिता को सुनिश्चित करें। श्री कर्ण मरवाहा (2011) "पंचायती राज संस्थान: सुशासन की ओर कदम", यह निष्कर्ष निकालना कि स्थानीय स्वशासन के लिए पंचायती राज चुनाव भारत जैसे विकासशील देश के लिए आवश्यक है, इससे लोगों में निर्भरता में वृद्धि हुई है, जिससे प्रतिनिधि शासन का मार्ग प्रशस्त हुआ है। भागीदारी के बजाय जागरूकता की कमी, भूमिका स्पष्टता की कमी, अपर्याप्त धन और लैंगिक पक्षपात की वजह से लोकतांत्रिक शासन की उपलब्धि में बाधा उत्पन्न की है।

अरोड़ा, विभा (2007), 'पहचान की राजनीति', प्रस्तुत अधयन में लेखक ने भारत में आदिवासीयो के बनने की 'पहचान की राजनीति' पर चर्चा करते हैं। उन्होंने भूटिया, लेप्चा और लिंबस का उपयोग करते हुए, जिन्हें 'जनजाति'में परिभाषित किया गया है जो सिक्किम में निवास करते है। आधिकारिक तौर पर मान्यता प्राप्त अनुसूचित जनजाति में बदलने की सांस्कृतिक राजनीति प्रतिनिधित्व के शासन को प्रभावित करने के लिए अपनी राजनीतिक ताकत और शक्ति को दर्शाती है। ताकि उपयुक्त अधिमान्य एंटाइटेलमेंट और संसाधनों को नियंत्रित किया जा सके। सिक्किम राज्य की स्थिति में, आदिवासी होने के नाते जरूरी नहीं कि वह अशिष्टता, उत्पीड़न, या अधीनता की स्थिति में हों । इसके विपरीत, यह राजनीतिक मुखरता और सशक्तिकरण के स्तर को दर्शाता है। आदिवासी पहचान बहिष्करण और समावेशन, क्षेत्रीयता की अभिव्यक्ति, अकर्मण्यता और परिदृश्य में संबंधित और राज्य द्वारा

मान्यता पर निर्भर करती है। पहचान की संरचना में राज्य की निरंतर भूमिका और अनुसूचित जनजातियों के लिए अधिकारों के आवंटन के साथदावो राष्ट्रवादी-साथ जातीय-औरराजनीतिक स्वायत्तता के लिए आंदोलनों की प्रतिक्रिया के लिए लेखक ने जांच की है सुझाव है।

घोष (2015) ने "ग्रामीण गरीबों की आजीविका सुरक्षा सुनिश्चित करने में पंचायत की भूमिका" लेखक ने अपने अध्यन में कहा है की भले ही उन्हें शक्तियों और संसाधनों के रूप में राज्य सरकार से ज्यादा सहायता न मिली हो। उन्होंने उन तरीकों और साधनों का सुझाव दिया जिनके माध्यम से ये संस्थाएँ गरीबों सहित ग्रामीण लोगों के लिए बहुत उपयोगी हो सकती हैं। उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि पंचायत संस्थानों के माध्यम से स्थानीय स्तर की योजना शुरू करना इन निकायों को सशक्त बनाने में एक बड़ा कदम होगा, जो आदिवासी ग्रामीण गरीबी में कम करने के लिए एक आवश्यक शर्त है।

अध्ययन क्षेत्र में संरचनात्मक परिवर्तन और शोध अन्तराल

ग्रामीण आदिवासी समाज के सबसे निचले तबके में घरों की आय और रोजगार प्रदान करने वाले गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों के परिणामस्वरूप आदिवासी समुदायों की संरचना में संभावित बदलाव को देखना काफी दिलचस्प है।आदिवासी समाज जो लंबे समय तक, ये परिवार विभिन्न कार्यक्रमों के तहत लाभ से वंचित थे जबकि ग्रामीण अर्थव्यवस्था में उनकी जड़ें गहरी हैं। अब, पंचायती राज व्यवस्था और उसके कार्यक्रमों ने आदिवासी गरीबों के लिए अपनी स्थितियों में सुधार के लिए अनुकूल वातावरण तैयार किया है। एक और समान रूप से महत्वपूर्ण परिवर्तन जो इस अध्ययन क्षेत्र में देखा गया है, वह यह है कि जिन ग़रीब लोगों की ग्राम संस्थाओं के कामकाज में कभी कोई आवाज़ नहीं थी, वे अब इन गरीबी

उन्मूलन या ग्रामीण विकास कार्यकम के बाद सक्रिय भागीदारी कर रहे हैं। यह आदिवासी गरीबों द्वारा प्राप्त आत्मविश्वास को दर्शाता है कार्यक्रमों और नीतियों को तैयार करना मूल रूप से उनके लिए था। यह परिवर्तन मुख्य रूप से पंचायती राज व्यवस्था और उनके कामकाज के कारण है। लोकतान्त्रिक विकेंद्रीकरण ने शासन में भागीदारी को तो सुनिश्चित किया है परन्तु अभी पूर्ण लक्ष्य की प्राप्ति में अभी और अधिक शोध और उसके अन्तराल (गेप) करने और उसके वास्तविक स्थिति को भी समझाना उचित होगा। पंचायती राज ही नहीं अपितु भारत जैसे लोकतान्त्रिक देश में अन्य सरकारी और गैर-सरकारी सामाजिक संस्थाए आदिवासियों के हितो और उनके कल्याण से प्रभावशाली रूप से जुड़ी है।

अध्ययन का उद्देश्य:

1. **भारत में पंचायती राज वयवस्था में अनुसूचित जनजातियों की राजनीतिक भागीदारी का अध्ययन करना।**
2. **शासन की जमीनी संरचना में शामिल करके अनुसूचित जनजातियों के बीच सशक्तिकरण की प्रक्रिया का विश्लेषण करना।**
3. **73वें संवैधानिक संशोधन अधिनियम की मुख्य विशेषताओं और कार्यान्वयन की जांच करना।**
4. **उत्तरप्रदेश राज्य के सोनभद्र जिले में अनुसूचित जनजाति पंचायत विस्तार की मुख्य विशेषताओं और कार्यान्वयन का अध्ययन करना।**
5. **उत्तरप्रदेश और उसके एक जिले सोनभद्र पंचायती राज संस्थाओं की प्रभाव का मूल्यांकन करना।**

6. **उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायत राज के अधिक प्रभावी कामकाज के लिए सुझाव देना।**

परिकल्पना

अध्ययन निम्नलिखित परिकल्पना का परीक्षण करना चाहता है।

1. **पंचायती राज संस्था आदिवासी ग्रामीण विकास, ग्रामीण समुदाय और ग्रामीण क्षेत्रों की स्थिति को समृद्ध बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।**
2. **भारत के विकास की मुख्यधारा में जनजातिय समुदाय पूरी तरह से समावेशी नहीं रहा है।**
3. **सोनभद्र में लोकतान्त्रिक विकेंद्रीकरण का एक लगभग नौकरशाही स्वरूप विद्यमान है।**

अध्ययन की सीमाएं-

शोधकर्ता को काफी सीमाओं के तहत काम करना पड़ता है। प्रत्येक शोधकर्ता किसी न किसी नवीन ज्ञान की प्राप्ति हेतु किया जाता है एवं शोध कार्य की पूर्ण सार्थकता उसकी मौलिकता पर निर्भर है। जिनमे कुछ इस तरह हैं-

1. **शोध अध्ययन भारत की पंचायत राज व्यवस्था उत्तरप्रदेश राज्य के सोनभद्र जिले पर केंद्रित है।**
2. **शोध अध्ययन केवल 73 वें संवैधानिक संशोधन अधिनियम के बाद केंद्रित है।**

3. शोध अध्ययन में अनुसूचित जनजाति, आदिवासी पर केंद्रित है।

4. अध्ययन के समग्रह का व्यापक क्षेत्र कार्य हेतु निर्धारित समयावधि का पर्याप्त न होना।

5. अध्ययन के दौरान पंचायती चुनाव में गांव के उच्च वर्ग द्वारा चुनावी दांव-पेंच देखने का अवसर सामने आया।

6. अध्ययन के दौरान पंचायत चुनाव में सभी राष्ट्रीय व क्षेत्रीय दलों के उत्तरदाताओं से प्रत्यक्ष सम्पर्क किया गया।

7. लोकतंत्र के पंचायत चुनाव में विषय की गंभीरता एवं लोकतंत्र महापर्व देखते हुए ग्रामीणों द्वारा सहयोगपूर्ण रवैया रहा।

8. विषय की गम्भीरता का देखते हुये अनेक लोगों ने कठोर व्यवहार किया एवं किसी भी तरह की मदद डरते हुये करते हैं।

9. ग्रामीणों में बसे लोगों खुलकर बात नहीं करते यदि बात करते भी है तो कुछ समय तक फिर कार्य करके चले जाते है, संकोची स्वभाव के कारण उनसे कभी कभी-कभी सहयोग नहीं भी मिला।

10. अध्ययन क्षेत्र में ग्रामीण लोग अधिकांश अशिक्षित होने के कारण अपनी भावनाओं को खुलकर अभिव्यक्त नहीं कर पाये।

इस प्रकार शोधार्थियों द्वारा प्रस्तुत शोध अध्ययन में अन्वेषणात्मक, वर्णात्मक, विष्लेषणात्मक तथा वैज्ञानिक, प्राथमिक पद्धति का प्रयोग करके तथ्यों को उजागर करने का प्रयास किया गया है। शोध-प्रबंध में प्राथमिक तथा द्वितीयक स्त्रोतों का भी पूर्ण उपयोग किया

गया है। अतः शोधार्थियों ने पाया है कि वैज्ञानिक प्रविधि पर आधारित होने के कारण यह शोध प्रबंध अपनी मौलिकता को वास्तविक एवं यथार्थ रूप में अभिव्यक्त कर सकेगा।[10]

शोध पद्धति

प्रस्तुत शोध में समय और धन की सीमाओं को ध्यान में रखते हुए मेरे लिए जिले के पंचायती राज (पीआरआई) के सभी प्रतिनिधियों और अन्य उत्तरदाताओं से संपर्क करना और उनसे डेटा प्राप्त करना संभव नहीं है । इसलिए, सरल यादृच्छिक नमूनाकरण और अन्य नमूनाकरण तकनीकों को अपनाया जाता है और ग्राम पंचायतों, ग्राम सभाओं, क्षेत्र पंचायतों, और जिला पंचायत वार्डों का एक नमूना तैयार करने का निर्णय लिया गया। जहां अनुसूचित जनजाति, आदिवासी बहुल आबादी चुनी जाती हैं। साक्षात्कार के लिए अनुसूचित जनजाति के सदस्यों को चुना गया। इन पंचायतों के सदस्यों को क्षेत्र से डेटा एकत्र करने के लिए शोधकर्ताओं द्वारा संपर्क किया गया। उपरोक्त उत्तरदाताओं से प्राथमिक डेटा प्राप्त करने के लिए, शोधकर्ता ने के लिए चार साक्षात्कार अनुसूची तैयार की गयी । वर्तमान अध्ययन के लिए प्रयुक्त पुस्तकों, पत्रिकाओं, रिपोर्टों, ऑनलाइन स्रोतों, आदि के लिए उपयोग किए जाने वाले जानकारी के द्वितीयक स्रोत, माध्यमिक जानकारी प्राप्त करने के लिए, विश्वविद्यालय के पुस्तकालय के अलावा, शोधकर्ता ने दिल्ली विश्वविद्यालय के पुस्तकालय, इलाहाबाद के पुस्तकालय सहित विभिन्न पुस्तकालयों का दौरा किया, बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी की लाइब्रेरी, लखनऊ विश्वविद्यालय की लाइब्रेरी, पंचायती राज मंत्रालय, और सी.एस.डी.एस संस्थान की लाइब्रेरी का प्रयोग किया गया है।

डेटा विश्लेषण के लिए तकनीक:

शोधकर्ता द्वारा उत्पन्न प्राथमिक डेटा को व्यवस्थित, वर्गीकृत, सारणीबद्ध और उसके बाद व्याख्या की गई है। इस संदर्भ में, कंप्यूटर, इंटरनेट और सांख्यिकी टूल का उपयोग किया गया है ताकि प्राथमिक डेटा से संबंधित जानकारी को समझा जा सके।

शोध अध्ययन के उपकरण

अध्ययन समस्या के चयन कर लेने के पश्चात् यह निर्धारण करना आवश्यक हो जाता है कि किन उपकरणों एवं तरीकों से तथ्यों को संग्रहित किया जाये उसमें अध्ययन का कार्य सुगमता और सही प्रकार से हो सके वैज्ञानिक विष्लेषण पर और व्याख्या के लिए जिन वास्तविक तथ्यों की आवश्यकता होती है और उन्हें पूरा करने के लिए शोधकर्ता जिस विधि या तरीकों को अपनाता है उसे प्रविधि कहा जाता है। प्रविधि वह साधन है जिसके माध्यम से शोध के लिये अवश्यक वास्तविक तथ्यों सूचनाओं तथा आकड़ों का संकलन किया जाता है।[11]

प्रस्तुत अध्ययन एक वर्णात्मक एवं विष्लोषात्मक अध्ययन है अतः शोध साधारणतः ऐसे शोध के लिये समस्या की सामान्य स्थिति क्या है। दूसरे शब्दों में समस्या के संबध में विद्यमान तथ्यों का अध्ययन वर्णन है। वर्णात्मक शोध के एवं व्याख्या कई प्रकार भी होते है इस अध्ययाय में शोध समस्या के अनुसार। सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किसी क्षेत्र में समस्या के संबंध में निश्चित प्रकार के तथ्यों की जानकारी प्राप्त करने हेतु सर्वेक्षण विधि प्रस्तुत शोध के लिये निर्देशन के आधार पर चुने गये क्षेत्रों का सर्वेक्षण किया गया तथा उसके आधार पर तथ्यों का संग्रह किया गया। आकड़ों के संग्रह के लिये लिये सर्वेक्षण विधि के विभिन्न उपकरणों का प्रयोग किया जाता है किन्तु प्रस्तुत शोध अध्ययन में निम्नलिखित विधियों को प्रयोग में लाया गया।

1 साक्षात्कार, अनुसूची, प्रश्नवली

2 अवलोकन

3 सामूहिक चर्चा

4 अन्य

इस प्रकार शोधार्थी द्धारा प्रस्तुत शोध प्रस्ताव में अन्वेषणात्मक, विष्लेषणात्मक तथा वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग तथ्यों को उजगार करने का प्रयास किया गया है। शोध प्रस्ताव में प्राथमिक तथा द्वितीय स्त्रोतों का भी पूर्ण उपयोग किया गया है। अतः शोधकर्ता के लिए कि कई अनुसंधान कितना वैज्ञानिक है, जिसमें वैज्ञानिक पद्वति का प्रयोग किया गया हो और वैज्ञानिक प्रविधि पर आधारित होने के कारण शोध प्रबंध मौलिकता को वास्तविकता एवं यथार्थ रूप में अभिव्यक्त हो । साथ ही विषय से संबंधित सैद्धांतिक पक्ष के विभिन्न विद्वानों द्वारा लिखी पुस्तकों एवं सबंधित ग्रथों को भी आवष्यकतानुसार अध्ययन किया गया है। उत्तरप्रदेश राज्य के सोनभद्र जिलों के गांवो का सर्वेक्षण एवं वहाँ के आदिवासी और गैर-आदिवासी लोगों से साक्षात्कार कर वास्तविक तथ्यों के संग्रहण का पूर्ण प्रयास किया गया है।[12]

साक्षात्कार अनुसूची

अनुसंधान कार्य में आंकड़ों एवं सूचनाओं को संग्रहित करने के लिए परोक्ष साधनों की अपेक्षा अब प्रत्यक्ष साधनों का महत्व बढ़ता जा रहा है क्योंकि समस्या अवलोकन द्वारा संचित सूचनाएँ अधिक उपयोगी और विश्वनीय होती है। साक्षात्कार अनुसूचित जनजातियों अनुसंधान समस्या के समाधान के लिये आवश्यक आंकड़ो के संग्रह हेतु प्रयोग में लाया जाने वाला एक अनुसंधान उपकरण है जिसके अंतर्गत सावधानीपूर्वक चुने हुये प्रश्न की एक

ऐसी सूची होती है जिसके उत्तर शोधकर्ता द्धारा उत्तरदाताओं से आवश्यक सूचना प्राप्त करते हुऐ भरे जाते है।

गुडे एवं हैट के अनुसार "अनुसूची उन प्रश्नों का सम्मुच्य है जिन्हें साक्षात्कारकर्ता द्वारा किसी दूसरे व्यक्ति के आमने सामने की स्थिति में पूछे और भरे जातें है। प्रस्तुत अध्ययन में जिस क्षेत्र को अध्ययन हेतु चयनित किया गया है वहाँ इस तरह के अध्ययनों के बारे में ज्यादा जानकारी नहीं है तथा अध्ययन विषय के सबंध में जानकारी देने से लोग डरते हैं, अतः ऐसी स्थिति में साक्षात्कार अनुसूचित का महत्व बढ़ जाता है। साक्षात्कार अनुसूची में अध्ययन विषय के उद्देश्य से संबंधित जानकारी लेने हेतु आवश्यक प्रश्न का समावेश किया गया"[13]

(2) अवलोकन विधि

अध्ययन विषय से संबधित अनेक महत्वपूर्ण सूचनाओं या तथ्यों को अध्ययन स्थल पर जाकर वास्तविक निरीक्षण के द्वारा भी प्राप्त किया जा सकता है। यह अवलोकन सहभागी भी हो सकता है और असहभागी भी। अनुसंधानकर्ता स्वयं अध्ययन किये जाने वाले समुदाय या समूह का एक सदस्य बनकर उन्हीं के बीच रहते हुये अपने विषय से संबंधित सूचनाओं को प्राप्त करता है। इसके बीच विपरीत असहभागी निरीक्षण में एक वह एक बाहरी सदस्य के रूप में समय-समय पर निरीक्षण के द्वारा सूचनाओं को एकत्रित करता रहता है। प्रस्तुत अध्ययन में साक्षात्कार अनुसूची के अतिरिक्त शोधकर्ता द्वारा ''अवलोकन विधि'' का भी प्रयोग किया गया। शोधार्थी कुछ दिनों तक सोनभद्र जिले के ग्रामों में भी रहा ताकि अध्ययन विषय के प्रत्येक पहलू को नजदीक से देखा व समझा जा सके। इसके अतिरिक्त शोधार्थी समय समय पर क्षेत्र कार्य के दौरान पंचायत क्षेत्र में जाता रहा अतः काफी उपयोगी जानकारियों अवलोकन के माध्यम से प्राप्त हुई।[14]

(3) सामूहिक चर्चा विधि

साक्षात्कार एवं अवलोकन के बाद भी काफी महत्वपूर्ण तथ्य यह रहता है कि अध्ययन विषय के प्रमुख बिन्दुओं पर आम व्यक्तियों का दृष्टिकोण क्या है ? बहुधा किसी सामान्य समस्या पर सभी व्यक्ति एकत्रित हो सकते है, किन्तु किसी विषेष समस्या के प्रति व्यक्तियों में मन भिन्नता हो सकती है क्योंकि उस समय पर व्यक्ति की सामाजिक-आर्थिक स्थिति उस व्यक्ति के दृष्टिकोण के निर्धारण के प्रभावी भूमिका निभाती है। सामूहिक चर्चा से यह लाभ होता है कि अनुसंधानकर्ता के समय समस्या के महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर एकाधिक तर्क प्रस्तुत किये जाते है जो समस्या के मूल में जाने हेतु अत्यंत प्रभावी भूमिका का निर्वहन करते है। प्रस्तुत अध्ययन में चूंकि अध्ययन हेतु समाज के सभी जाति एवं अन्य वर्ग के लोगों को अध्ययन की इकाई के रूप में चयनियत किया गया है अतः आवश्यक महत्वपूर्ण बिन्दुओं जिनके माध्यम से इस अध्ययन की विषिष्टता प्रतिपादित होगी पर सभी वर्गों की राय ली जा सकी । समूह चर्चा के माध्यम से तथ्य उभरकर सामने आया कि अनेक मुद्दो पर व्यक्ति की सामाजिक आर्थिक एवं बौद्धिक क्षमता उसके दृष्टिकोण की प्रभावों के अध्ययन से संबंधित है। अतः उत्तरदाताओं ने समूह चर्चा में काफी दिलचस्पी दिखाई है ।[15]

(4) अन्य विधियाँ

स्थानीय जन प्रतिनिधियों से संबधित जानकारी हेतु उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले के जिला पंचायत, जनपद पंचायत एवं ग्राम पंचायतों से भी अवश्यक जानकारी संग्रहित की गई है। पत्र पत्रिकाओं पुस्तकों एवं शोध ग्रन्थों के साथ साथ पत्रों से भी जानकारी एकत्रित की गई। अध्ययन हेतु चयनित जिलों की गांव, तहसील से संबंधित जिला मुख्यालय के आभिलेखों से संग्रहित की गई है।

विश्लेषणात्मक प्रकिया

पी.वी.यंग है कि ‘‘वैज्ञानिक विष्लेषण यह मानता है कि तथ्यों के संकलन के पीछे स्वयं तथ्यों से कहीं अधिक महत्पूर्ण व रहस्योद्घाटक कुछ और भी है। यदि व्यवस्थित तथ्यों को संपूर्ण अध्ययन से सबंधित किये जाये तो उनका महत्वपूर्ण सामान्य अर्थ प्रकट हो सकता है जिसके आधार पर घटना की सप्रमाण व्याख्याए प्रस्तुत की जा सकती है।’’ इस कथन का तात्पर्य यह है कि शोध कार्य में केवल तथ्यों का पहाड़ एकत्रित कर लेने से अध्ययन विषय का वास्ताविक अर्थ, कारण तथा परिणाम स्पष्ट नहीं हो सकता जब तक कि उन एकत्रित तथ्यों को सुव्यवस्थित करके उनका विष्लेषण और व्याख्या न की जाए। ताकि विषय के संबध को शोध का रचनात्मक पक्ष कहा जाता है। पुराने सिद्वांत व नियमों की परीक्षा करके नवीन सिद्धांतों या नियमों को प्रतिपादित करने अथवा पुराने सिद्धांतों या नियमों का गलत प्रमाणित करने के लिए एकत्रित तथ्यों की व्याख्या व विष्लेषण आवश्यक है। स्वयं तथ्य कुछ नहीं कहते, परन्तु उनका क्रमबद्ध विष्लेषण व व्याख्या करके उन्हें मुखरित किया जा सकता है। प्रस्तुत अध्ययन ने सर्वप्रथम उत्तरदाताओं के माध्यम से एकत्रित तथ्यों में व्याप्त त्रुटियों अशुद्धियों या कमियों को दूर करने हेतु उनका संपादन निकाला। अनावश्यक तथा दोषपूर्ण तथ्यों को संपादन के द्धारा निकाला दिया गया जिससे वांछित सामग्री ही विष्लेषण हेतु रह जाए। तथ्यों के संपादन के पष्चात वर्गीकरण की प्रक्रिया द्धारा तथ्यों के ढेर को व्यवस्थित क्रमबद्ध एवं सीमित किया गया, अर्थात तथ्यों में पायी जाने वाली समानता या विभिन्नता के आधार पर उनको व्यवस्थित रूप से विभिन्न श्रेणियों में विभाजित किया गया है।[16]

अध्याय की रूपरेखा

पहला अध्याय

प्रस्तावना:- वर्तमान अध्ययन के लिए प्रासंगिक अवधारणाएँ जैसे कि विकेंद्रीकरण, राजनीतिक सशक्तिकरण, परिभाषाएँ और अनुसूचित जनजातियों की विशेषताएं शामिल है। इस अध्याय में अध्ययन के महत्व, इसके उद्देश्यों, पद्धति के अध्ययन पर भी चर्चा की गई है।

दूसरा अध्याय

साहित्य समीक्षा- से संबंधित है। इसमें पंचायती राज संस्था, जनजातीय, आदिवासियों के विकास और जनजातीय अधिकारों से संबंधित समीक्षाएं शामिल है। भारत में अनुसूचित जनजातियों के राजनीतिक प्रतिनिधित्व, जनजातीय महिला, ग्राम सभा और पंचायती राज संस्थानों की भूमिका, लोगों की भागीदारी और पीईएसए और इसके कार्यान्वयन की विभिन्न श्रोतो के माध्यम से समीक्षा की गयी है।

तीसरा अध्याय

पंचायती राज संस्थाएं : ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य से सम्बंधित कानून एवं संवैधानिक प्रावधान से सम्बंधित है। इसमे भारत के पंचायती राज व्यवस्था से सम्बंधित ऐतिहासिक विकासक्रम, कानून, अधिनियमों, समितियों के बारे में वर्णन किया गया है।

चौथा अध्याय

उत्तरप्रदेश में पंचायती राज संस्थाओं तथा जनजातियों की सहभागिता: एक अवलोकन से सम्बंधित है।

इसमें उत्तरप्रदेश राज्य की पंचायती राज व्यवस्था के विकासक्रम, उसकी कार्यप्रणाली, नियमो, अधिनियमों की चर्चा की गयी गयी है। इस अध्याय में उत्तरप्रदेश राज्य में जनजातियों की सामाजिक, आर्थिक, जनगणना और सांस्कृतिक स्थिति का भी तालिकाबद्ध विवरण प्रस्तुत किया गया है।

पांचवा अध्याय

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज संस्थाओ में जनजातियों की सहभागिता: एक आनुभविक अध्ययन से सम्बंधित है। इसमें उत्तरप्रदेश राज्य के सोनभद्र जिले के प्रमुख आदिवासी, जनजातियो और अन्य लोगो (सूचनादाताओं) से प्रश्ननोत्तर के माध्यम से जिले के पंचायती राज्य व्यवस्था और सहभागिता के बारे में प्राप्त जानकारी को प्राथमिक स्रोत के रूप में सारणीबद्ध किया किया गया है।

छठा अध्याय

निष्कर्ष एवं सुझाव

संदर्भ शोध सामग्री सूची-

संदर्भ सूची- ग्रन्थ /लेख

1. दयाल राजेश्वर, (2010), 'पंचायती राज इन इंडिया', मेमो पोलिटिन बुक डिपो, लकी प्रेस, दिल्ली-7, पृ. 61-62

2. डॉ.इकबाल नारायण, (1989), 'राजनीति शास्त्र के मूल सिद्धांत', भाग 1, पृ. 383-384

3. डॉ.बी.एस.शर्मा, बृजभूषण लाल शर्मा,आशीष भट्ट,जी.एम.सरकार, (2015), 'भारतीय शासन एवं राजनीति', रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, पृ. 121

4. डॉ.के.के.शर्मा, (2015), 'भारत में पंचायती राज, विश्वभारती पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृ. 8-9

5. डॉ.विश्वनाथ प्रसाद शर्मा, (2000)आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा, पृ. 83-84

6. डॉ.एस.सी.सिंहल, (2016), 'भारतीय शासन एवं राजनीति', लक्ष्मीनारायण पब्लिकेशन, आगरा, पृ. 243-244

7. डॉ.के.के.शर्मा, (2017), 'भारत में पंचायती राज, विश्वभारती पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृ. 8-9

8. लुईस प्रकाश, (2015), 'भारत के अनुसूचित जनजातियों के अधिकार', मानक पब्लिकेशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली

9. https://sonbhadra.nic.in/hi/

10. डॉ.बी.एम.जैन, (2017), रिसर्च मैथडोलॉजी, रिसर्च पब्लिकेशन, पृ. 185

11. डॉ.धर्मवीर, महाजन व डॉ. कमलेश महाजन, सामाजिक अनुसंधान का प्रणाली विज्ञान-विवेक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2017 पृ. 152

12. डॉ.विरेन्द्र प्रकाश शर्मा, (2018) 'रिसर्च मैथडोलॉजी', पंचशील प्रकाशन, जयपुर, पृ. 155-156

13. डॉ.आर.एन.त्रिवेदी, डॉ.डी.पी.शुक्ल, (2015), 'रिसर्च मैथडोलॉजी', कॉलेज बुक डिपो जयपुर

14. डॉ.आर.एन.त्रिवेदी, डॉ.डी.पी.शुक्ल,(2015), 'रिसर्च मैथडोलॉजी', कॉलेज बुक डिपो, जयपुर

15. डॉ.विरेन्द्र प्रकाश शर्मा, (2017), 'रिसर्च मैथडोलॉजी', पंचशील प्रकाशन, जयपुर, पृ. 200 -215

16. डॉ. वीरेन्द्र प्रकाश भट्ट, (2018), 'रिसर्च मैथडोलॉजी', पंचशील प्रकाशन, जयपुर

अध्याय-द्वितीय

साहित्य समीक्षा

लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण एवं पंचायती राज व्यवस्था पर कई अध्ययन किये गये हैं। यहाँ इस शोध की विषय वस्तु से सम्बंधित अध्ययन सामग्री की समीक्षा की गई है। जो इस शोध की दृष्टि से उपयोगी एवं प्रासंगिक है। पिछले कुछ दशकों के दौरान, भारत के विभिन्न हिस्सों में अनुसूचित जनजातियो की भूमिका और स्थितियों पर कुछ साहित्य मौजूद रहे है। देश में विविध आंदोलनों, राजनीतिक दलों और विभिन्न संघर्षों में जनजातियो की भूमिका का विश्लेषण करते हैं। कुछ अध्ययन अनुसूचित जनजातियो नेताओं द्वारा नई पहचान के निर्माण की भी जांच करते हैं, जिससे उन्हें आत्मविश्वास और आत्म-सम्मान मिला है। इसके अलावा, 73 वें संशोधन ने पंचायतों में अनुसूचित जनजातियो को प्रतिनिधित्व दिया है। यहां तक कि शक्ति और वित्तीय जिम्मेदारियों के विकेंद्रीकरण और इसके प्रभाव, पंचायती संस्थानों की संरचना, स्थानीय नौकरशाही की भूमिका ग्राम विकास के कार्यक्रमों के साथ पंचायती राज संस्थानों पर साहित्य का एक बड़ा भंडार मौजूद है । अभी तक कुछ अध्ययन भी हुए हैं, जो इस बात की पड़ताल करते हैं कि अनुसूचित जनजातियो इस प्रावधान का उपयोग करने में कितना सक्षम रहे हैं। इसने सामाजिक-अंतःक्रिया स्तर पर जमीनी स्तर की राजनीति में जो बदलाव लाया है। इसलिए इस संदर्भ में, शोधकर्ता ने मुख्य रूप से मौजूदा अध्ययनों को दो व्यापक श्रेणियों में वर्गीकृत किया है: (1) साहित्य के सैद्धांतिक कार्य (2) साहित्य के प्रकार जो साहित्य मुख्य रूप से सिर्फ भारतीय संदर्भ से जुड़ा है। इसके अलावा, साहित्य के अनुभवजन्य प्रकार को तीन व्यापक श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है:- (क) पंचायती राज

संस्थान और कमजोर वर्ग (ख) पंचायतों में पूर्व -73 संशोधन अधिनियम और अनुसूचित जनजातियो प्रतिनिधि (ग) पंचायतों में 73 वें संशोधन अधिनियम और अनुसूचित जनजातियो के विकास से सम्बंधित है।

भारत में जनजातीय अध्ययन

भारतीय आदिवासी समाज प्रकृति और लोगों की विविधता वाला एक अनूठा समाज है। आदिवासियों के बीच गरीबी, खराब स्वास्थ्य और स्वच्छता, अशिक्षा और अन्य सामाजिक समस्याएं भारतीय अर्थव्यवस्था पर एक व्यापक प्रभाव डाल रही हैं। पंचवर्षीय योजनाओं ने ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में रहने वाले आदिवासियों की स्थितियों की बेहतरी के लिए निवेश समर्थित योजनाओं और परियोजनाओं की कार्यान्वयन के लिये एक श्रृंखला तैयार किया जा रहा है । आदिवासी अर्थव्यवस्था, भूमि अलगाव, सामाजिक-आर्थिक विकास, आदिवासी संस्कृति, राजनीतिक सहभागिता विकास आदि के आधार पर भारत में कई आदिवासी अध्ययन हुए हैं।

आदिवासी विकास और आदिवासी अधिकार

अमर बुच, जैन और चौधरी (1999) ने मध्य प्रदेश में पंचायती राज में महिलाओं पर अध्ययन किया है । अध्ययन तीन अलग-अलग सामाजिक-सांस्कृतिक क्षेत्रों में आयोजित किया गया था जहां एसटी, एससी और अन्य संख्यात्मक रूप से प्रमुख हैं। जहां तक उनके सामाजिक स्थिति का संबंध है, अध्ययन में यह पाया गया की अधिकतम पंचायत सदस्य 343 में से 307 हाशिए पर हैं। अध्ययन में 283 महिलाओं और 80 पुरुषों ने भाग लिया। अधिकांश नेताओं की आयु 25 वर्ष से अधिक है। वे कृषि कार्य में लगे हैं। वास्तव में, वे या तो मजदूरी कमाने वाले हैं या खेती करने वाले हैं। हालाँकि, जिले में थोड़ी भिन्नता है, लेकिन

अधिकांश उत्तरदाता गरीबी रेखा के नीचे से हैं। इनमे से 50 फीसदी से ज्यादा अनपढ़ हैं। उनमें से अधिकांश का औपचारिक अर्थों में किसी भी राजनीतिक दल से कोई संबंध नहीं था। 53 उत्तरदाता भूमिहीन हैं, लेकिन उनमें से एक अच्छी संख्या 126 के पास या तो 5 एकड़ से अधिक भूमि है। यह ध्यान रखना दिलचस्प है कि उत्तरदाताओं की एक अच्छी संख्या ने पीआरआई नेता बनने के बाद श्रम कार्य बंद कर दिया है, लेकिन आज भी 92 इस काम में लगे हुए हैं। अध्ययन ने निष्कर्ष निकाला है कि पीआरपी, में निम्न सामाजिक-आर्थिक स्थिति के नेताओं पर संख्यात्मक रूप से हावी है। आदिवासी भारत में सबसे पिछड़े जातीय समूह हैं, वे विकास के तीन सबसे महत्वपूर्ण संकेतकों पर बहुत कम हैं: स्वास्थ्य, शिक्षा और आय। आदिवासी न केवल सामान्य आबादी की तुलना में, बल्कि अनुसूचित जाति (दलित) और अन्य पिछड़े सामाजिक समूहों के साथ संवैधानिक संरक्षण की तुलना में सबसे पिछड़े हैं। इसलिए मुख्य रूप से मध्य भारत के आदिवासी अनुसूचित क्षेत्र में, सरकार ने पंचायतों (अनुसूचित क्षेत्रों के लिए विस्तार) अधिनियम, 1996 (PESA) के प्रावधानों के रूप में एक अधिनियम पारित किया था। यह 24 दिसंबर 1996 को लागू हुआ और वर्तमान में दस राज्यों - आंध्र प्रदेश, झारखंड, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, उड़ीसा, तेलंगाना और राजस्थान में लागू है। अधिनियम में जनजातीय समाज को प्राकृतिक संसाधनों पर उनके पारंपरिक अधिकारों के संरक्षण और संरक्षण के लिए अपने स्वयं के भाग्य पर नियंत्रण रखने में सक्षम बनाने का इरादा है। PESA इस मायने में अभूतपूर्व है कि यह जनजातीय समुदाय को अधिक स्वशासन की शक्तियाँ देता है और प्राकृतिक संसाधनों पर अपने पारंपरिक सामुदायिक अधिकारों को मान्यता देता है। जैसा कि कोठारी (2007) बताते हैं, कई आदिवासी समुदायों के बीच, भूमि और ऐसे अन्य प्राकृतिक संसाधनों का स्वामित्व समुदाय के संयुक्त रूप से है, और व्यक्तियों द्वारा उनका उपयोग इसके द्वारा स्वीकृत है। वास्तव

में, हालांकि, पेसा अधिनियम के पारित होने के बाद से इस तरह के जनजातीय सशक्तीकरण नहीं हो पाए हैं। ओडिशा में किए गए एक अध्ययन में आदिवासी पंचायतों में स्व-शासन के सिद्धांत और व्यवहार के बीच काफी अंतर पाया गया **(रथ 2007)**

एस.एस. ढिल्लन (1995) ने दक्षिण भारतीय ग्रामो मे नेतृत्व एव वर्ग सम्बन्धी अध्ययन किया है। उनके अनुसार ग्रामीण नेतृत्व के स्वरूप में तीन प्रभावी तत्व होते है - प्रथम, परिवार का उच्च सामाजिक स्तर, द्वितीय, परिवार का आर्थिक स्तर, तृतीय, व्यक्तिगत ने ग्राम संरचना एवं नेतृत्व पद्धति सम्बन्धी अध्ययन भारत के 6 गाँवों के क्षेत्रीय अध्ययन के आधार पर किया गया हैं।

सुनन्दा पटवर्धन (1973) का अध्ययन महाराष्ट्र के अनुसूचित जाति एवं जनजाति के जीवन में उत्पन्न होने वाले परिवर्तनो की प्रकृति का विष्लेषण करता है।

डी.एस. चैधरी (1981) ने अपने अध्ययन मे उभरते ग्रामीण नेतृत्व को स्प्ष्ट किया है। यह अध्ययन सर्वेक्षण से एकत्रित प्राथमिक तथ्यो के विष्लेषण पर आधारित है। इस अध्ययन से ग्रामीण क्षेत्रो पर स्थानीय स्वशासन मे नेतृत्व की पृष्ठभूमि एव उनकी कार्य प्रणाली को संभालने हेतु उचित दिशा मिलती है।

मीनाक्षी पंवार ने अपनी पुस्तक पंचायत राज और ग्रामीण विकास में विस्तार से स्थानीय शासन का अध्ययन किया है। उन्होनं अपने अध्ययन मे ऐतिहासिक पृष्ठभूमि मध्यकालीन भारत में पंचायते, जातिगत पंचायतें एवं कवायली पंचायतो का उललेख किया हैं।

बी.एस.खन्ना (1994) ने भारत में पंचायती राज व्यवस्था का राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में गहराई से अध्ययन किया है साथ ही इस अध्ययन में भारत के दस प्रमुख राज्यों में पंचायतों की कार्यप्रणाली को प्रस्तुत किया गया है।

प्रेमलता पुजारी एवं विजय कुमार कौशीक (1994) ने भारत मे आदिवासी महिलाओ की शक्ति विषय पर तीन जिलों मे एक अध्ययन संपादित किया है। यह अध्ययन महिलाओ के विकास से सम्बन्धित विविध विषयो पर लिखे गए निबन्ध शोध पत्र, उदाहरण के संकलन पर आधारित है।

मंजू जैन (1994) ने कार्यशील महिलाऐ एवं सामाजिक परिवर्तन पर अपने अध्ययन में सामाजिक परिवर्तन की निरन्तर प्रक्रिया मे कार्यशील महिलाओ की विविध कारकों के आधार पर समीक्षा की है।

प्रभा आप्टे (1996) ने भारतीय समाज में नारी विषय पर पुस्तक लिखी हैं। यह पुस्तक ऋग्वेद से लगाकर वर्तमान समाज तक में नारी की स्थिति की व्याख्या करती है।

सम्पा गुहा (1996) ने बदलते समाज में महिलाओ की राजनीतिक सहभागिता का अपने अध्ययन में व्याख्यायित किया हैं।

जी.के.घोष एवं शुक्ला घोष (2007) ने दलित और आदिवासी महिलाओ पर अपन अध्ययन के माध्यम से यह विष्लेषण किया है कि भारतीय समाज के पद सोपान में दलित जातियो के निचले स्थान के कारण महिलाओ की स्थिति मे भी दलित महिलाओ का स्थान नीचा एव उनकी समस्याऐं विशेष पर प्रकाश डाला है।

महिपाल (2008) ने अपने अध्ययन में पंचायत राज व्यवस्था में अतीत से लेकर आज तक जो बदलाव आये है। उनकी क्रम बद्धता एवं संक्षिप्त विवेचना करते हुए वर्तमान व्यवस्था का विस्तार से वर्णन किया है। डॉ महिपाल ने सभी स्तरों की 651 महिला पंचायत प्रतिनिधियों की समस्याओं का अध्ययन किया। ये महिलाएं यू.पी. इनमें से अधिकांश प्रतिनिधि दलित, निरक्षर और गरीब थी। उन्होंने इन महिलाओं द्वारा बताई गई विभिन्न समस्याओं का उल्लेख किया जैसे (क) उत्तरदाताओं में से अधिकांश को योजनाओं और ब्लॉक स्तर पर प्रस्तावित बैठकों के बारे में सूचित नहीं किया जाता है। यहां तक कि अगर उन्हें सूचित किया जाता है तो अधिकांश मामलों में उन्हें पुरुष परिवार के सदस्यों द्वारा इसमें शामिल होने की अनुमति नहीं है। (ख) उन्होंने कहा कि आर्थिक उद्देश्य के लिए उन्हें अपने पति पर निर्भर रहना पड़ता है। (ग) डर के कारण ऊपर वे लड़कियों को गाँव के बाहर स्थित स्कूलों में जाने की अनुमति नहीं देते हैं। (घ) उन्हें अपनी ज़मीन के अधिकार से वंचित कर दिया जाता है, जिसकी वे लंबे समय से खेती कर रहे हैं। (घ) PHCs में ख़राब प्रबंधन रही है। (च) जल निकासी में कोई सुधार नहीं और सार्वजनिक वितरण प्रणाली की दुकान में पक्षपात होता है। (ज) ब्लॉक कार्यालय में बैठक के स्थान पर शौचालय और एक अन्य आवश्यक सुविधा की कमी है। (झ) महिला प्रधानों के खिलाफ अविश्वास प्रस्ताव परिणामस्वरूप ग्राम पंचायत का कामकाज प्रभावित हुआ है, तथा आदिवासी ग्राम पंचायत अपने स्वयं के संसाधन जुटाने में विफल रही है। क्योंकि जैसे ही वह कर लगाती है, इसका ग्रामीणों द्वारा विरोध किया जाता है। यह पाया गया कि नौकरशाही महिलाओं को सशक्त बनाने में सहयोगी नहीं रही थी। यह पंचायतों के चुने हुए प्रतिनिधियों से बेहतर लगता है। लेखक के अनुसार, अनुसूचित जनजातियो महिला प्रधानों के खिलाफ अविश्वास प्रस्ताव कई ग्राम पंचायतों में स्थानांतरित किए गए थे। इससे पता चलता है कि पंचायत के माध्यम से कमजोर वर्गों को मिली शक्ति

ग्रामीण समाज के प्रमुख वर्गों को स्वीकार्य नहीं है। काम पर अनुभवी महिला प्रतिनिधियों की समस्याओं के विश्लेषण के आधार पर, लेखक ने सुझाव दिया कि आरक्षण सुविधा प्रदान करने से महिलाओं को सशक्त नहीं किया जा सकता है। उन्हें सशक्त बनाने के लिए यह आवश्यक है कि उन्हें गंभीर प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण की आवश्यकता है। यह भी सुझाव दिया गया कि निर्वाचित प्रतिनिधियों में साक्षरता की दर कम है। इससे अपने पति पर उनकी निर्भरता बढ़ जाती है। बदले में इन महिलाओं को निर्भर रहने के लिए मजबूर किया जाता है। उन्हें आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने के लिए उन्हें घर की आर्थिक गतिविधियों में खुद को संलग्न करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

आर.पी. जोशी (1997) द्वारा सम्पादित पुस्तक पंचायतों का संवैधानिकरण में पंचायती राज से सम्बन्धित विभिन्न सांविधिक प्रावधानो को विष्लेषित किया गया है। अध्ययन मे पंचायती राज के कानूनी एवं संवैधानिक पक्ष, पंचायत राज एवं आरक्षण नीति, राज्यों की शक्ति, महिला भागीदारी, वित्त आयोग आदि को राजस्थान के संदर्भ में उल्लेखित किया है।

आर.पी. जोशी एवं जी.एस. नरवानी (2016) ने पंचायती राज संस्थाओ के संवैधानिक स्तर पंचायती राज में जनता की सहभागिता का उल्लेख पंचायती राज दर्शन को प्रस्तुत किया है।

एस.एन. अम्बेडकर एवं शैलजा नगेन्द्रा (2011) ने पंचायती राज के द्वारा हुए महिला सशक्तीकरण को अपने अध्ययन मे प्रस्तुत किया है। राजनीतिक प्रक्रिया में महिला और पंचायती राज मे महिला की नेतृत्व क्षमता को प्रस्तुत किया है।

अमित प्रकाश (2007) ने झारखंड में जनजातीय अधिकारों का अध्ययन किया। अध्ययन में पाया गया कि झारखंड में आदिवासी अधिकारों की मिश्रित तस्वीर झारखंड में जनजातीय

अधिकारों की स्थिति के संबंध में है। जहां तक आदिवासी पहचान की स्वायत्तता और मान्यता का सवाल है, उसमे झारखंड राज्य का निर्माण एक सकारात्मक कदम है। आदिवासी राजनीतिक स्वायत्तता के सिद्धांत को स्वीकार किया गया है, और सामाजिक-सांस्कृतिक अधिकारों से संबंधित संवैधानिक प्रावधानों के साथ, आदिवासी अधिकारों के लिए बहुत कम औपचारिक खतरा उत्पन हुआ है। लेखक ने देखा कि भूमि, पानी, जंगल और स्थानीय संसाधनों के मुद्दे, जो दोनों के लिए आदिवासियों के लिए केंद्रीय हैं, अपनी आजीविका के साथ-साथ सामाजिक-सांस्कृतिक पहचान को संरक्षित करना है जो लगातार खतरे में हैं। आदिवासी के सामाजिक-आर्थिक अधिकारों की प्राप्ति के लिए महत्वपूर्ण खतरे हैं। जहां तक उनके सामाजिक-आर्थिक विकास और आर्थिक गतिविधि में भागीदारी का संबंध है, वे राज्य की सार्वजनिक नीति के एजेंडे पर कम प्राथमिकता देते हैं। यह इस तथ्य से उभरता है कि झारखंड में एसटी द्वारा बड़े पैमाने पर आबादी वाले क्षेत्रों में एक बुनियादी ढाँचे की सबसे धीमी रचना देखी गई है, जो एसटी को आर्थिक गतिविधियों में अधिक पूरी तरह से भाग लेने में सक्षम बनाएगी। इसके अलावा, कुछ चुनिंदा मानव विकास संकेतकों के संदर्भ में, एसटी सबसे कमजोर लोगों में से हैं। ऐसी स्थिति में, आदिवासी आबादी के अपने अधिकारों का प्रयोग करने की संभावना धूमिल होती है। हालांकि, जो सकारात्मक है वह जनजातीय अधिकारों के विभिन्न पहलुओं पर गहन और जोरदार सार्वजनिक बहस है। सर्वेक्षण में पाया गया कि पिछले दिनों पंचायतों के 47 प्रतिशत केंद्रों में पीने का पानी उपलब्ध था। हालाँकि, अब ऐसा नहीं था। हालांकि 86 फीसदी लोगों के पास घर थे, वे मरम्मत कार्य नहीं कर सकते थे। सर्वेक्षण में शामिल 85 फीसदी घरों में बिजली का कनेक्शन उपलब्ध नहीं था। यहां तक कि जिन घरों में बिजली कनेक्शन था, वहां बिजली के तारों को उचित इन्सुलेशन के बिना चालू किया गया था। कुल 86 प्रतिशत भूमि की चाह के लिए कृषि में संलग्न नहीं हो सके।

आंगनवाड़ी केंद्र दो पंचायतों के तहत अधिकांश क्षेत्रों (91 प्रतिशत) में काम कर रहे थे, बच्चों को भोजन प्रदान कर रहे थे। इन केंद्रों में से तीन-तीन प्रतिशत में पेयजल की सुविधा थी। सर्वेक्षण में पाया गया कि इन कॉलोनियों में रहने वाले अधिकांश लोगों को कैंसर, तपेदिक और एड्स जैसी बीमारियों के बारे में पता नहीं था। सर्वेक्षण में शामिल 72.18 प्रतिशत घरों में लगा कि मोबाइल अस्पताल आवश्यक थे। सर्वेक्षण में व्यापक रूप से शराब (हडिया)और नशीली दवाओं के दुरुपयोग का उल्लेख किया गया है। 89 फीसदी घरों में अवैध शराब बनाये जा रही थी। सर्वेक्षण में पाया गया कि 77 फीसदी आदिवासी नियमित रूप से शराब और गांजा का इस्तेमाल करते हैं।

लक्ष्मीनारायण मीणा (2015) ने पंचायती राज की विकास यात्रा एवं नवीन स्वरूप, उत्तरदाताओ की सामाजिक, आर्थिक पृष्ठभूमि, पचंयति राज मे ग्रामीण स्थानीय जनता की राजनैतिक एवं प्रशासनिक जन सहभागिता, पंचायती राज में आरक्षण की स्थिति का औचित्य, पंचायती राज मे प्रशिक्षण की प्रासगिकता एवं पंचायती राज के अन्य पक्षो का सैद्धान्तिक एवं व्यवहारिक विष्लेषण किया है।

पंचायती राज संस्थान और कमजोर वर्ग

बलवन्त राय मेहता समिति रिपोर्ट (1957) मे ग्रामीण स्तर पर लोकतान्त्रिक विकेंद्रीकरण और जन प्रतिनिधात्मक संस्थायो की स्थापना, उनका वैधानिक आधार हो, पर्याप्त साधन की स्थापना की।

संथानम् समिति (1963) में भ्रष्ट्राचार के प्रकार एवं उसके निवारण आदि की जानकारी मिलती है।

सादिक अली समिति रिपोर्ट (1964) मे पंचायती राज संस्थायो द्वारा कार्य नहीं करने का कारण, ग्राम सेवक एवं अनिवार्य करों का विवरण मिलता है।

गिरधारी लाल व्यास समिति रिपोर्ट (1973) पंचायती राज संस्थायो में ग्राम सेवक की नियुक्ति, वित्तीय सहायता तथा जिला परिषदो को सशक्त बनाने सम्बन्धी वर्णन मिलता है।

अशोक मेहता समिति रिपोर्ट (1978) मे विकास कार्यक्रम योजनाओ की क्रियान्विति जिला परिषदों की जिम्मेदारी तथा मण्डल पंचायत की स्थापना हुई।

जी.वी.के.राव समिति रिपोर्ट (1985) पंचायती राज संस्थायो से सम्बन्धित प्रशासनिक व्यवस्था, गरीबी उन्मूलन जिला स्तर पर योजनाऐं बनाना तथा चुनाव सम्बन्धी सिफारिशो की जानकारी मिलती हैं।

एल.एम. सिंघवी समिति रिपोर्ट (1986) में पंचायती राज व्यवस्था की वित्तीय स्थिति एवं संवैधानिक मान्यता देने सम्बन्धी सिफारिशो का उल्लेख है।

पी. के. थुंगन समिति रिपोर्ट (1989) में पंचायती राज व्यवस्था की वित्तीय स्थिति एवं संवैधानिक दर्जा देने, समय पर चुनाव तथा योजनाओ का बेहतर प्रबन्धन की सिफारिशे की। 73 वें संवैधानिक संशोधन अधिनियम को लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण के महत्वपूर्ण पहलुओं में से एक के रूप में देखा जा सकता है।

माईनर जेम्स के अनुसार (1999) लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण के सफल होने के लिए चार महत्वपूर्ण शर्तें हैं: (i) राजनीतिक व्यवस्था के भीतर और महत्वपूर्ण विकास गतिविधियों पर पर्याप्त प्रभाव डालने के लिए पर्याप्त शक्तियां (ii) महत्वपूर्ण कार्यों को पूरा करने के लिए पर्याप्त वित्तीय संसाधन (iii) उन कार्यों को पूरा करने के लिए पर्याप्त प्रशासनिक क्षमता (iv)

नागरिकों के लिए निर्वाचित राजनेताओं की जवाबदेही और निर्वाचित राजनेताओं के लिए नौकरशाही की जवाबदेही दोनों सुनिश्चित करने के लिए विश्वसनीय जवाबदेही तंत्र का होना अवश्यक है । लेकिन सफल लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की वास्तविक सफलता में ग्रामीण स्तर पर मौजूदा सामाजिक संरचना की भूमिका को कम आंकता है। 73 वें संविधान संशोधन ने ग्रामीण समाज में महिलाओं, जनजातियो और हाशिए के समुदायों के राजनीतिक सशक्तीकरण में बहुत योगदान दिया है। इसने पंचायतों में खुले राजनीतिक अवसरों को प्रदान किया है। हालांकि, संख्या के संदर्भ में मात्र प्रतिनिधित्व शासन की गुणवत्ता में बहुत अधिक नहीं है, जब तक कि यह गरीबों और जरूरतमंदों को सेवाओं की कुशलता में परिलक्षित नहीं होता है।

पंचायती राज और प्रचलित जाति व्यवस्था के बीच संबंधों की प्रकृति और ग्राम समुदायों के संदर्भ में इसके परिणाम की जांच के बाद साल्वेम (1995) का सुझाव है कि, सशक्तिकरण में आर्थिक क्षेत्र में भूमि संबंधों में परिवर्तन और शिक्षा की सुविधा शामिल होगी। सामाजिक क्षेत्र में। अन्यथा 73 वाँ संवैधानिक संशोधन अधिनियम केवल कमजोर वर्गों, विशेषकर अछूतों, जनजातियो और महिलाओं के लिए क़ानूनी अधिकार जिससे उन्हें सशक्त बनाने का प्रयास करती है।

मनोज राय (2011) का कहना है कि 73 'संशोधन को सशक्तिकरण की सुविधा के लिए एक उपकरण के रूप में देखा जा सकता है' , पहले पंचायती राज संस्थाओं में निर्वाचित महिलाओं को सशक्त बनाना और फिर हर जगह महिलाओं को सशक्त बनाना, महिलाओं को न्याय प्रदान करना, और दलित, इस आशा में उनकी रुचि का प्रतिनिधित्व करते हैं कि यह राजनीति को पुरुष उच्च जातियों के वर्चस्व में बदल सकता है। आरक्षण से उन्हें उच्च जाति

के पुरुषों के साथ, मनुष्य के रूप में, नागरिकों के रूप में, उनके समान अधिकार प्राप्त करने में मदद मिलेगी। यह एक ऐसा साधन है जो कमजोर वर्गों के सशक्तिकरण का है, विशेषकर महिलाओं और अनुसूचित जनजातियो के कल्याण और स्वाबलंबन के लिये जरूरी है।

जी.के. लिटन और रवि श्रीवास्तव (1999) कहते हैं कि अतीत में उत्तर प्रदेश राज्य में, पंचायतों को अनुसूचित जातियों के बहिष्कार के लिए अग्रणी मध्यम जातियों द्वारा नियंत्रित किया गया था। 1980 के दशक के मध्य से राज्य ने नीचे से एक मजबूत उतार-चढ़ाव का अनुभव किया है। नतीजतन, राज्य के कुछ हिस्सों में बढ़ रही सामाजिक जागरूकता और राजनीतिकरण के कारण, अनुसूचित जातियों ने पंचायत संस्थाओं पर मध्यम और उच्च जातियों के आधिपत्य को चुनौती दी है। हालाँकि, अनुसूचित जातियों, 73 वें संशोधन का उपयोग करते हुए, पंचायतों में प्रतिनिधित्व प्राप्त किया है, वे निर्णय लेने में भाग लेने में सक्षम नहीं हैं, जो कि उच्च और मध्यम जातियों के हाथों में है। अध्ययन का तर्क है कि प्रभावी भूमि सुधार के बिना, ग्रामीण क्षेत्रों में मौजूदा बिजली संरचना, जो भूमि के कुलीन वर्ग को पंचायतों को नियंत्रित करने की अनुमति देती है, को बदला नहीं जा सकता है। हालांकि, वे इस बात से सहमत हैं कि राजनीतिक चेतना के बढ़ते स्तर और बहुजन समाज पार्टी की उपस्थिति के कारण, राज्य के कुछ हिस्सों में पंचायत स्तर पर कुछ बदलाव दिखाई दे रहा है। वे इस बात पर जोर देते हैं कि आरक्षण देने के दौरान अनुसूचित जनजातियों की भागीदारी को बेहतर बनाने में मदद मिल सकती है, अन्य शर्तें जैसे कि ग्रामीण इलाकों में विषम शक्ति संबंध समान रूप से महत्वपूर्ण हो सकते हैं।

एल.के. त्यागी और बी.पी. सिन्हा (2002) ने राजस्थान और हरियाणा के जिलों में एक अध्ययन करने के बाद पंचायतों के माध्यम से कमजोर वर्गों के सशक्तिकरण के बारे में चर्चा

करते हुए कहा कि हालांकि लोगों को आरक्षण के माध्यम से कमजोर वर्गों के प्रतिनिधित्व के महत्व का एहसास है, फिर भी प्रक्रिया आगे बढ़ रही है जो अभी धीमी है। एससी / एसटी सदस्यों के विचारों से बचने, दबाने और हेरफेर करने के लिए प्रमुख लोगों की प्रवृत्ति भी प्रचलित है। इसके अलावा वे सुझाव देते हैं कि, हमें यह मानने की गलती नहीं करनी चाहिए कि कमजोर वर्गों के सशक्तीकरण का काम उन्हें आरक्षण के माध्यम से पंचायतों में पर्याप्त संख्यात्मक प्रतिनिधित्व प्रदान करने से है। इस प्रक्रिया को शिक्षा, आर्थिक अवसरों और गहन जागरूकता अभियान द्वारा सुगम बनाना होगा।

डीसूजा (2012) ने विकेंद्रीकरण के नवीनतम चरण, 73 वें संवैधानिक संशोधन और उसके बाद के संबंध में भारत में विकेंद्रीकरण की आवश्यकता, मानदंड और भौतिक लाभों की प्रकृति, अनुभव और अनुभव के सवालों को संबोधित किया। विकेंद्रीकरण की उत्पत्ति और पीआरआईएस के इतिहास को संक्षेप में प्रस्तुत करने के बारे में चर्चा करने के बाद, उन्हें लगता है कि 73 वें संवैधानिक संशोधन को पूर्व 73 संशोधन पीआरआई प्रणाली के दौरान आने वाली समस्याओं की प्रतिक्रिया के रूप में देखा जा सकता है। उन्होंने जिन समस्याओं की पहचान की थी, वहां अनियमित चुनाव और दमन व्याप्त थे। अपर्याप्त विचलन शक्तियों में नौकरशाही प्रतिरोध, ग्रामीण कुलीन वर्ग का वर्चस्व, और ग्राम सभाओं का असंतोषजनक कार्य रहा है। PRIs में SC / STs के आरक्षण पर, उन्होंने कहा कि SC / ST समरूप समूह नहीं हैं, कुछ सामाजिक और आर्थिक रूप से कमजोर और समस्याएँ हैं। ये समूह अपने व्यवसायों के लिए अजीब हैं और SC / ST के अन्य समूहों के साथ तुलना करने योग्य नहीं हैं। जब तक कि SC / ST के पर्याप्त प्रतिनिधि नहीं हैं, इन समूहों में से PRI हैं, यह सबसे अधिक संभावना है कि SC / ST का उभरता नेतृत्व हो सकता है। इन समूहों की समस्याओं

में शामिल नहीं हो सके। परिणामस्वरूप इन समूहों को और अधिक हाशिए पर रखा जा सकता है।

प्रत्युषा पटनायक (2005) ने उड़ीसा के ढेंकनाल जिले की चार आदिवासी बहुल ग्राम पंचायतों के कामकाज में कमजोर वर्गों से संबंधित निर्वाचित प्रतिनिधियों की भागीदारी का अध्ययन किया। लेखक ने इन वर्गों द्वारा शक्ति के वास्तविक अभ्यास में किस हद तक संख्यात्मक प्रतिनिधित्व किया। लेखक ने पाया कि चुने हुए प्रतिनिधि समूह के विशिष्ट हितों को ठीक से व्यक्त करने या पंचायत के निर्णय में अपने स्वयं के निर्णय का उपयोग करने में सक्षम नहीं थे। लेखक ने निष्कर्ष निकाला कि विकेन्द्रीकरण में सकारात्मक कार्रवाई वंचित समूहों के "उचित और प्रभावी प्रतिनिधित्व" को सुनिश्चित करने में सफल नहीं हुई है। अधिकांश मामलों में प्रतिनिधि गाँव के कुलीनों के प्रति जवाबदेह थे और बड़े पैमाने पर नागरिकों के प्रति कोई जवाबदेही प्रदर्शित करने के बजाय उनके नियंत्रण में रहे।

सोढ़ी जे.एस. और रामानुजम एम. एस. (2006) ने पंचायती राज प्रणालियों के कार्य की जाँच पाँच राज्यों (कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान और पश्चिम बंगाल) में की। लेखक ने मुद्दों पर प्रकाश डाला और ग्राम सभा चुनाव, कार्यकताओं का विकास, वित्त का विकास, नियोजन कार्यान्वयन, समानांतर निकाय, महिलाओं के सशक्तीकरण, क्षमता निर्माण और प्रशिक्षण और सामाजिक अंकेक्षण और मुकदमेबाजी के मुद्दों पर विशेष सिफारिशें कीं। लेखक को लगता है कि पंचायती राज व्यवस्था (पीआरएस) संस्थानों पर संवैधानिक निर्देश स्पष्ट हैं। राज्य पंचायती राज अधिनियमों का पालन अनिवार्य आवश्यकता के रूप में किया गया, जो स्पष्ट और व्यापक नहीं हैं। पंचायती राज प्रणाली संस्थानों के कार्यात्मक और वित्तीय प्रतिनिधि अपर्याप्त और आधे-अधूरे हैं। प्रतिनिधिमंडलों की शैली और सामग्री ने कई

राज्यों में पीआरएस संस्थानों की प्रभावशीलता को व्यवस्थित रूप से कमजोर कर दिया है। यह धारणा देता है कि राज्य सरकारों के पास पंचायतों को मजबूत करने के लिए कोई राजनीतिक प्रशासनिक इच्छाशक्ति नहीं है। कर्नाटक को छोड़कर कई राज्यों में नौकरशाही भी विकेंद्रीकरण के विचार के अनुकूल नहीं है। उन्होंने पंचायती राज प्रणाली संस्थानों के कामकाज में राज्य पंचायत अधिनियमों में पर्याप्त प्रावधानों के माध्यम से हस्तक्षेप करने का अधिकार जमाकर अपने हितों की रक्षा की है। निर्वाचित प्रतिनिधियों से बहुत उम्मीद की जा रही है जो ज्यादातर गरीब, अज्ञानी और अनपढ़ हैं, आमतौर पर ग्राम पंचायत और पंचायती समिति स्तरों पर। पंचायती राज प्रणाली संस्थानों में निर्वाचित प्रतिनिधियों का योगदान नगण्य है, लेकिन इन निर्वाचित प्रतिनिधियों को बनाए रखने पर व्यय का निषेधात्मक आवंटन हो रहा है। अभी लोगों की भागीदारी भी संतोषजनक रही है। ग्रामसभा आम तौर पर निष्क्रिय होती हैं। निर्वाचित प्रतिनिधि भी ग्राम पंचायत और पंचायती समिति स्तरों पर पंचायत की गतिविधियों में रुचि नहीं ले रहे हैं। अधिकांश मामलों में, ग्राम पंचायत की बैठकें केवल कागजों पर होती हैं। इस संबंध में भारत का कर्नाटक राज्य असाधारण रहा है। पीआरएस के सभी तीन स्तरों पर काम करने वाले सरकारी अधिकारियों को संबंधित राज्य सरकारों द्वारा प्रकाशित किया जाता है। ऐसी भी रिपोर्टें हैं कि पंचायत सचिव, ग्राम पंचायत स्तर पर सरकारी अधिकारी, कुछ राज्यों में हैं, जिन्हें सरकार में अपने मूल विभागों में अधिशेष घोषित किया जाता है और इसलिए, ग्राम पंचायतों में काम करने के लिए तैनात हैं। ऐसे व्यक्तियों को उनके द्वारा सौंपे गए कार्यों को करने के लिए पर्याप्त प्रेरित नहीं किया जाता है।

यतींद्र सिंह सिसोदिया (2016) लेखक ने मध्य प्रदेश में पंचायती राज व्यवस्था के भीतर ग्राम सभा पर ध्यान केंद्रित किया। यह अध्ययन शाजापुर और देवास जिलों में ग्राम सभा में लोगों की भागीदारी की प्रकृति पर आधारित था। लेखक ने बताया कि गाँव से लेकर गाँव तक

विभिन्न पंचायतों में प्रतिनिधित्व करते हैं। लेखक ने तर्क दिया कि सभी सदस्य ग्राम सभा में शामिल नहीं हुए थे। आमतौर पर पुरुष ग्राम सभा की बैठकों में भाग लेते हैं। उनके अध्ययन से पता चलता है कि बहुमत के मामलों में, कोई भी बैठक में शामिल नहीं होता है, जहां एक महत्वपूर्ण संख्या में यह कहा जाता है कि केवल पुरुष ही बैठकों में शामिल होते हैं। महिलाओं के एक तिहाई प्रतिनिधित्व का एक वैधानिक प्रावधान होने के बावजूद, ग्राम सभा की बैठक के लिए अनिवार्य, एक स्पष्ट-कटु उदासीनता घरों में स्पष्ट है। लेखक ने निष्कर्ष निकाला कि ग्राम स्वराज के लाभों के बारे में जानने के बावजूद ग्राम सभा की बैठक में भागीदारी कम रही है। कम भागीदारी को मुख्य रूप से जोरदार जाति व्यवस्था के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है, गाँवों में वर्ग भेद और लिंग विभाजन मौजूद है । निर्णय लेने की प्रक्रिया में सरपंच और अन्य प्रभावशाली लोग हावी हैं। लेखक ने महसूस किया कि ग्रामसभा में संसाधन प्रवाह और इसकी बढ़ती हुई शक्ति और प्राधिकरण ने लोगों में कुछ रुचि पैदा की है। यह अपेक्षा की जाती है कि यह रूचि जमीनी स्तर पर अधिक व्यापक, सहभागी और अधिक तीव्र हो ।

ऑरेलियानो फर्नांडिस (2008) ने कहा कि पंचायती राज प्रणाली गांवों को आत्मनिर्भर इकाइयों के रूप में सशक्त बनाने और सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन को पूर्णतया स्थापित करने में विफल रही है। लेखक ने महसूस किया कि 73 वें संशोधन में कोई संदेह नहीं है कि प्रतिनिधियों और स्थानीय समुदायों को सशक्त बनाने की नींव रखी गई है, लेकिन संघीय बाधाओं के कारण, यह राज्यों की घुसपैठ के माध्यम से जमीनी स्तर पर शक्तियों को विकसित नहीं करने के लिए तोड़ने में सक्षम नहीं था। हालाँकि GPRA को 1994 में पारित किया गया था, लेकिन GPRA के गोवा में PRIs की स्थिति काफी हद तक अपरिवर्तित रही। ऑपरेशन की विफलता के साथ-साथ प्रशासनिक विचलन भी है। राज्य सरकारें

अनुसूची XI में पंचायतों को आवंटित किए गए 29 विषयों को विकसित करने में विफल रही हैं। इसी तरह, कुछ राज्यों में तो अब तक जिला परिषद की शक्तियां विकसित नहीं हुई है। यह मुख्य रूप से सत्तारूढ़ अभिजात वर्ग द्वारा राज्य की धारणा, और राज्य की नौकरशाही के कारण है कि वे अकेले ही सबसे अच्छा जानते हैं, जो राज्य के लिए अच्छा है। वे ग्रामीण समुदायों की क्षमताओं को बेहतर ढंग से समझने और उनकी समस्याओं को हल करने और मुद्दों और समस्याओं पर निर्णय लेने और उनकी चिंता करने की उनकी क्षमता को हल करने से इनकार करते हैं। लेखक ने निष्कर्ष निकाला कि गोवा में पंचायतों की विफलता का मूल कारण राज्य सरकार द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों, महिलाओं सहित शक्तियों का गैर-विचलन करना है।

कुंज बिहारी नायक (2018) ने माध्यमिक साहित्य की समीक्षा के आधार पर भारत में पंचायती राज की प्रणाली का गंभीर विश्लेषण किया। इस अध्ययन ने निम्नलिखित निष्कर्ष निकाला। एक ओर, भारतीय संविधान में 73 वें संविधान संशोधन के बाद की नई प्रणाली को कुछ वैज्ञानिकों, प्रशासकों, स्थानीय अभिजात वर्ग और हमारे देश के सभी वर्गों के महिमामंडित किया गया है, शक्ति के वास्तविक विकेंद्रीकरण के बारे में लाने और एक प्रयास के रूप में सफल होने के रूप में किया गया है । यह कानून देश में महिलाओं, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य कमजोर वर्गों के जीवन स्तर में सुधार लाने के लिए लाया गया है । हालांकि, दूसरी तरफ, ऐसे आलोचक हैं जो यह आरोप लगाते हैं कि इस प्रणाली ने ग्रामीण समाज में कई समस्याओं को उत्पन्न किया है और उन्हें बनाए रखा है। सबसे पहले, कई निर्वाचित महिला नेता कठपुतलियों की तरह लगती हैं । निर्वाचित महिला नेता अपने कर्तव्यों का पालन करने के लिए पूरी तरह से स्वतंत्र नहीं हैं। दूसरे, कई स्थानों पर निर्वाचित अज्ञानी दलित और आदिवासी नेता या तो मुख्यधारा के समाज के प्रमुख नेताओं

से प्रभावित होते रहे हैं या उन्हें अपने पदों से हटने की धमकी दी गई है। तीसरा, महिलाओं, दलितों और आदिवासियों के लिए सीटों के आरक्षण ने अक्सर उच्च जाति वर्गों के बीच असंतोष पैदा किया है, जिन्होंने व्यवस्थित और रणनीतिक रूप से ग्रामीण समाज में संघर्ष और हिंसा के लिए जगह बनाई है। चौथा, पर्याप्त वित्तीय सहायता प्रणाली की कमी के कारण अक्सर पंचायती राज प्रणाली द्वारा के चुने हुए नेता अपनी आधिकारिक गतिविधियों को चलाने के लिए अपने स्वयं के पैकेट से पैसा खर्च करनी पड़ती हैं। पांचवीं बात, राज्यों की अपनी शक्तियों और कार्यों को और भारतीय नौकरशाही के असहयोगी स्वभाव को विकसित करने की इच्छाशक्ति की कमी के कारण, लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण का आंदोलन कमजोर पर रहा है। हालांकि, लेखक को लगता है कि निर्वाचित नेताओं को सही तरीके से काम करने के लिए वास्तव में सशक्त बनाया जा सकता है जब उचित कानूनी और प्रशासनिक प्रशिक्षण, नौकरशाही का पर्याप्त वित्तीय समर्थन और सहयोग सुनिश्चित किया जाता है।

रत्नावली (2016) ने गुजरात के अनुसूचित क्षेत्रों में स्थानीय प्रशासन के लक्ष्य की प्राप्ति का आकलन करने के लिए ग्राम सभाओं और उसमें लोगों की भागीदारी की जांच की। अध्ययन से पता चला कि ग्राम सभा पंचायती राज प्रणाली अधिनियम के अनुसार अपनी पूरी क्षमता के साथ काम नहीं कर पा रही है। पंचायतों और ग्राम सभा के विभिन्न स्तरों की भूमिका और कार्यों के बारे में केंद्रीय अधिनियम में अस्पष्टता और उनकी स्थिति के अनुसार परिवर्तन करने के लिए राज्यों को दिए गए लचीलेपन ने राज्यों को उनके दृष्टिकोण से निर्देशित किया है जहाँ ग्राम सभा को बहुत कम शक्ति प्रदान की है। गुजरात पंचायत (संशोधित) अधिनियम 1998 भी इसी श्रेणी में आता है। इस प्रकार ग्राम सभा शक्तिशाली संस्थाओं के रूप में कार्य नहीं करती है और समुदाय का बहुत कम ध्यान आकर्षित करती है। इसके अलावा, ग्राम सभा में

समुदाय की भागीदारी आम तौर पर कम है और सामाजिक महत्व के अधिकांश मुद्दों को शायद ही उठाया जाता है। इस तरह की स्थिति भागीदारी शासन के लिए अधिनियम में परिकल्पित मामलों में समुदाय के सशक्तिकरण में गतिरोध उत्पन्न होगा।

द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग वीरप्पा मोइली की सातवीं रिपोर्ट (2008) में कहा गया कि राज्यों द्वारा अनुसमर्थन की प्रक्रिया में पेसा के प्रावधानों को बहुत कम किया गया है और ग्राम सभा की अधिकांश शक्तियाँ जिला प्रशासन या जिला परिषद को दी गई हैं। PESA को लागू करने का मुख्य उद्देश्य जनजातीय समाज को आजीविका पर नियंत्रण करने में सक्षम बनाना, प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन में और आदिवासियों की पारंपरिक संस्कृति और अधिकारों की रक्षा के लिए कहना है। रिपोर्ट में उपलब्ध जानकारी इंगित करती है कि PESA का मुख्य उद्देश्य जनजातीय को अधिक स्वायत्त प्रदान से है। प्राकृतिक संसाधनों तक पहुंच जैसे महत्वपूर्ण मुद्दे, विशेष रूप से लघु वन उत्पादों पर परिभाषा और अधिकार अनसुलझे हैं और, सामान्य रूप से, पीईएसए के उद्देश्यों को किसी भी राज्य में किसी भी बड़ी जनजातीय आबादी के साथ किसी भी गंभीर तरीके से महसूस नहीं किया गया है। रिपोर्ट में महसूस किया गया कि मुख्य समस्या, आदिवासी आबादी से संबंधित संघर्षों से निपटने के लिए है कि मौजूदा संवैधानिक प्रावधानों और उनकी रक्षा के लिए बनाए गए कानूनों का बेहतर उपयोग नहीं किया जाता है। कुछ क्षेत्रों में, राज्य को आदिवासियों के हितों की रक्षा करने में कठिन और असंवेदनशील माना गया है और उनके पदस्थापन के स्थान पर सरकारी अधिकारियों की अनुपस्थिति से स्थिति और अधिक बढ़ जाती है। आदिवासियों की आबादी का एक महत्वपूर्ण वर्ग धीरे-धीरे चरमपंथियों से मुख्यधारा से दूर हो गया है। जनजातीय आबादी को जिस तरह से प्रवर्तन एजेंसियों द्वारा उनकी भूमि और जंगलों से अलग कर दिया गया हैं।

गोपीनाथ रेड्डी एम और अनिल कुमार (2010) क्रमिक योजना अवधि के दौरान राज्य की विभिन्न नीतियों की पृष्ठभूमि में अनुसूचित जनजातियों की स्थिति और आंध्र प्रदेश में सामाजिक-आर्थिक गतिशीलता पर इसके प्रभाव को दर्शाते हैं। लेखक ने कहा कि आजादी के बाद से, सरकार ने कई पंचवर्षीय योजनाएं, कार्यक्रम, नीतियां और कानून शुरू किए हैं और अनुसूचित जनजातियों के क्रमिक सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए प्रयास किए हैं, लेकिन वे अभी भी समाज के सबसे कमजोर वर्ग हैं। इन विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान, आदिवासी क्षेत्रों के लिए निधि आवंटन में काफी वृद्धि हुई है। लेकिन ज्यादातर आदिवासी अधिकारियों द्वारा बड़े पैमाने पर भ्रष्टाचार और आदिवासी विकास योजनाओं के अनुचित कार्यान्वयन के कारण सरकार द्वारा दी जाने वाली सुविधाओं का लाभ नहीं ले पाए हैं । इसलिए, आंध्र प्रदेश में अधिकांश पहाड़ी जनजातियाँ उचित बुनियादी सुविधाओं और संचार सुविधाओं के अभाव से पीड़ित हैं। योजनाओं का अनुचित प्रबंधन और जनजातीय क्षेत्र में उपयुक्त कार्यक्रमों का अपर्याप्त कार्यान्वयन एक बड़ी समस्या है। बहुसंख्यक आदिवासी लोगों को सरकारी एजेंसियों द्वारा लागू की गई विकास योजनाओं की जानकारी नहीं है। आदिवासी लोगों में जागरूकता पैदा किए बिना, बेहतर परिणाम हासिल करना मुश्किल है। लेखकों ने विरोध किया कि बहुसंख्यक आदिवासी, वन संसाधन आजीविका का मुख्य स्रोत हैं। हालांकि, वन कानून जंगल पर उनकी निर्भरता को प्रतिबंधित करते हैं। इसके साथ, कई जंगलों को संरक्षित वन या अभयारण्य घोषित किया गया और उनके प्राकृतिक आवास से उनके निष्कासन की धमकी दी गई। यहां तक कि जहां बेदखल आदिवासी पुनर्वासित हैं, उन्हें खेती के लिए जमीन का एक छोटा सा टुकड़ा छोड़कर, आजीविका के अतिरिक्त साधन उपलब्ध नहीं कराए गये हैं। गरीब और अन्य बुनियादी ढाँचे के कारण आदिवासी क्षेत्र दूरस्थ और दुर्गम हैं और अलग-थलग बने हुए हैं। लेखकों ने निष्कर्ष निकाला

कि साक्षरता, नामांकन, शैक्षिक स्थिति, स्वास्थ्य संकेतक, प्रति व्यक्ति आय, रोजगार के अवसरों, पीने के पानी, आवास जैसी बुनियादी सुविधाओं तक पहुंच के सामाजिक-आर्थिक चर की स्थिति पर विभिन्न समितियों, कार्य समूहों की शोध रिपोर्टों में समीक्षा करें। जल निकासी सुविधा, बिजली, आदि ने थोड़ा सुधार दिखा है, लेकिन अभी भी एसटी और सामान्य आबादी के बीच व्यापक अंतराल है। विभिन्न समीक्षाओं और रिपोर्टों ने राज्य और विभिन्न विभागों द्वारा नीतिगत कार्यान्वयन, धन के आवंटन, आवंटन और उपयोग, राज्य, जिला, ब्लॉक और गाँव के स्तरों पर संरचनात्मक अपर्याप्तताओं में विकास कार्यक्रमों की मार्मिक कार्यान्वयन को सामने लाया है।

सुधा पाई (2014) ने उत्तर प्रदेश राज्य के दो जिलों में पंचायती राज प्रणाली के अंतर्गत अनुसूचित जातियो और जनजातियो के सशक्तीकरण में सामाजिक पूंजी और पंचायत गतिविधियों की भूमिका का अध्ययन किया। उन्होंने देखा कि चूंकि पश्चिमी यूपी के मेरठ जिले में सामाजिक पूंजी निर्माण की प्रक्रिया तेज और अपेक्षाकृत सफल रही है। पूर्वी यूपी के आजमगढ़ जिले की तुलना में, इसलिए, ग्राम पंचायत की भूमिका बाद की तुलना में पूर्व में अपेक्षाकृत प्रभावी और सफल रही है। बेशक, आरक्षण की सुविधा के कारण, दोनों जिलों में पंचायत प्रतिनिधियों की संख्या अधिक है, लेकिन वास्तविक अर्थों में मेरठ जिले में शक्ति संरचना की स्थिति बेहतर है, लेकिन आजमगढ़ के मामले में ऐसा नहीं है। उत्तरार्द्ध में, पंचायत में अभी भी उच्च जाति और उच्च पिछड़ी जाति के लोगों का वर्चस्व है, इस तथ्य के बावजूद कि औपचारिक नेतृत्व अनुसूचित जातियो के हाथों में है। इसकी वजह है कि अनुसूचित जाति नेताओं के पास सामाजिक पूंजी का अभाव है। लेकिन मेरठ में अनुसूचित जाति नेताओं में सत्ता की सौदेबाजी बहुत ज्यादा है। वे या तो पंचायत की गतिविधियों में हावी हैं या वे स्थानीय प्रमुख जातियों जैसे ठाकुरों और जाटों के साथ बातचीत करते हैं।

इसलिए, लेखक ने ठीक ही निष्कर्ष निकाला है कि मेरठ जिले में, जाटवों के बीच सामाजिक संबंधों के घनिष्ठ संबंध और मजबूत बंधन उभरे हैं, जिसने उन्हें जाटों और राजपूतों के प्रभुत्व को चुनौती देने और पंचायतों पर नियंत्रण हासिल करने में सक्षम बनाया है। आजमगढ़ जिले में, अनुसूचित जाति आर्थिक रूप से कमजोर है, यहाँ तक कि चर्मकार के बीच विभाजन और सामूहिक रूप से कुर्मियों और यादवों की शक्ति को चुनौती देने और पंचायतों में अधिक प्रभावी भूमिका निभाने में असमर्थ है। पूर्वी यूपी में अनुसूचित जनजातियो के बीच आर्थिक बदलाव और राजनीतिक लामबंदी की गति धीमी रही है, निम्न स्तर का टकराव पैदा हुआ और वर्चस्व की मौजूदा संरचना को बनाए रखा। इन अध्ययनों से पता चलता है कि आरक्षण ने अनुसूचित जनजातियो को पंचायतों में प्रवेश करने में सक्षम बनाया है और इस प्रकार आरक्षण व्यवस्था ने राजनीति में उनके प्रवेश में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हालांकि, निर्णय लेने की प्रक्रिया में उनकी भागीदारी के लिए यह पर्याप्त स्थिति नहीं है।

नीलिमा देशमुख, (2016) ने पंचायती राज प्रणाली के अंतर्गत अपने अध्ययन में वंचित आदिवासी लोगों के बारे में कुछ गंभीर बिंदुओं का उल्लेख किया है। आदिवासी भारत की आबादी का 8.2% हैं। फिर भी वे समाज में सबसे अधिक हाशिए पर हैं। जो आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक रूप से वंचित और शोषण का सामना कर रहे हैं। पूरे भारत में 40.1% से अधिक आदिवासी विस्थापित रहे हैं। एसटी आदिवासी आबादी का 46.86% ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी रेखा (बीपीएल) से नीचे और राष्ट्रीय स्तर पर 55.2% है। 63.71% आदिवासियों को भूमि, खराब खेती, और खराब स्वास्थ्य सेवा के प्रावधान के साथ अत्यधिक गरीबी की स्थिति में रहने के रूप में वर्गीकृत किया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप संचारी और गैर-संचारी रोगों की अधिक घटनाएं होती हैं, उनके पास आय सृजन और श्रम के रूप में काम करने के कुछ अवसर होते हैं। और आर्थिक प्रवास के प्रति बेहद संवेदनशील हैं।

63.5% से अधिक आदिवासी घरों में बिजली नहीं है। लगभग 53.1% आदिवासी आबादी के पास सुरक्षित पेयजल का सुलभ स्रोत नहीं है लगभग 83% आदिवासी आबादी के पास स्वच्छता की सुविधा नहीं है औसत मासिक उपभोग व्यय 388 रूपये के बराबर है।

शिरसाथ एस. टी. (2014) ने पंचायती राज व्यवस्था के अंतर्गत आदिवासी विकास के समावेशी स्वरुप और भारत सरकार द्वारा प्रशासनिक सुधारों का विश्लेषण किया। लेखक ने भी निष्कर्ष निकाला कि पिछले सात दशक से भारत सरकार ने कुछ नए और महत्वपूर्ण प्रयास किए हैं। परन्तु अभी तक उनका वांछित परिणाम नहीं देखा गया हैं। पीईएसए अधिनियम के कार्यान्वयन में एसटी और प्रशासनिक समस्याओं के बीच जागरूकता की कमी और अन्य प्रशासनिक सुधार विकास प्रक्रिया में प्रमुख बाधाएं हैं। यह अधिनियम और ऐसे सुधार बहिष्कृत जनजातियों के समावेशी विकास में मील का पत्थर साबित हो सकते हैं। हमें यह स्वीकार करना चाहिए कि भारतीय आदिवासी अभी भी विकास की मुख्यधारा में नहीं हैं। लेकिन, भारत सरकार ने 73 वें संवैधानिक संशोधन, पीईएसए अधिनियम और विभिन्न समितियों और आयोगों द्वारा सुझाए गए निरंतर प्रशासनिक सुधारों की मदद से आदिवासी स्थानीय शासन के लिए प्रशासनिक सुधारों को लागू किया है। आरक्षण के माध्यम से पंचायती राज प्रणाली में प्रतिनिधित्व की गारंटी और स्थायी आर्थिक विकास की दिशा में कारगर साबित रहा हैं।

सुंदर राव, एम. और लक्ष्मण राव, बी. (2010) ने आंध्र प्रदेश के विशाखापत्तनम जिले में पंचायती राज और आदिम जनजाति समूहों (पीटीजी) और प्लेन ट्राइब्स के सामाजिक-आर्थिक स्थिति को प्रभावित करने वाले कारकों का अध्ययन किया है। लेखकों ने सादे जनजातियों की तुलना में चयनित आदिम जनजाति समूहों (पीटीजी) के सापेक्ष सामाजिक-

आर्थिक पिछड़ेपन के निर्धारकों से संबंधित अंतर जनजाति विविधताओं को प्रभावित करने वाले कारकों की जांच की है। इस अध्ययन से निकाले गए प्रमुख निष्कर्षों के अंत में निष्कर्ष निकाला गया है कि अध्ययन क्षेत्र में सामाजिक आर्थिक स्थितियों से संबंधित चयनित सादे जनजातियों के साथ-साथ चयनित पीटीजी के भीतर भी अंतर -जनजाति विविधताएं प्रचलित हैं। इसलिए आंतरिक पर्वतीय क्षेत्रों में रहने वाले पीटीजी परिवारों को अपने तेज सामाजिक-आर्थिक प्रसारण के लिए गहन विकास नीति पैकेज की आवश्यकता है। यह स्पष्ट है कि चयनित आदिवासी समुदायों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति सजातीय नहीं है। इसलिए पीटीजी और साधारण जनजाति के बीच अंतर जनजाति विविधताओं को हल करने के लिए और पीटीजी और साधारण जनजाति के भीतर अंतर जनजाति विविधताएं। विकासात्मक योजनाओं को प्रत्येक क्षेत्र में और प्रत्येक आदिवासी समूह के लिए सामाजिक-सांस्कृतिक कारकों और जनजातियों की आर्थिक आवश्यकताओं के अनुरूप में तैयार किया जाना है। लेखक ने सुझाव दिया कि पीटीजी और साधारण जनजातियों के विकास के लिए विशेष योजनाएँ बनाते समय संबंधित जनजातियों के पारंपरिक मूल्यों और प्रथाओं का संज्ञान लेने की आवश्यकता है।

स्थानीय निकायों और अनुसूचित जनजाति कल्याण विभाग के सहयोग से केरल इंस्टीट्यूट ऑफ लोकल एडमिनिस्ट्रेशन द्वारा (वर्ष 2011-2017 के बीच) एक सर्वेक्षण में राज्य में अनुसूचित जनजाति समुदायों की दयनीय जीवन स्थितियों का पता चलता है। राज्य में लगभग 49 प्रतिशत आदिवासी घरों में शौचालय नहीं हैं। लगभग 24,289 परिवारों के पास राशन कार्ड नहीं हैं। आदिवासी समुदायों के बीच सैकड़ों स्नातक और स्नातकोत्तर बेरोजगार हैं। राज्य में 33 अनुसूचित जनजाति समुदाय हैं। 40,1401 मजबूत आदिवासी आबादी में से, 'पानियन' समुदाय सबसे बड़ा है। पाँच आदिम जनजातीय समूहों, कोरगा, कटुनायकन,

चोलानिकान, कुरुम्बा और कादर की कुल जनसंख्या 26,273 है। राज्य में 4614 भूमिहीन आदिवासी परिवार हैं। 55 प्रतिशत से अधिक जीर्ण घरों में रहते हैं। कुल मिलाकर, 39,850 घरों में रसोई नहीं है और 49 प्रतिशत में शौचालय नहीं है। आधी आबादी शुद्ध पेयजल से वंचित है और 1252 आदिवासी बस्तियों का विद्युतीकरण नहीं हुआ है। 1300 से अधिक आदिवासी बस्तियों में जंगली जानवरों का खतरा है। सर्वेक्षण से पता चलता है कि एसटी महिलाओं में 887 माताएं और 20,301 विधवाएं हैं। इनमें से केवल 17 फीसदी को ही पेंशन मिल रही है। कई परिवारों के पास उचित चिकित्सा देखभाल तक पहुंच नहीं है। इनमें 4,036 अलग-अलग हैं और 2386 मानसिक रूप से विकलांग हैं। समुदाय में 40,323 क्रोनिक प्रकार की मरीज हैं। अनुसूचित जनजातियों में साक्षरता दर 72.77 है। उनमें से ज्यादातर प्राथमिक स्तर पर ही स्कूलों से बाहर हो जाते थे। गरीबी और शैक्षणिक संस्थानों तक पहुंच की कमी इसके प्रमुख कारण हैं। सर्वेक्षण के अनुसार, 15-59 आयु वर्ग के 77,680 लोग बेरोजगार हैं। इसमें पेशेवर योग्यता के साथ 2112 स्नातक, 200 स्नातकोत्तर और 2066 शामिल हैं। समुदाय की लगभग आधी आबादी ने ज्यादातर निजी संस्थानों या व्यक्तिगत धन उधारदाताओं से ऋण लिया है।

बैजू, के.सी. (2011) ने केरल में विकेंद्रीकृत शासन के तहत जनजातीय विकास का विश्लेषण किया है। लेखक गरीबी, भूमि अलगाव, शोषण, शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल, रोजगार, सामाजिक विकास और इन लक्षित समूहों के लिए अपनी पहुंच और नीतिगत निहितार्थ और सेवा वितरण की मजबूती पर चर्चा करते हुए विकास और कल्याण कार्यक्रमों के विश्लेषण का प्रयास करता है। लेखक ने निष्कर्ष निकाला कि वंचित समूहों, अनुसूचित जनजातियों को आईसीटी में उन्नति का लाभ और उनकी जीवन स्थितियों को सुधारने में सेवा वितरण प्रबंधन से लाभ मिलने की उम्मीद है। स्थानीय स्व-सरकारी संस्थानों (एलएसजीआई) और ऊरुकुट्टैम

के माध्यम से भागीदारी विकास प्रक्रिया उस दक्षता में सुधार कर सकती है जिसके साथ वे इस बाह्य समुदाय को सेवाएं प्रदान कर सकते हैं। स्थानीय स्व-सरकारी संस्थानों (एलएसजीआई) और ऊरुकुट्टैम के विकेन्द्रीकरण और सशक्तिकरण की प्रभावशीलता काफी हद तक मानक गुणवत्ता और विवेकपूर्ण तरीके से लोगों को समय पर, लोगों के अनुकूल तरीके से सेवाएं प्रदान करने की उनकी क्षमता पर निर्भर करती है। आदिवासी विकास के लिए एक नए प्रतिमान की परिकल्पना की जा सकती है, जहां उत्तरदायी, पारदर्शी, जवाबदेह सार्वजनिक वितरण प्रणाली के समर्थन में आदिवासी लोगों की जरूरतों और भागीदारी के अनुरूप कार्यक्रमों / योजनाओं का निर्माण, कार्यान्वयन, निगरानी और मूल्यांकन किया जाए। ग्राम पंचायत और संबंधित ऊरूकूटम की एक संयुक्त और ईमानदार पहल जन वितरण प्रणाली की एक प्रणाली को आगे ला सकती है जिससे आदिवासी विशिष्ट योजनाओं और परियोजनाओं के कार्यान्वयन में शामिल मौजूदा मुद्दों और चुनौतियों पर काबू पाने के लिए वंचित आदिवासी समुदाय के लिए एक उचित और गुणवत्तापूर्ण सेवा सुनिश्चित हो सके।

कुमार सत्यम (2017) ने झारखंड में पंचायती राज संस्थानों में निर्वाचित आदिवासी महिला प्रतिनिधियों की भूमिका की जांच की। उन्होंने अपने अध्ययन में पाया कि ज्यादातर मामलों में महिलाएं गाँव या अंतर-ग्राम संगठनों का मुखिया नहीं हो सकती हैं। जबकि PESA के अंतर्गत पंचायती राज संस्थानों के विभिन्न स्तरों पर महिलाओं के लिए सीटों के आरक्षण का प्रावधान करता है, क्योंकि इसके परिणामस्वरूप महिलाएं बहुत उत्साह के साथ आ रही हैं और वे राजनीतिक मंच में भाग ले रही हैं। महिलाओं ने भी अनारक्षित सीटों से चुनाव लड़ा और शानदार जीत दर्ज की। यह सच है कि वे वास्तव में अपने अधिकारों और कर्तव्य का आनंद नहीं ले रहे हैं जो कि पीईएसए अधिनियम द्वारा अब तक प्रदान किया गया है। पंचायत में ज्यादातर निर्णय उनके पतियों द्वारा लिए गए हैं। तो इस तरह से, महिलाओं को अभी भी

रबर स्टैम्प के रूप में काम कर रही है । स्थानीय स्वशासन में उनकी भूमिका, स्थिति और नेतृत्व को बढ़ाने के उद्देश्य से निर्णय लेने में सक्रिय भागीदारी पर जोर देने की आवश्यकता है। यह भी देखा गया है कि महिलाएं उन लोगों के खिलाफ ग्राम सभा में अपनी आवाज उठाने की क्षमता का प्रदर्शन नहीं कर रही हैं जो शराब की दुकानें चला रहे हैं और इस मुद्दे पर सभी चिंताओं और एकता के बावजूद गांव में बेच रहे हैं। पारंपरिक प्रणाली मूल रूप से दो स्तरों पर संचालित हो रही है, गाँव और अंतर-गाँव के रूप में । जबकि आधुनिक प्रणाली त्रिस्तरीय संरचना, गांव, ब्लॉक और जिला स्तर की बात करती है जो प्रकृति में अधिक लोकतांत्रिक और विकेंद्रीकृत है। लेकिन झारखंड में विशेष रूप से जनजातीय क्षेत्रों में निर्वाचित महिला प्रतिनिधि अभी भी अपने विशेष अधिकारों और कर्तव्यों के लिए अराजकता और भ्रम की स्थिति में हैं।

अशोक कुमार एच और महेश टी.एम. (2016) कर्नाटक के मैसूर जिले में पंचायती राज संस्थानों में आदिवासी महिलाओं की स्थिति की जांच की। अध्ययन से पता चला कि कोटेगला में महिला नेताओं ने सार्वजनिक स्थान पर कब्जा करने के अपने दृढ़ संकल्प का प्रदर्शन किया है। हालांकि महिलाओं को सशक्त बनाने की प्रक्रिया में बाधाएं हैं। डोड्डा हज्जुरु में बाधाओं को दूर करने और सशक्तीकरण प्रक्रिया बनाने के लिए, निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों को स्थायी रूप से गैर-सरकारी संगठनों के माध्यम से निरंतर उन्मुखीकरण, सूचना, परामर्श और संवेदीकरण की आवश्यकता होती है । जहां महिला सदस्य और इस तरह उनकी उपस्थिति का समर्थन करते हैं। लेखक ने सुझाव दिया कि महिलाएँ इस वर्चस्व और अधीनता से बाहर आती हैं जिसके लिए उन्हें शिक्षित और प्रशिक्षित क्षमता निर्माण और जागरूक करने की आवश्यकता है। ये दोनों स्वयं में पर्याप्त परिस्थितियां नहीं हैं, महत्वपूर्ण निर्णय लेने से महिलाओं की उनकी कमी है। जागरूकता, शिक्षा और प्रशिक्षण की कमी के

अलावा, उत्तरदाताओं ने अन्य समस्याओं के बारे में भी अपनी राय व्यक्त की। वित्तीय संसाधनों की कमी को सबसे महत्वपूर्ण माना जाता था। सशक्तिकरण के बीज बोए गए हैं और अब इस फूल कली को शिक्षित करने के लिए एनजीओ, राजनीतिक नेतृत्व और नौकरशाही संरचना की जिम्मेदारी है। आदिवासी जनजातियो के कल्याण के लिये पंचायती संस्थ्याए निरंतर कार्य कर रही है आशा है की आने वाले कुछ दशको में उनकी स्थिति और बेहतर हो सके।

संदर्भ सूची:-

1. गाँधी, एम.के., ग्राम स्वराज्य, नवजीवन पब्लिशिग हाउस, अहमदाबाद, 1962, पृष्ठ 67
2. पाण्डे, राजवली, (2000), प्राचीन भारत, पृष्ठ 56
3. असलम, एम., (2017), पंचायती राज इन इण्डिया, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, , पृष्ठ 13
4. सलेतोरे, बी.ए., 'एनसीएन्ट इण्डियन पोलिटिकल थोट एण्ड इन्स्टीट्यूशन्स', एशिया पब्लिकेशन्स हाउस, बम्बई, 1963, पृष्ठ 419 - 21
5. सुरोलिया, शंकर, (1975), 'भारत में ग्रामीण शासन, कालेज बुक डिपो, जयपुर, पृष्ठ 25
6. जोशी , डॉ आर.पी. एवं मंगलानी, रूपा, 'पंचायती राज के नवीन आयाम', यूनिवर्सिटी बुक हाउस, जयपुर, पृष्ठ 6
7. शर्मा, डॉ हरिशचन्द्र, , (1975), भारत में स्थानीय शासन का इतिहास, कालेज बुक डिपो, जयपुर, पृष्ठ 25
8. पूरणमल, डॉ , (2015) 'नवीन पंचायती राज एवं महिला नेतृत्व', पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, पृष्ठ 11
9. बाबेल, डॉ बसन्ती लाल, (2002) 'पंचायती राज एवं ग्रामीण विकास योजनाऐं', राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, पृष्ठ5

10. खान, एस. इल्तिजा, (2001), 'गवर्नमेन्ट इन रूरल इण्डिया', एशिया पब्लिकेशन्स हाउस, बम्बई, पृष्ठ 31

11. पंवार, मीनाक्षी, (2017) 'पंचायती राज और ग्रामीण विकास', क्लासिकल पब्लिशिग कम्पनी, पृष्ठ 24-26

12. शर्मा, डॉ के.के., (2010), 'भारत में राज प्रशासन', कालेज बुक डिपो, जयपुर, पृष्ठ 3-4

13. वर्मा, परिपूर्णानन्द, (1999), 'पंचायती राज एक अध्ययन', लोकतंत्र समीक्षा, पृष्ठ 2

14. सरण, परमात्मा, (1984), 'प्राचीन भारत में राजनीतिक विचार एवं संस्थाऐं', मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, पृष्ठ 452

15. राठौड, डॉ मधु,(2017) 'पचायती राज और महिला विकास', पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, पृष्ठ 3

16. राजकुमार,(2000) 'महिला एवं विकास', अर्जुन पब्लिशिग हाउस, नई दिल्ली, पृष्ठ 35

17. गुप्ता, भावना, पंचायती राज और कानून, इशाक पब्लिशिग हाउस, जयपुर, पृष्ठ 68

18. चन्देल, चतुर्वेदी, डॉ धर्मवीर एवं नत्थी लाल, भारत में पंचायती राज सिद्धान्त एवं व्यवहार, आविष्कार पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयपुर, पृष्ठ 9-10

19. व्यास, आशा,(2013) पंचायती राज में महिलाऐं, पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, पृष्ठ 16-17

20. सारस्वत, सिंह, स्वप्निल, डॉ निशान्त,(2010) समाज राजनीति और महिलाऐं, दशा और दिशा , राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, पृष्ठ 129

21. महेश्वरी, श्रीराम, (2013), 'भारत में स्थानीय शासन', लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रकाशन, आगरा, पृष्ठ 17

22. शर्मा, प्रेमनारायण, झां, संजीव कुमार, वाली विनायक, सुषमा विनायक, (2009), 'महिला सशक्तीकरण एवं समग्र विकास' , पृष्ठ 121

23. सिंह, डॉ बमेश्वर, (2001), 'भारत में स्थानीय स्वशासन', राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, पृष्ठ 10

24. कटारिया, डॉ सुरेन्द्र,(2016), ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज, आर.वी.एस.ए. पब्लिशर्स, जयपुर, पृष्ठ 18-19

25. मिश्रा, डॉ महेन्द्र कुमार,(2017), पंचायती राज संस्थाऐं अतीत, वर्तमान और भविष्य, कल्पना प्रकाशन, पृष्ठ 69

26. धोकलिया, आर.पी., (1961), विलेज पंचायत इन उत्तर प्रदेश , इलाहाबाद, पृष्ठ 61

27. मण्डल, अमल,(2007), 'वीमेन इन पंचायती राज इन्स्टीट्यूसन्' , कनिष्का पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, पृष्ठ 45

28. वैंकटरमैया एवं पट्टाभिराम, (1989), 'लोकल गवर्नमेन्ट इन इण्डिया', सलेक्ट रीडिंग एकाउन्ट पब्लिशर्स, नई दिल्ली, पृष्ठ 119

29. ऑस्टिन, ग्रेनविल, (1972), 'द इण्डियन कन्स्टीट्यूशन कार्नर स्टोन आफ नेशन', दिल्ली, आक्सफोर्ड प्रेस, पृष्ठ 34

30. शर्मा, वी.एम., ब्रजभूषण एवं भट्ट, , (2019), 'जिला सरकार अवधारणा, विकास सम्भावना', रावत पब्लिकेशन, जयपुर पृष्ठ 116

31. सिसोदिया, यतीन्द्र सिंह,(2016) पंचायती राज एवं अनुसूचित जाति महिला नेतृत्व, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, पृष्ठ 60

32. अवस्थी एण्ड अवस्थी, (2003), 'भारतीय प्रशासन', लक्ष्मी नारायण अग्रवाल प्रकाशन, आगरा, पृष्ठ 603

33. मोदी, अनिता, (2011), 'महिला सशाक्तीकरण विविध आयाम', वाई किंग बुक्स, जयपुर, पृष्ठ 9

34. शर्मा, रेखा, (2017), ग्रामीण महिलाऐं एवं पंचायती राज, रावत प्रकशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 25

35. शर्मा, डॉ नीरजा, (2015), 'गाँधी चिंतन में लोकतंत्र', आस्था प्रकाशन, जयपुर, पृष्ठ 15

36. त्यागी, डॉ शालिनी, (2006), 'पंचायती राज व्यवस्था में सत्ता शक्ति का विकेन्द्रीकरण', नवजीवन पब्लिकेशन, निवाई (टौंक), पृष्ठ 36

37. गोस्वामी, डॉ रवि, (2017) 'पंचायत राज इन इण्डिया', सिगनेचर बुक्स इन्टरनेशनल, दिल्ली, पृष्ठ 17-18

38. जोशी , आर.पी. एवं मंगलानी, (2010) भारत मे पंचायती राज, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, पृष्ठ 15

39. नारायण, डा. इकबाल, (8 सितम्बर, 1987), 'द कन्सैप्ट आफ पंचायती राज एण्ड ट्रस्ट इन्स्टीट्यूशनल इम्पलीकेशंस इन इण्डिया' (एशियन सर्वे) वोल्यूम नं. 9 , पृष्ठ 459

40. श्रीवास्तव, शिवानन्द, (2009), 'उत्तर प्रदेश पंचायत राज मैन्युउल', हिन्द पब्लिशिग हाउस, इलाहाबाद, पृष्ठ 6

41. मेहता, वी.आर., टू यार्क ए न्यू डेमोक्रेमिक आर्डर मिनिस्ट्री आफ सी.डी. एण्ड कोपरेटिव, नई दिल्ली, पृष्ठ 11

42. अनिल कुमार वद्दीराजू और शगुम मेहरोरा (2014), 'मेकिंग पंचायत अकाउंटेबल', इकनोमिक पोलिटिकल वीकिली , वॉल्यूम। XXXIX, नंबर 37, सितंबर 11-17.

43. बैजू, के.सी. (2014), 'केरल में विकेंद्रीकृत शासन के तहत जनजातीय विकास: मुद्दे और चुनौती', वॉल्यूम- 6. नंबर 1, पृष्ट 11-26

44. बलरामुलु सी.एच. और रविंदर डी. (2008), 'आंध्र प्रदेश में पंचायतों का शासन: पुनरोद्धार की आवश्यकता', लोक प्रशासन के भारतीय जर्नल, वॉल्यूम, नंबर 1, जनवरी-मार्च, पृष्ट 76-90.

45. देवेंद्र बाबू (1999), 'ग्रामीण विकास में पंचायतों की भूमिका: द फील्ड रियलिटी', अखिल भारतीय स्थानीय स्व-सरकार का त्रैमासिक जर्नल, एलएक्सएक्स, नंबर 1-2, जनवरी-जून, पृष्ट- 21 – 26.

46. कुमार सत्यम (2016), 'पंचायती राज संस्थान में राजनीतिक प्रतिनिधित्व: झारखंड के मूल निवासी लोगों का सशक्तिकरण', दलित और आदिवासी सामाजिक कार्य (IJDTSW) के भारतीय जर्नल, खंड 2, नंबर 3 नंबर 3, जून, पृष्ट -30-37.

47. कुंज बिहारी नायक (2014), 'भारत में नई पंचायती राज प्रणाली', ग्रामीण विकास एक समीक्षा के लिए बॉटम-अप दृष्टिकोण की एजेंसी के रूप में, बिष्णु सी. बारिक और उमेश सी. साहू (संस्करण), पंचायती राज संस्थान और बहिष्कृत, जयपुर के समावेश पर ग्रामीण विकास कथाएँ; रावत प्रकाशन, पृष्ट- 213-243

48. माही पाल (2015), 'आंध्र प्रदेश पंचायती राज अधिनियम 1994', माही पाल , राज्य पंचायती अधिनियम - एक महत्वपूर्ण समीक्षा; दिल्ली; वाणी-स्वैच्छिक एक्शन नेटवर्क इंडिया, पृष्ट 3-16

49. माही पाल (2004), 'राज शासन से लेकर स्वराज शासन की प्रगति, प्रदर्शन और परिप्रेक्ष्य', कुरुक्षेत्र, वॉल्यूम, 52, नंबर 10, अगस्त, पृष्ट-4-10.

50. मोहम्मद ओवास , तौसिब आलम और मो. आसिफ, (2009), 'आदिवासी महिलाओं का सामाजिक-आर्थिक सशक्तीकरण: एक भारतीय परिप्रेक्ष्य', ग्रामीण अध्ययन का अंतर्राष्ट्रीय जर्नल, वॉल्यूम-16, नंबर 1, पृष्ट 1-11

51. नारायण डी. (2018), 'स्थानीय शासन क्षमता के बिना पंचायती राज के दस साल का निर्माण', आर्थिक और राजनीतिक साप्ताहिक', वॉल्यूम- XL, No.26, 25 जून –जुलाई 1, पृष्ट-2822 - 2832

52. नीलिमा देशमुख, (2013), 'अनुसूचित क्षेत्रों के लिए पंचायत विस्तार (पेसा) - महाराष्ट्र राज्य के गढ़चिरौली जिले के संदर्भ में भारतीय संदर्भ में सफल जनजातीय विकास के लिए एक प्रभावी उपकरण', अनुसंधान की समीक्षा, वॉल्यूम .2, नं .9, जून, पृष्ट-3-4

53. परना मित्रा (2018), 'भारत में अनुसूचित जनजातियों के बीच महिलाओं की स्थिति', द जर्नल ऑफ़ सोशियो-इकोनॉमिक्स, वॉल्यूम- 37, नंबर 3, जून.

54. प्रत्यसून पटनायक (2015), 'उड़ीसा की पंचायतों में कमजोर वर्ग की भागीदारी और जवाबदेही की सकारात्मक कार्रवाई और प्रतिनिधित्व', आर्थिक और राजनीतिक साप्ताहिक, वॉल्यूम- एक्सएल, नंबर 44 और 45 अक्टूबर 29 - 4 नवंबर.

55. पसायत चित्रसेन (2014), 'आदिवासी महिलाओं का सशक्तीकरण', त्रिपाठी एस. एन. , भारत में आदिवासी महिलाएँ, नई दिल्ली; डोमिनेंट पब्लिशर्स, पृष्ट- 92

56. योजना आयोग (2000), अनुसूचित क्षेत्रों के लिए पंचायत विस्तार की स्थिति पर एक रिपोर्ट (PESA) अधिनियम 1996 आंध्र प्रदेश, उड़ीसा, झारखंड, गुजरात और छत्तीसगढ़ में, भारत सरकार, नई दिल्ली, पृष्ट .45, 79 -80

57. रत्नावली (2016), 'दक्षिण गुजरात के जनजातीय क्षेत्रों में स्वशासन में विकेंद्रीकरण और मुद्दे', वर्किंग पेपर नंबर 4, सेंटर फॉर सोशल स्टडीज, गुजरात.

58. सरोज कुमार दास (2011), 'पीईएसए - अनुरूपता और परिचालन मुद्दे: उड़ीसा का एक केस स्टडी', उड़ीसा समीक्षा, फरवरी-मार्च, पृष्ट- 41-45

59. दूसरा प्रशासनिक सुधार आयोग सातवीं रिपोर्ट (2008) संघर्ष समाधान के लिए क्षमता निर्माण, भारत सरकार फरवरी 2008, भारत सरकार, पृष्ट 88-91.

60. सोढ़ी जे. एस. और रामानुजम एम. एस. (2016), 'पंचायती राज प्रणाली: भारत के पांच राज्यों में एक अध्ययन', औद्योगिक संबंध के भारतीय जर्नल, वॉल्यूम- 42, नंबर 1, जुलाई, पृष्ट-1-41

61. डिसूजा, पी. आर, जोया हसन, ई. श्रीधरन और आर. सुदर्शन. (2012), 'विकेंद्रीकरण और स्थानीय सरकार: भारत में लोकतंत्र की दूसरी हवा' इकनोमिक एंड पोलिटिकल वीकली, मुंबई

62. पाई , एस (2012), 'नई पंचायतों में प्रधान: मेरठ जिले से फील्ड नोट्स,' आर्थिक और राजनीतिक साप्ताहिक, 23 (18): 1009-10.

63. सत्यजीत सिंह और प्रदीप शर्मा, (2018), 'विकेंद्रीकरण संस्थानों और ग्रामीण भारत में राजनीति', नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस

अध्याय-तृतीय

पंचायती राज संस्थाऐ: ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य से सम्बंधित कानून एवं संवैधानिक प्रावधान

पंचायती राज एक परिचय

पंचायती राज की संस्था भारत की सभ्यता जितनी ही पुरानी है। ग्राम पंचायतें हमेशा से ही भारतीय सामाजिक ताने-बाने का हिस्सा रही हैं। गांव में पांच निर्वाचित वरिष्ठों की अवधारणा, समुदाय के विवाद के मामलों को निपटाने के लिए संगठन की स्व-सरकार का यह रूप दुनिया में कहीं और नहीं रहा है। वास्तव में, प्रत्येक जाति के लिए पंचायतें थीं जो जाति के नियम और आचार संहिता लागू करती थीं। जबकि राजा और शासक बदल जाते थे परन्तु गाँव और पंचायतें बुनियादी अपरिवर्तनीय इकाइयों के रूप में जारी रहीं।[1] पंचायती राज का प्रयोग लोकतंत्र को दृढ़ और गहरी जड़ें प्रदान करने और लोकतांत्रिक ढांचे को व्यापक आधार प्रदान करने के लिए किया गया है ताकि आम आदमी को अपने नागरिक और राजनीतिक मामलों के संचालन में वास्तविक भागीदार बनाया जा सके। पंचायती राज संस्थानों (PRI) को सामाजिक-आर्थिक संरचनाओं का एक महत्वपूर्ण पहलू माना गया है। पंचायती राज संस्थानों से अपेक्षा की जाती है कि वह ग्रामीण हितों का ध्यान रखे और भारतीय ग्रामीण समाज के विभिन्न वर्गों की आकांक्षाओं को पूरा करे। इसलिए लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण केवल शक्तियों की प्राप्ति तक सीमित नहीं रही है। इसमें जिम्मेदारी का अवमूल्यन भी शामिल होना चाहिए। (देसाई 2000) ने प्रस्तुत अध्याय में पंचायतों के इतिहास, उद्गम तथा विभिन्न काल क्रम मे पंचायतयों के विकास पर प्रकाश डाला गया है। इसके अतिरिक्त संविधान मे उल्लेखित प्रावधानो का उल्लेख करते हुए बताया गया है कि

संविधान के नीति निर्देशक के तत्वो का हिस्सा है । केन्द्र स्तर पर गठित विभिन्न समितियों जैसे बलवन्त राय मेहता समिति, अशोक मेहता समिति, जी.वी.के.राव समिति, एल.एम.सिंघवी समिति व थुंगन समिति की सिफारिशो का उल्लेख शोध अध्याय में प्रस्तुत किया गया है।[2]

पंचायती राज: एक संक्षिप्त ऐतिहासिक विवरण

इतिहास बताता है कि भारतीय उपमहाद्वीप में सदियों से यहाँ स्थानीय स्वशासन का अस्तित्व रहा है। पंचायती राज प्रणाली के विकास को तीन अलग-अलग काल खंडो से जाना जा सकता है:

• पूर्व-औपनिवेशिक काल

• औपनिवेशिक युग

• उत्तर-औपनिवेशिक काल

पूर्व-औपनिवेशिक काल

पंचायती राज की अवधारणा- गाँव हमेशा सामाजिक व आर्थिक जीवन की महत्वपूर्ण इकाई के साथ-साथ अतीत से प्रशासन की महत्वपूर्ण संस्था रहा है। वैदिक साहित्य में सभा एवं समितियों का उल्लेख हुआ है। चौथी व पांचवी शताब्दी पूर्व के जातक कहानियों में गाँव का सुन्दर चित्रण करती है। ग्रामीण क्षत्रो में विदमान शासन के लिये ये सभा समितियां लोगो की भलाई के लिए कार्य करती थी। आर्य जाति इतिहास के प्रवेश करने से पूर्व भारत में उन्नत एक शासन की उन्नत व्यवस्था मौजूद थी इसका परिचय सिंधु घाटी की सभ्यता में भी देखा गया हैं। इस सभ्यता का क्षेत्र बहुत व्यापक था और इसके प्रधान नगर उन स्थानों पर स्थित थे

जहाँ वर्तमान समय में मोहनजोदडों और हडप्पा में विद्यमान हैं। यहाँ एक व्यवस्थित प्रशासन था। शाब्दिक दृष्टि से पचंयाती राज शब्द हिन्दी भाषा के दो पृथक-पृथक शब्दो "पञ्च " और "राज" से मिलकर बना है, जिनका संयुक्त तात्पर्य पाँच जन प्रतिनिधियो के समूह के शासन से है।[3]

वैदिक काल:- पृथ्वी पर जब से मानव ने सामुहिक रूप में रहना प्रारम्भ किया, तभी से अपनी सुख सविधा के विभिन्न आयामो पर विचार करने लगा। पचंयाती राज की परिकल्पना भी इसी परिवर्तन का परिष्कृत रूप है, जो प्राचीन काल से ही विद्यमान रही है। इसने अपने अस्तित्व को न केवल कायम रखा है, अपितु समय-समय पर सार्थक दिशा मे परिवर्तन भी किया है। स्थानीय शासन को मानव की मनोवैज्ञानिक और व्यावहारिक आवश्यकता के रूप में रेखांकित किया है। मानव की सदैव यह इच्छा रही है कि जो भी सरकार हो, वह उसके स्वयं के द्वारा चुनी हुई एवं अच्छी सरकार होनी चाहिए। मानव मन की इच्छा अति प्राचीन काल से स्थानीय संस्थाओ का विकास अन्तर्निहित रही है। वर्तमान समय में पंचायती राज व्यवस्था स्वशासन का अभिन्न अंग बन चुकी है। प्राचीन भारत में पंचायत शब्द को संस्कृत भाषा के "पंचायतन" से परिभाषित किया गया है। जिसका अर्थ होता है "पाँच व्यक्तियों का समूह" से है। सभ्यता के विकास के आधार पर अनुमान लगाया जा सकता है कि भारत के लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया की शुरूआत ई.पू. 2000 वर्ष पहले हो चुकी थी। सिन्धु घाटी सभ्यता में मोहनजोदडों में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण व्यवस्था का अनुमान वहाँ की नगरीय व्यवस्था से लगाया जा सकता है। वैदिक साहित्य में ग्रामीण स्थानीय स्वशासन की संगठित व्यवस्था के कुछ संदर्भ यत्र तत्र मिलते है। उस समय प्रशासन की सबसे छोटी इकाई ग्राम थी। जिसका मुखिया ग्रामीणी कहलाता था। ग्रामीणी ग्राम की श्रेष्ठ एवं बुजुर्गो से सलाह कर अपना कार्य करता था। ऋग्वदे मे सभा, समिति एव विदथ नामक संस्थाओ का उल्लेख है, जिनमे

आमजन की प्रभावी भागीदारी होती थी। इन संस्थानों को निर्णय निर्माण मे महतोव्पूर्ण अधिकार प्राप्त थ। ऋग्वेद के सूक्त (9/92/6) में एक सभा का उल्लेख मिलता है। उस समय कृषि एवं पशुपालन प्रमुख व्यवसाय थे। इस कारण ग्रामो का नगरो की अपेक्षा अधिक महत्व था और यातायात की कठिनाई के कारण प्रत्येक ग्राम स्वावलम्बी होता था। अथर्ववेद में एक श्लोक मिलता है -

"ये ग्रामा वदरण्यं या सभा अधिथूम्याम।

ये संग्रामाः समितियस्तेषु चारू वेदम् ते।।" (7/12/1)

अर्थात् पृथ्वी ग्रामो, वनो व सभाओ मे हम सुन्दर वेद युक्त वाणी का प्रयोग करे । मनु ने अपने साहित्य में ग्रामा (गाँव) पुरा (टाउन) व नागरा (शहर) तीन आबादी होने का उल्लेख किया।[4]

महाकाव्य काल:- रामायण तथा महाभारत में सभा/छोटे राज्यों का उल्लेख मिलता है। रामायण मे जनपदों को ग्रामीण गणराज्यो के संघो के रूप में जाना जाता है। स्मृति काल मे मनुस्मृति में उल्लेख है कि राष्ट्र मे राजा प्रजा पर शासन करता है। "ग्रामिक" ग्रामीण शासन के लिए उत्तरदायी होता था। इसका प्रमुख कार्य ग्रामवासियो से कर एकत्रित करना तथा ग्राम में शान्ति एवं व्यवस्था बनाए रखना था। मनु ने प्रशासन की सबसे छोटी इकाई ग्राम का माना एव क्रमश 1 ग्राम, 20 ग्राम, 100 ग्राम, 1000 ग्रामां के उत्तरोत्तर सगंठनो, के अधिकारी को उच्च सगंठन के अधिकारी के प्रति उत्तरदायी ठहराया गया है। महाजन पद काल एव बौद्ध काल:- महाजन पद काल के गणराज्यों मे ग्राम पचंयाते भी होती थी, जहां राजतत्रंत्मक राज्यो की ग्राम पचंयतो के समान ही अपना कार्य करती थी। ये कृषि व्यापार उद्योग आदि के विकास का कार्य करती थी। बौद्ध काल में ग्राम की सभा के प्रधान को ग्रामीणी, ग्रामिक या

ग्राम भोजक के नाम से पुकारते थे। ग्रामवासी जिसका चुनाव करते थे। ग्राम सभा में ग्राम वृद्ध के रूप में ग्राम के मुखिया लोग हिस्सा लिया करते थे। लेकिन उनके अलावा गाँव के अधिकाश व्यक्ति भी भाग लिया करते थे। ग्राम भोजक के कार्यो के विरूद्ध राजा के पास अपील की जा सकती थी। राजा को आवश्यकता ग्राम शासन में संशोधन करने तथा ग्राम भोजक को अपदस्थ करने का अधिकार था। कृषि और व्यापार पर भी ग्राम भोजक के माध्यम से विशेष ध्यान रखा जाता था। खेतो पर किसानों का अधिकार था। किसान ग्राम पंचायत की अनुमति के बिना अपने खेत दूसरे को नहीं बेच सकता था।

ग्राम स्तर पर स्थानीय स्वशासन की एक संस्था के रूप में पंचायत की उत्पत्ति प्राचीन भारत में हुई थी। अंग्रेजों के आने से बहुत पहले, भारत में ग्राम समुदायों और सरकारों के रूप में स्थानीय सरकार मौजूद थी। 1830 में चार्ल्स मेटकाफ ने कहा, 'स्थानीय स्वशासन व्यवस्था भारत की अनूठी राजनीतिक व्ययवस्था रही है जहाँ वंशवाद की कोई जगह नहीं रही है'।

भारत में हिंदू, पठान, मुगल, मराठा, सिख, अंग्रेज, सभी बारी-बारी से अपना शासन किया हैं, लेकिन गांव के समुदाय तथा प्रशासन एक समान रहा हैं' (माहेश्वरी 2010) एक प्रकार की ग्राम सभा या गाँव के निवासियों का संघ, जिसमें गाँव के बुजुर्ग, पंचायत या ग्राम सभा शामिल होते हैं, प्रशासनिक और न्यायिक कार्य करते हैं। कभी-कभी, ग्राम सभाओं या पंचायतों को इन निकायों के माध्यम से अपने स्वयं के जीवन को विनियमित करने वाले गांवों में से चुना गया था। हम मनुस्मृति (मनु संहिता), कौटिल्य के अर्थशास्त्र (400B.C) और महाभारत में ग्राम सभाओं के संदर्भ पाते हैं। महाभारत के शांति पर्व में पंचायत संस्कार नाम की एक परम्परा भी बताई गई है। इसमें आम लोग शामिल थे और इसलिए उन्हें जन संसद कहा जाता था। वाल्मीकि की रामायण उस गणपद की बात करती है जो ग्राम गणराज्यों के

संघ का था। केवल वही व्यक्ति इसके सदस्य बन सकते हैं जिनके दिल में लोगों का सामान्य कल्याण था। सदस्यता को दुर्जन या अभद्र व्यक्तियों से वंचित कर दिया गया था। ग्रामीण के शासन व्यवस्था का उल्लेख शुक्रनिती (सुकराचार्य के नीतिसार) में किया भी गया है। वास्तव में, एक या दूसरे रूप में ग्राम पंचायतों की संस्था ने लगभग पूरे भारत में और उसके लंबे इतिहास में निर्वाध रूप से जारी रखी है। (कश्यप 2018) ग्रामीण परिषदों की मुख्य जिम्मेदारियाँ गाँव की रक्षा, विवादों का निपटारा, सरकार के लिए राजस्व का संग्रह, सार्वजनिक उपयोगिता के लिए कार्यों का संगठन एक ट्रस्टी के रूप में कार्य करना था। न्यायिक समारोह का ग्राम सभा की सहायता से संचालन शाही अधिकारियों द्वारा किया जाता था। कुछ मामलों में ग्राम विधान सभा अकेले निर्णय सुनाती है और सजा सुनाती है (मजूमदार 1948) भारत के सुदूर दक्षिण में सबसे कम प्रशासनिक इकाइयाँ कुर्रम (गाँवों का संघ) और ग्राम (गाँव) थीं, जिनमें से प्रत्येक में खुद का मुखिया होता था, जिसे महासभा जैसी विधानसभाओं द्वारा सहायता प्रदान की जाती थी। मुगलकाल में, एक कोतवाल या नगर गवर्नर था जो मजिस्ट्रेट, पुलिस और राजकोषीय मामलों की देखभाल करता था। उसके पास बहुत शक्ति और अधिकार था। उन्होंने व्यापारियों के लिए कुछ सरल नगरपालिका सेवाएं बनाए रखीं जिनकी आय पर यह आय निर्भर थी (रामचंद्रन 2006) मध्ययुगीन काल में शहरों और कस्बों में कई राजनीतिक परिवर्तनों के बावजूद, गांवों में पंचायतों की व्यवस्था जारी नहीं रही। यद्यपि मुगलों के अधीन उनकी न्यायिक शक्तियां परिलक्षित थीं, स्थानीय मामलों को ऊपर से अनियमित बना दिया गया था और ग्राम अधिकारी और नौकर मुख्य रूप से पंचायतों के लिए जवाबदेह थे (मैथ्यू 2010)

औपनिवेशिक काल

प्राचीन काल की स्थानीय सरकार इंग्लैंड में अपने अनुभव के आधार पर ब्रिटिशों द्वारा लाई गई चीजों से अलग थी, जो कि वास्तविक मतदाता की इकाइयों के रूप में जिम्मेदार थी और उनके मतदाताओं के प्रति जवाबदेह थी। यह अंग्रेजों द्वारा महसूस किया गया था कि भारत की संस्कृति तक हर चीज में विविधता से भरी थी। लॉर्ड लॉरेंस का संकल्प था कि देश के व्यवसाय को जितना संभव हो सके उतना लोगों के हाथों में छोड़ दिया जाए (रामचंद्रन 2006) 1824 में, मद्रास के गवर्नर थॉमस मुनरो ने मद्रास के गांव में नियमित पुलिस में शामिल करने के प्रस्ताव पर आपत्ति जताई थी। इससे पहले, कलकत्ता, बॉम्बे और मद्रास के प्रेसीडेंसी कस्बों में, जस्टिस ऑफ़ पीस को भूमि और घरों पर कर लगाने और सड़कों की सफाई, पुलिस और रखरखाव के लिए नियुक्त किया गया था। 1845 के अधिनियम XI द्वारा, प्रशासनिक शक्ति को कंजरवेंसी बोर्ड में निहित किया गया था जिसमें दो यूरोपीय और तीन भारतीय न्यायधीश शामिल थे, जिनमें वरिष्ठ पुलिस मजिस्ट्रेट थे। 1856 में, अधिनियम XIV कलकत्ता, मद्रास और बॉम्बे शहरों के संरक्षण के लिए बनाया गया था, इनमें से प्रत्येक शहर में तीन आयुक्त थे। कलकत्ता में न्यायलयो को बहुत व्यापक अधिकार दिए गए थे। बॉम्बे में एक विशेष नियंत्रक लेखा नियुक्त किया गया। शहर के बकाया को वसूलने के लिए स्थानीय प्राधिकारी को शक्ति दी गई थी, जबकि शहर को पानी के निर्माण की लागत का हिस्सा देना था। मद्रास शहर को प्रत्येक वार्ड की देखभाल के लिए नियुक्त किए गए चार पार्षदों के साथ आठ वार्डों में विभाजित किया गया था । यह 1870 में था कि वायसराय, लॉर्ड मेयो को अपनी परिषद द्वारा सत्ता के विकेंद्रीकरण के लिए लोगों की मांगों को पूरा करने में प्रशासनिक दक्षता लाने और मौजूदा शाही संसाधनों के वित्त को जोड़ने के लिए एक प्रस्ताव पारित किया गया था, जिसके लिए कोई विरोध नहीं करेगा। देश की बढ़ती जरूरतों (वेंकटरांगैया और

पट्टाभिराम 1969) लेकिन, सच्चे अर्थों में, लॉर्ड रिपन (1882) सबसे पहले औपनिवेशिक शासन के दौरान स्थानीय स्वशासन के विकेंद्रीकरण की शुरुआत की। उनका संकल्प था की स्थानीय स्वशासी निकायों के एक बड़े नेटवर्क की स्थापना के माध्यम से प्रशासन के विकेंद्रीकरण और नियंत्रण स्थापित करने लिए था। फिर भी, रिपन की योजनाएं अधिक सफल नहीं हो सकीं। इसके अलावा, समितियों, आयोगों और अधिनियमों के रूप में आगे ब्रिटिश शासन द्वारा काफी प्रयास किये गये । सन 1907 में, सी. ई.एच. हॉबहाउस की अध्यक्षता ब्रिटिश सरकार ने विकेंद्रीकरण पर रॉयल कमीशन का गठन किया, जिसने ग्रामीण स्तर पर पंचायतों के महत्व को पहचाना। इसने सिफारिश की, 'यह विकेन्द्रीकरण के हितों में सबसे अधिक वांछनीय है, प्रशासन के स्थानीय कार्यों के साथ लोगों को जोड़ने के लिए कि स्थानीय ग्राम मामलों के प्रशासन के लिए ग्राम पंचायतों के गठन और विकास का प्रयास किया जाना चाहिए' (मालवीय 1956) भले ही सरकार ने सिफारिश स्वीकार कर ली और पंचायतों के गठन के लिए आदेश दिया, लेकिन यह कुशल संस्थानों के रूप में प्रदर्शन करने में विफल रहा। वर्ष 1909 में, लाहौर में कांग्रेस के चौबीसवें सत्र ने एक संकल्प अपनाया कि सरकार जल्द से जल्द इसके लिये कदम उठाए। वर्ष 1915 में, प्रायोगिक आधार पर चयनित क्षेत्रों में प्रांतीय सरकारों द्वारा स्थानीय स्व-सरकार का गठन करने के लिए एक प्रस्ताव पारित किया गया था। इसने पंचायतो को करों को लागू करने की शक्ति के साथ पंचायतों को सशक्त बनाने की सिफारिश की। कुछ अन्य सिफारिशें भी की गईं लेकिन वह लागू नहीं हो सका । फिर 1918 का भारत सरकार का प्रस्ताव आया, जिसमें गाँव की आबादी की प्रगति की दर में तेजी लाने के लिए कानून बनाने पर जोर दिया गया। इसने सिफारिश की कि नगरपालिका और ग्रामीण बोर्डों के अलावा कानून को अलग किया गया । ब्रिटिश संसद ने एक अधिनियम अधिनियम, 1919 पारित किया, जिसके तहत स्थानीय स्वशासन को प्रांतीय हस्तांतरित

विषयों में शामिल किया गया। इस अधिनियम में स्थानीय स्वशासन को पूरी तरह से प्रतिनिधित्वा देने सम्बंधित सुधार ने सुझाव दिया था और जहां तक संभव हो, बाहर के नियंत्रण के लिए उन्हें पूर्ण स्वतंत्रता रखना था। (खन्ना 1972)

इसके बाद, 1919 से 1925 तक ग्राम पंचायत अधिकारों की स्थापना और स्वतंत्रता प्राप्ति तक कई अधिनियम पारित किए गए, लेकिन ये सभी केवल कागजों तक ही सीमित थे, क्योंकि प्रांत अपनी शक्तियों के साथ बंटवारा नहीं करना चाहते थे। 1935 में, ब्रिटिश सरकार द्वारा भारत सरकार अधिनियम, 1935 पारित किया गया था। जिसे 1937 में मंत्रयाली पद्धिति से जोड़ा गया और एक स्वतंत्र कार्यालय की स्थापना की गयी। इस अधिनियम ने स्थानीय निकायों को वास्तव में अपने प्रतिनिधि बनाने के लिए कानून बनाया। (मजूमदार और सिंह 2007) लेकिन, एक बार फिर, द्वितीय विश्व युद्ध शुरू होने से पंचायती व्ययवस्था से सम्बंधित कानून अधर में लटक गये। ब्रिटिश राज के समय सरकारी निरंकुशता विधमान थी। जिस कारण ग्राम पंचायतों को इस अवधि के दौरान पूरी तरह से उपेक्षित महसूस करना पड़ा। स्वतंत्रता-पूर्व की अवधि तक, स्थानीय स्व-सरकारें वास्तव में कोई मान्य प्रतिनिधि नहीं था और न ही उन्हें कोई कानूनी अधिकार नहीं सौंपा गया था। फिर भी, अंग्रेजों द्वारा निर्धारित प्रारूप भारत में पंचायती राज को आकार देने में बहुत सहायक रहा।

उत्तर-औपनिवेशिक काल

ग्रामीण स्थानीय स्वशासन के विकास के संबंध में ब्रिटिश सरकार और नेताओं और नागरिको पर वर्षों से बहुत महत्वपूर्ण प्रभाव महात्मा गांधी का रहा है। अपने लेखन और भाषणों में, उन्होंने लोगों और सरकार का ध्यान आकर्षित किया और गाँव को पंचायत के साथ आत्मनिर्भर इकाई के रूप में गाँव के पुनर्निर्माण की तत्काल आवश्यकता के बीच रचनात्मक

गतिविधियों को प्रोत्साहित करने और समर्थन करने में केंद्रीय भूमिका निभाई। उनके अनुसार, 'पंचायत की शक्ति अधिक से अधिक, सच्चे लोकतंत्र के रूप में लोगों के लिए बेहतर' प्रत्येक गाँव के लोगों द्वारा नीचे से काम करना होगा (खन्ना 2004) गाँव का स्वराज गाँधी की दृष्टि का ही प्रतिरूप था। स्वतंत्र भारत में यह संसदीय लोकतंत्र के लिए और सीमित उत्पादन और संसाधनों, उपभोग और प्रौद्योगिकियों की सीमित क्षमता के कारण शासन में व्यापक बदलाव उस समय संभव नहीं थे । अंबेडकर ने इस सुझाव का विरोध किया, गाँव के भारत को अलग तरह से देखते हुए और यह मानते हुए कि भविष्य का रास्ता एक संवैधानिक लोकतंत्र में है। और इसे प्रभावित करने का एकमात्र तरीका राजनीति के संसदीय मॉडल को अपनाना था वह पंचायती राज संस्थाओं की शुरुआत के विरोध में था। । संविधान सभा की ड्राफ्ट संविधान पर की बैठको में बोलते हुए, उन्होंने उन लोगों की कड़ी आलोचना की। उन्होंने गाँवों को एक गणराज्य के रूप में उल्लेखित किया और तर्क दिया कि, लेकिन आंबेडकर का मानना था की कि ये गाँव जातिवाद और सामाजिक कुरीतियों की वजह से गणतंत्र भारत के विनाश के रूप में रहे हैं। गाँव क्या है, लेकिन स्थानीयता का एक जातिगत, अज्ञानता, संकीर्णता और सांप्रदायिकता का एक खंड क्षेत्र मात्र है? हालाँकि, उन्होंने बाद में अपने विचार से समझौता कर लिया था। तत्पश्चात मूल भारतीय संविधान के लक्ष्यों में से एक के रूप में ग्राम स्तर पर पंचायतों की स्थापना की गई थी। संवैधानिक प्रावधान में कहा गया है: 'राज्य ग्राम पंचायतों को व्यवस्थित करने के लिए कदम उठाएंगे और उन्हें ऐसी शक्तियां और अधिकार प्रदान करेंगे जो उन्हें स्थानीय स्वशासन की इकाइयों के रूप में कार्य करने के लिए आवश्यक हो' (अनुच्छेद 40, भाग- IV- निर्देश में राज्य नीति के सिद्धांत) इसलिए स्वतंत्रता के प्रारंभिक वर्षों में सभी राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में विभिन्न कानूनों के माध्यम से ग्राम स्तर पर पंचायतों को स्थापित करने के प्रयास किए गए थे।[5]

स्वतंत्रता के बाद के युग में पंचायती राज की औपचारिक शुरुआत राष्ट्रव्यापी सामुदायिक विकास कार्यक्रम (1952) के शुभारंभ से पता लगाया जा सकता है, जब विकास की प्रक्रिया में स्थानीय समुदायों को शामिल करने के लिए एक प्रभावी संस्थागत तंत्र की आवश्यकता महसूस की गई थी। सामुदायिक विकास की दृष्टि में सामाजिक सद्भाव, आर्थिक, विकास, शिक्षा, स्वास्थ्य, और मनोरंजन सब कुछ शामिल था। सामुदायिक विकास कार्यक्रम (सीडीपी) ने सामंजस्यपूर्ण समुदाय में सभी को शामिल करके और संघर्षों का अंत करके राजनीतिक शांति का वादा किया। इसने विकास की इच्छा को बढ़ाकर और आम भागीदारी (बाजपेयी 1997) की पुनरावृत्ति करके आर्थिक समृद्धि का वादा किया। लेकिन कार्यक्रम की गिरावट अचानक बढ़ रही थी और एक दशक के बाद और सामुदायिक विकास कार्यक्रम में बहुत विश्वास और भारी निवेश के बाद, जोर कृषि को आधुनिक बनाने, ग्रामीण संस्थानों, पंचायतों, सहकारी और भूमि सुधारों के निर्माण में बदल गया। सामुदायिक विकास कार्यक्रम सीडीपी को चालू रखने में खाद्यान्न की बढ़ती कमी एक महत्वपूर्ण मुद्दा था। इस प्रक्रिया के तहत लगभग पचपन सामुदायिक परियोजनाएं शुरू की गईं। प्रत्येक विकास खंड में 100-120 गाँव और तीन लाख की आबादी शामिल थी। प्रत्येक ब्लॉक में कृषि, पशुपालन, सहयोग और ग्राम स्तर के श्रमिकों के तकनीकी अधिकारी था। तीन साल के लिए ब्लॉक का विचार महिलाओं के समूहों को कृषि सलाह, सामाजिक कल्याण, और सामान्य ग्रामीण उत्थान की गतिविधियों से लेकर साक्षरता और शिक्षा की एक श्रेणी में उनके विकास में लोगों की भागीदारी को बढ़ावा देना था। (रामचंद्रन 1996) सामुदायिक विकास कार्यक्रम मुख्य रूप से लोगों की भागीदारी की कमी के कारण अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में विफल रहा।[6]

बलवंत राय मेहता समिति

वास्तव में, पंचायती राज पर नीति बलवंतराय मेहता समिति (1957) की सिफारिशों से निकली, जिसमें कहा गया था कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम (सीडीपी) और राष्ट्रीय विस्तार सेवा (एनईएस)लोगों की पहल को बढ़ावा देना था । इसलिए स्थानीय स्तर पर चुने हुए प्रतिनिधियों को ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के प्रशासन को सौंपने के लिए मेहता समिति की सिफारिशों में आर्थिक विकास की चिंता पर जोर दिया गया था। इन संस्थानों की शुरुआत के पीछे के राजनीतिक और आर्थिक उद्देश्य राजनीतिक नेताओं के बयानों से स्पष्ट हो सकते हैं, जिनका उपयोग योजना के उद्घाटन के समय किया गया था। जवाहरलाल नेहरू ने 1959 में जब गांधी जयंती पर राजस्थान के नागौर जिले में पंचायती राज की शुरुआत की, तो कहा, "गाँव का लाखों लोगों का उत्थान करना कोई साधारण काम नहीं है। धीमी प्रगति का कारण आधिकारिक मशीनरी पर हमारी निर्भरता है। लेकिन यह काम तभी किया जा सकता है, जब जनता अपने हाथों में जिम्मेदारी को स्वंम ले। प्रभावी शक्ति उन्हें सौंपनी होगी"। (नारायण 1996) भारत के जाने-माने नेताओं में से एक, जयप्रकाश नारायण ने कहा कि 'यह बहुत संतोष की बात है कि हमारे देश में पंचायती राज के आकार में भागीदारी लोकतंत्र की नींव रखने के लिए एक शुरुआत की गई है, लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण बलवंतराय मेहता समिति ने लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की योजना की स्थापना की सिफारिश की, जिसे अंततः पंचायती राज वयवस्था के रूप में जाना गया। इसके द्वारा की गई विशिष्ट सिफारिशें थीं ग्रामीण स्तर पर त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था-ग्राम पंचायत की स्थापना, ब्लॉक स्तर पर पंचायत समिति, जिला स्तर पर जिला परिषद के गठन की सिफारिश की।(मेहता 1989)

पंचायत समिति कार्यदायी संस्था होनी चाहिए जबकि जिला परिषद सलाहकार, समन्वय और पर्यवेक्षी संस्था होनी चाहिए।

- सभी योजना और विकासात्मक गतिविधियों को इन निकायों को सौंपा जाना चाहिए।
- इन संस्थानों को सत्ता और जिम्मेदारी का वास्तविक हस्तांतरण होना चाहिए।
- सभी निकायों के पास पर्याप्त संसाधन हैं ताकि वे अपनी जिम्मेदारियों का सही ढंग से निर्वहन कर सकें।

इन एजेंसियों के माध्यम से सभी सामाजिक और आर्थिक विकास कार्यक्रमों को सूचीबद्ध किया गया। शक्ति के विघटन और फैलाव को प्रभावित करने के लिए एक प्रणाली विकसित की जानी चाहिए। स्टडी टीम की रिपोर्ट में कहा गया की , 'ग्रामीण विकास जिम्मेदारी और शक्ति के बिना प्रगति नहीं कर सकता। सामुदायिक विकास तभी वास्तविक हो सकता है जब समुदाय अपनी समस्याओं को अच्छी तरह से समझता हो। अपनी जिम्मेदारियों का एहसास करता हो अपने चुने हुए प्रतिनिधियों के माध्यम से आवश्यक शक्ति का उपयोग करता हो। स्थानीय प्रशासन पर निरंतर और बुद्धिमान सतर्कता बनाए रखता हो। इस उद्देश्य के साथ, हम वैधानिक ऐच्छिक स्थानीय निकायों की शीघ्र स्थापना और उन्हें आवश्यक संसाधनों, शक्ति और अधिकार के प्रति समर्पण की सलाह देते हैं। इन सिफारिशों को जनवरी 1958 में राष्ट्रीय विकास परिषद द्वारा स्वीकार किया गया था। राजस्थान में नागौर जिले में 2 अक्टूबर 1959 को शुरू की गई पंचायती राज संस्था की कल्पना एक ऐसे साधन के रूप में की गई जिसके माध्यम से ग्रामीण समाज के सभी वर्गों के लोग और सामूहिक रूप से काम करने में सक्षम होंगे। देश के आम जनता का शासन में भागीदारी उनकी समस्याओं को हल करने के लिए यह एक ऐतीहासिक कदम था । भारत के पहले प्रधान मंत्री जवाहरलाल नेहरू

ने राजस्थान में पंचायती राज का उद्घाटन करते हुए कहा था, 'हमारी पंचायतों में सभी को समान माना जाना चाहिए और पुरुषों / महिलाओं और उच्च / निम्न के बीच कोई भेदभाव नहीं होना चाहिए' (त्यागी और सिन्हा 2011)। पंचायती राज को 1959 में पेश किए जाने के समय दूरगामी महत्व का राजनीतिक और प्रशासनिक नवाचार माना जाता है। इसे लोकप्रिय भागीदारी के एक तंत्र के रूप में दर्शाया गया था। पंचायती राज निकायों से ग्रामीण इलाकों में राजनीतिक चेतना जगाने और ग्रामीण भारत में लोकतांत्रिक प्रक्रिया को लागू करने की अपेक्षा की गई थी। हालाँकि, पंचायती राज ने अपनी स्थापना के बाद से कई उतार-चढ़ाव का अनुभव किया है। 1965 के बाद, 1970 के दशक के अंत तक पंचायतों में ठहराव और गिरावट आई।[7]

भारत में पंचायती राज के लिये पहली बार चुनाव 1960 में करवाये गये थे। पंचायती राज में महिला वर्ग को शामिल करने की पहल बलबन्त राय मेहता समिति ने की थी। राज्य के रूप में राजस्थान सरकार ने 1963 मे सादिक अली की अध्यक्षता में एक समिति गठित की, जिसका उद्देष्य पंचायती राज की कमियां उजागर कर सुधार हेतु सुझाव देना रहा था। समिति ने 1964 अपनी रिपोर्ट पेश की। फिर राजस्थान सरकार के द्वारा गिरधारी व्यास की अध्यक्षता में सन् 1973 में उच्च स्तरीय पचंयती राज समिति गठित की गई। अपनी सिफारिषों में जिला परिषदो के कार्य और दायित्वों को मजबूत करना रहा। केन्द्रीय स्तर पर इसे सामुदायिक विकास एवं सहकारिता मंत्रालय द्वारा निदेशन एवं प्रोत्साहन दिया जा रहा था। केन्द्रीय परिषद् अपने प्रतिवर्ष के सम्मेलनों में पंचाचती राज व्यवस्था की प्रगति की समीक्षा करती थी। केन्द्र में सामुदायिक विकास का राष्ट्रीय संस्थान स्थापित किया था। जिसका मुख्य कार्य स्थानीय स्वायत्त शासन का अध्ययन शोध करना था एव प्राप्त परिणामो के आधार पर उचित परामश का कार्य करती थी। पंचायती राज व्यवस्था को प्रोत्साहन देने के लिए ग्रामीण विकास विभाग

द्वारा अखिल भारतीय पंचायती राज परिषद् की भी स्थापना की थी। किन्तु इसका 1967 मे अन्त कर दिया था। सामुदायिक विकास एवं पंचायती राज में कृषि उत्पादन पर अधिक बल दिया जाता था। अतः कृषि एवं खाद्य मंत्रालय से इसका तालमेल बिठाने के लिए 1966 में सामुदायिक विकास एवं सहकारिता मंत्रालय को केबिनेट स्तर पर कृषि एवं खाद्य मंत्रालय के साथ सम्बद्ध कर दिया गया था। अतः केन्द्रीय स्तर से पंचायती राज व्यवस्था को पूर्ण सफल बनाने के पूरे-पूरे प्रयास किए गये थे। 1959-60 में जब विभिन्न राज्यो मे पंचायती राज व्यवस्था लागू किया गया था, तब मेहता समिति की रिपोर्ट मे यह भी कहा गया कि राज्य अपनी परिस्थितियों के अनुसार इसे लागू किया गया । केन्द्र द्वारा त्रि-स्तरीय व्यवस्था को लागू किया गया था किन्तु सभी राज्यों में एक समान स्वरूप विकसित नहीं हुआ था। बल्कि कुछ परिवर्तित रूप भी अपनाये थे। [8]

राज्य स्तर पर पंचायती राज्य संस्थाऐं

1. जम्मू कश्मीर में एक स्तरीय ग्राम पंचायतें
2. केरल में एक स्तरीय ग्राम पंचायतें
3. मणिपुर में एक स्तरीय ग्राम पंचायतें
4. त्रिपुरा में एक स्तरीय ग्राम पंचायतें
5. सिक्किम में एक स्तरीय ग्राम पंचायतें
6. असम में द्वि-स्तरीय व्यवस्था ग्राम पंचायतें
7. हरियाणा में द्वि-स्तरीय व्यवस्था पंचायत समिति

8. कर्नाटक में द्वि-स्तरीय व्यवस्था पंचायत समिति

9. उडीसा में द्वि-स्तरीय व्यवस्था पंचायत समिति

10. मध्य प्रदेश में द्वि-स्तरीय व्यवस्था पंचायत समिति

11. बिहार में त्रि-स्तरीय व्यवस्था ग्राम पंचायतें

12. उत्तर प्रदेश में त्रि-स्तरीय व्यवस्था पंचायत समिति

13. राजस्थान में त्रि-स्तरीय व्यवस्था जिला परिषद्

14. हिमाचल प्रदेश में त्रि-स्तरीय व्यवस्था जिला परिषद्

15. पंजाब में त्रि-स्तरीय व्यवस्था जिला परिषद्

16. महाराष्ट्र में त्रि-स्तरीय व्यवस्था जिला परिषद्

17. आन्ध्र प्रदेश में त्रि-स्तरीय व्यवस्था जिला परिषद्

18. तमिलनाडू में त्रि-स्तरीय व्यवस्था जिला परिषद्

19. गुजरात में त्रि-स्तरीय व्यवस्था जिला परिषद्

20. पश्चिम बंगाल में चार-स्तरीय व्यवस्था ग्राम पंचायत

21. नागालैण्ड में कोई व्यवस्था नही/ कोई व्यवस्था नहीं परम्परागत परिषद्

22. मिजोरम में परम्परागत परिषद् परम्परागत परिषद

23. मेघालय में परम्परागत परिषद् परम्परागत परिषद्

पंचायती राज व्यवस्था के महत्व को देखते हुए पंचायती राज संस्थाओ की कार्यप्रणाली की समीक्षा करने हेतु तथा आवश्यक सुधार करने के लिए साठ के दशक में अलग-अलग राज्यो ने अपने यहां अलग-अलग समितियां नियुक्त की थी। कई समिति के सुझावो पर राज्यों ने अमल किया एवं पंचायती राज व्यवस्था मे अवश्यक संशोधन भी किये। विभिन्न राज्यों की महत्वपूर्ण समितियां निम्न थी:-

पंचायती राज से सम्बन्ध रखने वाली राज्य समितियां

आन्ध्र प्रदेश पुरूषोत्तम पाई समिति 1964

रामचन्द्र रेड्डी समिति 1965

नरसिम्हन समिति 1972

कर्नाटक बसप्पा समिति 1963

राजस्थान माथुर समिति 1963

सादिक अली समिति 1963

गिरधारी लाल समिति 1972-73

उत्तर प्रदेश गोविन्द सहाय समिति 1959

मूर्ति समिति 1965

महाराष्ट्र नाईक समिति 1961

बोनगीवार समिति 1963

गुजरात पारिख समिति 1961

यद्यपि पचंयाती राज संस्थानों के विकास के सम्बन्ध मे सम्पूर्ण भारत देश मे सकारात्मक दृष्टिकोण था एवं विविध राज्यां द्वारा गठित समितियों द्वारा समय-समय पर सुधारात्मक अनुशासाऐं की।

अशोक मेहता समिति

पंचायती राज की कार्य योजना पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान, विशेष रूप से पहली तीन योजनाओं में संतोषजनक थी। जातिगत तनाव में कमी ध्यान देने योग्य थी और कमजोर वर्गों को भी इन निकायों में प्रतिनिधित्व मिल रहा था (मिश्रा और सिंह 2003) फिर भी, कई क्षेत्रों में स्थानीय सरकारों के कामकाज को और बेहतर बनाने के लिए विभिन्न समितियों को नियुक्त किया गया। विभिन्न अध्ययन टीमों की सिफारिशों पर, समय-समय पर परिवर्तन किए गए थे। न्याय पंचायतों के गठन के अलावा, संसाधन आधार को मजबूत करने, ग्राम सभा को महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के लिए प्रोत्साहित करने आदि की सिफारिशें पंचायती राज की मशीनरी को मजबूत करने के लिए की गई थीं। लेकिन जब मध्यमार्गी प्रवृत्ति ने विकेंद्रीकृत लोकतंत्र या पंचायती राज के पूरे अर्थ को नष्ट कर दिया । राष्ट्रीय आपातकाल ने स्थानीय निकायों से सभी शक्ति ले ली जो पंचायती राज के विकास के लिये महत्वपूर्ण थीं। 1977 में आपातकाल हटा लिया गया और जनता पार्टी सत्ता में आ गई। पंचायती राज व्यवस्था की दयनीय स्थितियों को देखने के बाद, पंचायती राज में रुचि को पुनर्जीवित करने के लिए अशोक मेहता (1977) की अध्यक्षता में एक समिति नियुक्त करने का निर्णय लिया गया। इस प्रकार अशोक मेहता समिति की नियुक्ति ने पंचायती राज के विकास में महत्वपूर्ण मोड़ दिया। समिति ने पंचायती राज व्यवस्था में व्याप्त कमियों का निदान किया और अपनी रिपोर्ट पेश

की जिसमें प्रशासन के विकेंद्रीकरण को एक आवश्यकता के रूप में सिफारिश की गई थी। इसे 'पंचायती राज के लिए नया दृष्टिकोण' कहा जाता था। शक्ति और लोगों की भागीदारी लेकिन ग्रामीण विकास का समर्थन करना। समिति की मुख्य सिफारिशें थीं:

(क) पंचायती राज की त्रि-स्तरीय प्रणाली को दो-स्तरीय प्रणाली द्वारा प्रतिस्थापित किया जाना चाहिए: जिला स्तर पर जिला परिषद और इसके नीचे, मंडल पंचायत जिसमें 15000 से 20000 की आबादी वाले गांवों का समूह शामिल है।

(ख) राज्य स्तर से नीचे लोकप्रिय पर्यवेक्षण के तहत विकेंद्रीकरण के लिए पहला जिला होना चाहिए।

(ग) जिला परिषद को कार्यकारी निकाय होना चाहिए और जिला स्तर पर योजना के लिए जिम्मेदार बनाया जाना चाहिए।

(घ) पंचायत चुनाव के सभी स्तरों पर राजनीतिक दलों की आधिकारिक भागीदारी होनी चाहिए।

(ण)पंचायत राज संस्थाओं के पास अपने स्वयं के वित्तीय संसाधनों को जुटाने के लिए कराधान की अनिवार्य शक्तियां होनी चाहिए।

(च) जिला-स्तरीय एजेंसी और विधायकों की समिति द्वारा नियमित रूप से सामाजिक अंकेक्षण किया जाना चाहिए ताकि यह जांचा जा सके कि क्या कमजोर सामाजिक और आर्थिक समूहों के लिए आवंटित धन वास्तव में उन पर खर्च किया गया है।

(छ) राज्य सरकार को पंचायती राज संस्थाओं को नहीं देना चाहिए। अनिवार्य मामले में, चुनाव की तारीख से 6 महीने के भीतर चुनाव होना चाहिए।

(ज) न्याय पंचायतों को विकास पंचायतों से अलग निकायों के रूप में रखा जाना चाहिए। उन्हें एक योग्य न्यायाधीश द्वारा अध्यक्षता की जानी चाहिए।

(झ) मुख्य चुनाव आयुक्त के परामर्श से राज्य के मुख्य निर्वाचन अधिकारी को पंचायती राज चुनावों का आयोजन और संचालन करना चाहिए।

(यं) विकास कार्यों को जिला परिषद को हस्तांतरित किया जाना चाहिए और सभी विकास कर्मचारियों को इसके नियंत्रण और पर्यवेक्षण के तहत काम करना चाहिए।

(ट) पंचायती राज के लिए स्वैच्छिक एजेंसियों को लोगों का समर्थन जुटाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभानी चाहिए।

(ठ) पंचायती राज मंत्री को राज्य मंत्री परिषद में नियुक्त किया जाना चाहिए ताकि पंचायती राज संस्थाओं के मामलों की देखभाल की जा सके।

(ड) SC और ST के लिए सीटें उनकी जनसंख्या के आधार पर आरक्षित होनी चाहिए।

हालाँकि, आंध्र प्रदेश और कर्नाटक जैसे राज्यों ने इस मॉडल का प्रयोग किया, लेकिन केंद्र और राज्य स्तर की सरकारों दोनों में बदलाव के साथ, रिपोर्ट को पूरी तरह से लागू नहीं किया जा सका। सन 1980 के दशक की शुरुआत से बहस का एक महत्वपूर्ण मुद्दा की पंचायती राज वयवस्था एक महत्वपूर्ण संस्था के रूप में मान लिया गया।

योजना आयोग ने 1983 में एक कार्यकारी समूह नियुक्त किया, जिसे हनुमंथा राव समिति के रूप में जाना जाता है, जिसने स्थानीय स्तर पर सार्वजनिक भागीदारी की आवश्यकता पर बल दिया। छठी योजना, और सातवीं के दौरान, विकेंद्रीकरण की नीतियों और अधिक प्रभावकारी बनाए जाने का प्रस्ताव किया गया था।

जी.वी.के. राव समिति

सन 1985 में प्रशासनिक व्यवस्था के साथ पंचायती राज निकायों की भूमिका और उनके संबंधों का अध्ययन करने के लिए जी.वी.के. राव समिति का गठन किया गया था। समिति की सिफारिशें इस प्रकार थीं:

नीति नियोजन और कार्यक्रम कार्यान्वयन के लिए जिले की मूल इकाई होनी चाहिए। पंचायती राज संस्थाओं में नियमित चुनाव होने चाहिए। पंचायती राज निकायों को सक्रिय करना होगा और प्रभावी संगठन बनने के लिए सभी आवश्यक सहायता प्रदान करनी होगी। जिला स्तर पर और ब्लॉक और ग्राम स्तर पर पंचायती राज निकायों को ग्रामीण विकास कार्यक्रमों की योजना, कार्यान्वयन और निगरानी का काम सौंपा जाना चाहिए। खंड विकास कार्यालय ग्रामीण विकास प्रक्रिया की रीढ़ की हड्डी होना चाहिए।

समिति ने महसूस किया कि जिला परिषद विभिन्न समितियों के माध्यम से काम कर सकती है। जिला परिषद के सभी सदस्यों की एक या दूसरी समिति में भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए, आनुपातिक प्रतिनिधित्व की प्रणाली के अनुसार समिति के सदस्यों को स्वयं के बीच से जिला परिषद के सदस्यों द्वारा चुना जाना चाहिए। समिति का मानना था कि विकास शुरू होगा और जारी रहेगा, अगर बड़ी संख्या में लोगों ने भाग लिया। इसे प्राप्त करने के लिए, स्थानीय स्तर पर पर्याप्त शक्तियों और वित्तीय संसाधनों को आवश्यक माना गया। समिति ने यह भी महसूस किया कि स्थानीय निकायों के चुनाव नियमित रूप से होने चाहिए। (असलम 2007)

जी.वी.के. राव समिति (1985) का भी मत था कि जिला स्तर पर एक महत्वपूर्ण विकेंद्रीकरण होना चाहिए। यह सरकार, सार्वजनिक नेताओं, बुद्धिजीवियों द्वारा व्यापक रूप से मान्यता

प्राप्त है कि पंचायत राज संस्थान व्यवहार्य और उत्तरदायी लोगों के शरीर की स्थिति और गरिमा को प्राप्त करने में सक्षम नहीं हैं। इसके मुख्य कारण हैं 'नियमित चुनाव का अभाव, लंबे समय तक अधिवेशन, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और महिलाओं जैसे कमजोर वर्गों का अपर्याप्त प्रतिनिधित्व, शक्ति का अपर्याप्त विचलन और वित्तीय संसाधनों की कमी रही थी'। इसलिए केंद्र सरकार ने हाल ही में कहा है कि संविधान में पंचायती राज संस्थानों की कुछ बुनियादी और आवश्यक विशेषताओं को सुनिश्चित करने, उन्हें निरंतरता और शक्ति प्रदान करने की आवश्यकता है।

एलएम सिंघवी समिति

1986 में, राजीव गांधी की सरकार ने पंचायती राज संस्थानों के पुनरोद्धार के लिए एक समिति नियुक्त की, जिसमें एल.एम. सिंघवी की अध्यक्षता में जिसका शीर्षक 'लोकतंत्र और विकास' था। यह सिफारिश की:

गाँवों का पुनर्गठन, अधिक वित्तीय संसाधनों के स्रोतों की खोज, पंचायती राज संस्थानों के कामकाज के संबंध में विवादों को स्थगित करने के लिए प्रत्येक राज्य में न्यायिक न्यायाधिकरणों की स्थापना की सिफारिश की गयी। पंचायतों के संवैधानिककरण के लिए और इस प्रणाली को राष्ट्रीय लक्ष्य के समरूपीकरण और समाजीकरण के लिए एक वाहक के रूप में देखा। इसने सिफारिश की कि पंचायती राज संस्थानों को संवैधानिक रूप से मान्यता प्राप्त, संरक्षित और संरक्षित किया गया। इस उद्देश्य से भारत के संविधान में एक नया अध्याय जोड़ा जाना चाहिए। यह उनकी पहचान और अखंडता को यथोचित और पर्याप्त रूप से पूरा करेगा। इसने पंचायती राज निकायों को नियमित, स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव सुनिश्चित करने के लिए संवैधानिक प्रावधानों का भी सुझाव दिया। कुछ राज्यों ने अपनी राजनीतिक

विचारधाराओं के आधार पर संस्थानों को फिर से जीवंत और मजबूत करने के लिए सक्रिय कदम उठाए। लेकिन, अधिकांश लोगों में, अध: पतन की स्थिति बनी रही। समस्या को दूर इसलिये भी नहीं किया जा सका की अधिकांश राज्यों में दशकों से नियमित चुनाव नहीं हुए थे। बिहार, तमिलनाडु, कर्नाटक और उत्तर प्रदेश (जहां पूर्व अधिसूचना अवधि में अंतिम चुनाव 1978, 1986, 1987 और क्रमशः 1988 में हुए थे) जैसे राज्य इस चुनाव असंगति के उदाहरण हैं। चुनाव न होना केवल विसंगति नहीं थी। पंचायती राज की उचित कार्यप्रणाली राज्य सरकारों के लोगों पर अधिक और लोगों के जनादेश पर कम निर्भर करती है। पंचायती राज निकायों ने वित्त और संसाधनों की कमी, अधिक केंद्रीकरण, सीमित अधिकार और अधिकार क्षेत्र या स्थानीय स्तर पर प्राधिकरण के समानांतर संरचनाओं के निर्माण से या तो अपंग कर दिया है। ऐसे संदर्भ में, स्वशासन और विकेंद्रीकृत लोकतंत्र के उपकरणों के रूप में उभरने से दूर, पंचायतें कृषि, वानिकी, कुटीर उद्योग, कल्याण, आदि जैसे कई क्षेत्रों में उन निकायों के लिए निर्धारित व्यापक विकासात्मक भूमिका को प्रभावी ढंग से नहीं निभा सकती हैं। ऐसा इसलिए था क्योंकि वे विकास कार्यक्रमों और प्रशासनिक संरचनाओं के साथ किसी भी सार्थक एकीकरण से वंचित थे। ये खंड उन राज्यों में पंचायतों में निर्णय लेने की प्रक्रिया से भी नहीं जुड़े हैं, जहां यह व्यवस्था कर्नाटक, गुजरात, महाराष्ट्र और आंध्र प्रदेश जैसे राज्यों में अच्छी तरह से काम कर रही है। सिस्टम मुख्य रूप से प्रमुख समूहों के लाभ के लिए काम कर रहा है।[9]

नवंबर 1989 राष्ट्रीय मोर्चा सरकार वी.पी. सिंह ने घोषणा की कि यह पंचायती राज संस्थाओं को मजबूत करने के लिए कदम उठाएगा। जून 1990 में, राज्य के मुख्यमंत्रियों की दो दिवसीय सम्मेलन की अध्यक्षता में प्रधानमंत्री वी.पी. सिंह को पंचायती राज निकायों के सुदृढ़ीकरण से संबंधित मुद्दों पर चर्चा के लिए रखा गया था। सम्मेलन ने एक नए संवैधानिक संशोधन बिल

की शुरुआत के प्रस्तावों को मंजूरी दी। नतीजतन, एक संवैधानिक संशोधन बिल सितंबर 1990 में लोकसभा में पेश किया गया था। हालांकि सरकार के पतन के परिणामस्वरूप विधेयक पास होने से रह गया । फिर नए निर्वाचित प्रधानमंत्री नरसिम्हा राव ने एक बार फिर विचार किया जिसमे पंचायती राज संस्थाओं के संवैधानिककरण का मामला प्रमुख था । सरकार ने 1991 में संविधान के 73 वे और 74 वें संविधान संशोधन की शुरुआत की। सितंबर 1991 में संविधान (73 वां संशोधन) विधेयक के रूप में एक व्यापक संशोधन पेश किया गया, जिसे बाद में एक विस्तृत परीक्षा के लिए दिसंबर 1991 में संसद की संयुक्त चयन समिति के पास भेजा गया। अंत में, आवश्यक संशोधनों को शामिल करने के बाद, संशोधन को 22 दिसंबर, 1992 को और 23 दिसंबर, 1992 को राज्यसभा में लोकसभा में सर्वसम्मति के साथ पारित किया गया। 73 वें संविधान संशोधन विधेयक को 20 अप्रैल, 1993 को राष्ट्रपति की सहमति मिली और 17 राज्यों के अनुमोदन के पश्चात राष्ट्रपति ने इसे 20 अप्रेल 1993 को अपनी स्वीकृति प्रदान की तथा एक अधिसूचना द्वारा 24 अप्रेल 1993 का यह अधिनियम मिजोरम, मेघालय, नागालैंड, जम्मू कश्मीर, दिल्ली राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र व मणिपुर के कुछ पहाड़ी क्षेत्रों को छोड़कर संपूर्ण देश में लागू हो गया। संविधान 73 वां संशोधन अधिनियम 24 अप्रैल, 1993 से लागू हुआ।

73वाँ संविधान संशोधन अधिनियम, 1992

73वाँ संविधान संशोधन अधिनियम, 1992 तत्कालीन प्रधानमंत्री पी. वी. नरसिम्हा राव के कार्यकाल में प्रभावी हुआ। पंचायती राज विधेयक के संसद द्वारा पारित होने के बाद 20 अप्रैल, 1993 को राष्ट्रपति की स्वीकृति प्राप्त हुई और 24 अप्रैल, 1993 से 73वाँ संविधान

संशोधन अधिनियम लागू हुआ। अतः 24 अप्रैल को 'राष्ट्रीय पंचायत दिवस' के रूप में मनाया जाता है।

इस संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा संविधान में भाग-9 जोड़ा गया था। मूल संविधान में भाग-9 के अंतर्गत पंचायती राज से संबंधित उपबंधों की चर्चा (अनुच्छेद 243) की गई है। भाग-9 में 'पंचायतें' नामक शीर्षक के तहत अनुच्छेद 243-243ण (243-243O) तक पंचायती राज से संबंधित उपबंध हैं।

73वें संविधान संशोधन द्वारा संविधान में 11वीं अनुसूची जोड़ी गई और इसके तहत पंचायतों के अंतर्गत 29 विषयों की सूची की व्यवस्था की गई। ग्राम सभा (ग्राम सभा) की केंद्रीयता, विकेन्द्रीकृत शासन के लिए एक निर्णायक निकाय के रूप में स्थापित किया गया है। त्रि-स्तरीय शासन की संरचना, गाँव, ब्लॉक और जिले के में शक्ति का विकेंद्रीकरण किया गया। बीस लाख से कम आबादी वाले राज्यों के पास ब्लाक स्तर को शुरू नहीं करने का विकल्प सुरक्षित रखा गया है। सभी स्तरों पर सभी सदस्यों के लिए सभी सीटों के लिए प्रत्यक्ष चुनाव का होना है। इसके अलावा, ग्राम सभाओं (पंचायतों) के अध्यक्षों को मध्यवर्ती स्तर पर परिषदों (पंचायतों) का सदस्य बनाया जा सकता है, और मध्यवर्ती स्तर पर ब्लॉक परिषदों (पंचायतों) के अध्यक्षों को जिला स्तर पर सदस्य बनाया जा सकता है। संसद के सदस्य, विधानसभाओं के सदस्य और विधान परिषदों के सदस्य मध्यवर्ती और जिला स्तरों पर पंचायतों के सदस्य भी हो सकते हैं।

सभी पंचायतों में, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लिए उनकी आबादी के अनुपात में सीटें आरक्षित हैं। कुल सीटों में से एक तिहाई महिलाओं के लिए आरक्षित हैं। एससी और एसटी के लिए आरक्षित एक-तिहाई सीटें महिलाओं के लिए भी आरक्षित होंगी।

सभी स्तरों पर पंचायतों के अध्यक्षों के कार्यालय राज्य में उनकी जनसंख्या के अनुपात में एससी और एसटी के पक्ष में आरक्षित होंगे। सभी स्तरों पर पंचायतों के अध्यक्षों के एक तिहाई कार्यालय भी महिलाओं के लिए आरक्षित होंगे। पंचायतो का कार्यकाल पांच साल का होता है। कार्यकाल समाप्त होने से पहले चुनाव संपन्न होने हैं। विघटन की स्थिति में छह महीने के भीतर चुनाव अनिवार्य रूप से होंगे। पुनर्गठित पंचायत पांच साल के कार्यकाल की शेष अवधि के लिए काम करेगी। इसकी समाप्ति से पहले किसी भी अधिनियम के संशोधन द्वारा मौजूदा पंचायतों को भंग करना संभव नहीं होगा। राज्य के किसी भी कानून के तहत अयोग्य घोषित किया गया व्यक्ति पंचायत का सदस्य बनने का हकदार नहीं होगा। निर्वाचन प्रक्रिया और मतदाता सूची तैयार करने के लिए अधीक्षण, निर्देशन और नियंत्रण के लिए एक स्वतंत्र राज्य चुनाव आयोग की स्थापना की जाएगी। विकास योजनाओं की तैयारी और कार्यान्वयन में राज्य द्वारा शक्तियों और जिम्मेदारियों का विचलन। इन पंचायती राज संस्थानों की वित्तीय स्थिति को संशोधित करने और पंचायतों के बीच धन के वितरण पर राज्य को उपयुक्त सिफारिशें करने के लिए पांच साल में एक बार राज्य वित्त आयोग का गठन किया गया है। यह ग्यारहवीं अनुसूची में (अनुच्छेद 243 जी) पंचायती राज संस्थाओं से संबंधित सरकारी योजनाओं के कुछ महत्वपूर्ण पहलुओं पर ध्यान देने वाला संविधान भूमि सुधार, भूमि समेकन और मृदा संरक्षण के कार्यान्वयन के रूप में है (3) लघु सिंचाई, जल प्रबंधन और वाटरशेड विकास (4) पशुपालन, डेयरी और मुर्गी पालन (5) मत्स्य (6) सामाजिक वानिकी और कृषि वानिकी (7) लघु वनोपज (8) खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों सहित लघु उद्योग (9) खादी, गाँव और कुटीर उद्योग (10) ग्रामीण आवास (11) पेयजल (12) ईंधन और चारा (13) सड़क, पुलिया, पुल, घाट, जलमार्ग और संचार के अन्य साधन (14) प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालयों सहित ग्रामीण विद्युतीकरण (15) गैर-पारंपरिक ऊर्जा स्रोत (16)

गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम (17) शिक्षा, सहित, प्राथमिक और माध्यमिक स्कूल (18) तकनीकी प्रशिक्षण और व्यावसायिक शिक्षा (19) वयस्क और गैर-औपचारिक शिक्षा (20) पुस्तकालय (21) सांस्कृतिक गतिविधियाँ (22) बाजार और मेले (23) स्वास्थ्य और स्वच्छता, जिसमें अस्पताल, प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र और औषधालय शामिल हैं (24) परिवार कल्याण (25) महिला एवं बाल विकास (26) विकलांगों और मानसिक रूप से मंद लोगों के कल्याण सहित सामाजिक कल्याण (27) विशेष रूप से अनुसूचित जातियों और जनजातियों के कमजोर वर्ग का कल्याण (28) सार्वजनिक वितरण प्रणाली (29) सामुदायिक संपत्ति का रखरखाव (पंचायती राज रिपोर्ट, 2001)

राज्य सरकारें अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार नई पंचायती राज प्रणाली को अपनाने के लिए संवैधानिक बाध्यता है। नतीजतन, न तो पंचायतों का गठन और न ही नियमित अंतराल पर चुनावों का आयोजन राज्य सरकार की इच्छा पर निर्भर करता है। अधिनियम के प्रावधानों को अनिवार्य और स्वैच्छिक दो श्रेणियों में बांटा जा सकता है। अधिनियम के अनिवार्य प्रावधानों को नई पंचायती राज व्यवस्था बनाने वाले राज्य कानूनों में शामिल किया जाना है। दूसरी ओर, स्वैच्छिक प्रावधान, राज्यों की दिशा में शामिल किए जा सकते हैं। इस प्रकार अधिनियम के स्वैच्छिक प्रावधान राज्यों के अधिकार को सुनिश्चित करते हैं कि नए पंचायती राज प्रणाली को अपनाते हुए भौगोलिक, राजनीतिक और प्रशासनिक जैसे अन्य कारकों को ध्यान में रखा जाए।(अरोड़ा और गोयल 2006)[10]

हालांकि, यह एक राज्य विषय (यानी स्थानीय सरकार) पर एक केंद्रीय कानून है, यह अधिनियम राज्यों के अधिकार क्षेत्र का अतिक्रमण नहीं करता है, जिन्हें पंचायतों के संबंध में पर्याप्त विवेकाधीन अधिकार दिए गए हैं। जमीनी स्तर के लोकतंत्र की कई कमियों को दूर

करने के लिए 73 वां संवैधानिक संशोधन अधिनियम बनाया गया है। इसे लोगों की भागीदारी के क्षेत्र में कदम रखने वाला मिल का पत्थर माना जाता है। 1996 में एक PESA का कानून लाया गया जिसका प्रयोग अनुसूचित क्षेत्रों के लिये किया गया था । संसद में एक विधेयक पेश किया गया और पारित किया गया, जिसे 24 दिसंबर, 1996 को राष्ट्रपति द्वारा स्वीकार किया गया। पंचायतों के प्रावधान (अनुसूचित क्षेत्रों के लिए विस्तार) अधिनियम 1996 ने संविधान के अनुच्छेद 244 के खंड (एक) के तहत उल्लिखित अनुसूचित क्षेत्रों के लिए केंद्रीय अधिनियम को बढ़ा दिया है। आंध्र प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, गुजरात, राजस्थान, तेलंगाना और उड़ीसा पांचवीं अनुसूची क्षेत्रों के अंतर्गत आते हैं। (माहीपाल-2012)[11]

73 वें संशोधन द्वारा लाए गए क्रांतिकारी परिवर्तनों के बावजूद यह कुछ गंभीर सीमाओं से ग्रस्त है। इस अधिनियम में ग्राम सभा की शक्ति और कार्यों का स्पष्ट उल्लेख नहीं है। इस संशोधन में उल्लेख किया गया है कि ग्राम सभा उन कार्यों को करेगी जो राज्य विधायिका द्वारा उसे सौंपे जा सकते हैं। अधिकांश राज्यों द्वारा अधिनियमित किए गए कानूनों में ग्राम सभा से संबंधित प्रावधान एक शक्तिहीन निकाय में परिवर्तित करते हैं। जो ग्राम पंचायत द्वारा लिए गए निर्णयों पर नियमित रूप से बस अपनी मुहर लगाएगा। अधिनियम में एक और दोष यह है कि इसने राजनीतिक दलों की भूमिका को स्पष्ट रूप से परिभाषित नहीं किया है। इसी तरह, यह पंचायती राज संस्थानों और स्थानीय स्तर की नौकरशाही के बीच संबंधों पर पूरी तरह से चुप है। दोनों के लिए परिभाषित भूमिकाओं की कमी के कारण, दोनों मुख्य रूप से उचित समन्वय की कमी के कारण अलग-अलग दिशाओं में चलते थे। यह पंचायती राज संस्थाओं की विफलता के महत्वपूर्ण कारणों में से एक था।[12] वर्तमान संशोधन में, संविधान ने इस समस्या का हल कर दिया है और राज्य विधानसभाओं को इससे निपटने के लिए उपयुक्त

प्रावधान बनाने के लिए अधिकृत किया है। चूंकि राज्य स्तर की नौकरशाही अधिक प्रभावी है और किसी भी नीति और कानून को बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, इसलिए यह अभी भी संदिग्ध है कि क्या स्थानीय स्तर की नौकरशाही और पंचायती राज संस्थाओं के निर्वाचित प्रतिनिधियों के बीच संबंधों की समस्या ठीक से शामिल होगी या राज्य विधानसभाओं द्वारा सुचारू हो जाएगी। (मिश्र 2003)

पंचायती राज के महिलाओं की भूमिका

73 वां संविधान संशोधन पंचायती राज व्यवस्था आजादी के बाद के सबसे उल्लेखनीय सामाजिक और राजनीतिक सुधारों में से एक था। हालाँकि, पंचायती राज संस्थानों को आज कई चुनौतीपूर्ण चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। सभी राज्यों में पंचायती राज में धन की उपलब्धता , कार्यों और कार्यवाहियों के निपटारा में वास्तविक विकास की कमी है। इसके साथ ही सामाजिक चुनौतियां भी शामिल हैं, जो समाज के हाशिए के वर्गों जैसे कि महिलाओं, दलितों और आदिवासियों से नेतृत्व को स्वीकार करना एक चुनौती रही हैं। इसके अलावा, ग्राम पंचायतों, ब्लॉक पंचायतों और जिला पंचायतों के बीच कर्तव्यो और भूमिका का स्पष्टता का अभाव है। पंचायती राज प्रणाली की शुरुआत से अपेक्षित सामाजिक-राजनीतिक परिवर्तन लंबे समय तक अप्रभावित रहे। विशेष रूप से पंचायती राज के उद्देश्यों के बीच सामाजिक समानता, लैंगिक समानता और जमीनी स्तर पर बदलाव जैसे उद्देश्यों की परिकल्पना मुख्य रूप से नहीं की गई। इस संबंध में यह महसूस किया गया कि समाज में महिलाओं और अन्य पिछड़ी जातियों जैसे हाशिए पर रहने वाले समूहों को कई बाधाओं का सामना करना पड़ रहा है और जमीनी स्तर की विकास प्रक्रिया में भाग लेना मुश्किल हो गया। विभिन्न अध्ययनों द्वारा पहचानी जाने वाली प्रणाली की कुछ कमियां इस प्रकार हैं: (क)

पंचायती राज प्रणाली की एकरूपता प्रत्येक राज्य को अद्वितीय इतिहास, परंपराओं और स्थानीय सरकार के परिणामस्वरूप संरचनाओं को कमजोर करती है; (ख) संसद और राज्य विधायकों के सदस्यों का प्रतिनिधित्व अक्सर प्रतिशोधात्मक हो जाता है। विशेष रूप से वोट प्राप्त करने के लिए विधानसभाओं और पंचायती राज प्रतिनिधियों के बीच हितों का टकराव होता है; (ग) अधिनियम स्पष्ट रूप से राजनीतिक दलों की भूमिका को परिभाषित नहीं करता है। यह उल्लेख नहीं करता है कि राजनीतिक दल अपनी औपचारिक क्षमता में संलयन क्षेत्र में प्रवेश कर सकते हैं; (घ) राज्यों द्वारा पीआरआई के विघटन के लिए अधिनियम विशिष्ट आधार नहीं देता है। इससे राज्यों को राजनीतिक विचारों पर पीआरआई को प्रभावित करने की गुंजाइश रहती है।[13]

पंचायतें ग्रामीण विकास के बदलते परिदृश्य में स्थानीय प्रशासन की संस्थाओं के रूप में एक भूमिका निभा रहा है। कुछ सकारात्मक रुझान इस प्रकार हैं: (i) पंचायती राज को कई विकासात्मक कार्यक्रमों को लागू करने के लिए सर्वोत्तम उपलब्ध विकल्प के रूप में पहचाना जाता है कार्यक्रमों के त्वरित कार्यान्वयन के लिए प्रत्यक्ष धन भी उपलब्ध कराया जा रहा है। (ii) चूंकि विभिन्न मंत्रालयों और एजेंसियों ने अंतिम व्यक्ति तक पहुच प्रदान करके विकासात्मक कार्यक्रमों में संतृप्ति दृष्टिकोण को अपनाना शुरू कर दिया है, पंचायती राज संस्थान ने इसमें लाभार्थी की पहचान, योजना और कार्यान्वयन में एक बड़ी भूमिका निभानी शुरू कर दी है। (iii) पंचायती राज स्तर पर सामाजिक अंकेक्षण से पता चला है कि लोगों की भागीदारी गुणात्मक और प्रभावी रूप से स्थानीय समस्याओं को हल करने से है। (iv) पंचायती राज के प्रदर्शन का मूल्यांकन राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियो द्वारा किया जाता है और उन्हें पुरस्कार दिए जाते हैं, जिसके कारण पंचायती राज संस्था में प्रेरणा बढ़ी है। इसके कारण, कई वर्षों में, कई ग्राम पंचायतें आती हैं, जिन्हें दूसरों के लिए पंचायत और रोल

मॉडल के रूप में मान्यता दी जाती है। वे मानव और वित्तीय दोनों संसाधनों को परिवर्तित करने में सफल रहे हैं और सामाजिक और आर्थिक इक्विटी को बढ़ावा देने में सफल रहे हैं। (कुन्नुमक्कल 2013) इसके अलावा, सभी कमियों के बावजूद, 73 वें संशोधन द्वारा फैलाए गए जमीनी स्तर पर लोकतंत्र स्थापित करता रहेगा। संप्रभु सत्ता वास्तव में लोगों और गांधीवादी सपने पूरा किया जा सकता है (कश्यप 2008) कुछ दशकों में, ग्राम पंचायतों ने लोकतांत्रिक शासन की एक प्रणाली के रूप में और लोगों के सशक्तीकरण के लिए एक संस्थागत ढांचे के रूप में काम किया है, जिससे उन्हें न केवल आवाज, बल्कि पसंद की शक्ति भी मिलती है, ताकि वे महसूस कर सकें उनकी स्थिति के लिए यह व्यवस्था सबसे उपयुक्त है। यह आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय लाने की संसाधनों और शक्ति के साथ स्वायत्त इकाइयों के रूप में कार्य करने के लिए निर्वाचित निकायों को शक्तियों के अधिकतम विकेंद्रीकरण पर निर्भर करता है।[14]

ग्रामीण विकास योजनाओं का कार्यान्वयन विकेंद्रीत पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से ही होता रहा है और पिछले तीन दशकों में, 1996 से 2022 तक पंचायत प्रणाली ने भारतीय शासन प्रणाली में बहुत बदलाव लाया है। सबसे महत्वपूर्ण विकास यह हुआ है कि भारतीय राजनीति का लोकतांत्रिक आधार बहुत विस्तृत हो गया है।

पंचायती राज संस्थान उत्तर प्रदेश और उत्तर प्रदेश (यूपी) में 2011 की जनगणना के अनुसार लगभग 20 करोड़ की आबादी वाला देश का सबसे अधिक आबादी वाला राज्य है। इसमें 2, 40,928 वर्ग किमी और देश के कुल क्षेत्रफल का 7.3 प्रतिशत हिस्सा शामिल है, यह भारत का क्षेत्रफल के दृष्टिकोण से पांचवां सबसे बड़ा राज्य है। राज्य की लगभग 76 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। प्रति पंचायत में 3,194 व्यक्तियों की

औसत आबादी के साथ, यूपी के अधिकांश गाँव आकार में छोटे हैं। आजादी से पहले, प्रांतीय सरकार ने 1920 में पहला ग्राम पंचायत अधिनियम बनाया था जिसने नागरिक और आपराधिक न्याय के प्रशासन में सहायता के लिए ग्राम स्तर के निकाय स्थापित किए थे। जिला कलेक्टर द्वारा पंचो को नियुक्त किया गया था। एक पंचायत में उन सदस्यों को शामिल करना था जिनकी संख्या पाँच से सात के बीच थी। एक ग्राम निधि के लिए प्रावधान किया गया था। इस प्रकार, 1920 और 1947 के बीच ढाई दशक तक, ग्राम पंचायतों को अलग-अलग संख्याओं में स्थापित किया गया था, जो कि कलेक्टर द्वारा कथित व्यवहार्यता और सफलता पर निर्भर करता था। [15]

1920 के अधिनियम के मुख्य दोष संक्षेप में इस प्रकार हैं: अधिनियम की स्वैच्छिक प्रकृति, स्थानीय पहल की कमी, चुनाव का प्रावधान न होना, अधिकार क्षेत्र की अधिकता के साथ अधिकार क्षेत्र की सीमित शक्ति के साथ एक एकल केंद्र बिंदु पर गतिविधियों की एकाग्रता के लिए अग्रणी और किसी भी प्रावधान की अनुपस्थिति थी। करों के अधिरोपण और प्राप्ति के लिए, इसके मुख्य दोष थे। 1922 का जिला बोर्ड अधिनियम, जिला बोर्डों के लिए निर्वाचित सदस्यों के लिए प्रदान किया गया, जिनकी संख्या 15 से 40 के बीच तय की गई थी। नामित सदस्यों के लिए अधिकतम संख्या तीन थी। कार्यालय का कार्यकाल तीन वर्ष था। 1938 में गठित एक स्थानीय स्व-सरकारी समिति ने निर्वाचित ग्राम पंचायतों की स्थापना की सिफारिश की। दूसरी ओर, यह अपने कुछ आवश्यक कार्यों को करने के लिए जिला बोर्ड की एक एजेंसी होती थी। (उत्तर-प्रदेश गवर्नमेंट एक्ट 1938)[16]

राज्य सरकार ने संयुक्त प्रांत लागू किया गया पंचायती राज अधिनियम-1947

स्वतंत्रता की प्राप्ति के साथ, राज्य सरकार ने संयुक्त प्रांत लागू किया गया पंचायती राज अधिनियम-1947 इसने निकायों की शक्तियों और कार्यों का विस्तार करने के अलावा, पंचायत अध्यक्षों के चुनाव के लिए प्रदान किया। 1947 के अधिनियम के तहत, तीन निकाय, गाँव सभा, गाँव पंचायत और पंचायत अदालत (विवादों को निपटाने के लिए) बनाए गए थे। पंचायत सदस्यों को तीन साल की अवधि के लिए गाँव सभा के सदस्यों द्वारा चुना गया था। उत्तर प्रदेश पहला था - 12 जनवरी 1950 को संयुक्त प्रांत का नाम बदलकर वर्तमान उत्तर प्रदेश कर दिया गया। पंचायत कानून (उत्तर प्रदेश पंचायती राज अधिनियम, 1947) लागू करने के लिए राज्य। आजादी के बाद बार-बार संशोधन किया गया। पहला पंचायत चुनाव 1947 से 1949 तक हुआ था, और अगस्त 1949 तक लगभग 35,000 ग्राम पंचायतों और 8,100 न्याय पंचायतों की स्थापना की गई थी (मैथ्यू 2000) 1988 तक, पंचायत चुनाव अपने-अपने समय कार्यक्रम के अनुसार हुए। 1988 के बाद से ही पंचायत चुनाव की प्रक्रिया स्थगित हो गई और पंचायतें धीरे-धीरे राज्य के सामाजिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाना कम हो गई। पुनः 73 वें संवैधानिक संशोधन अधिनियम, उत्तर प्रदेश पंचायत अधिनियम, 1994 के प्रावधानों के अनुसार, और इस अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार, पंचायतों के चुनाव अप्रैल और मई 1995 में हुए थे। चुनावों के परिणामस्वरूप पूरे प्रदेश में 58,805 ग्राम पंचायतें, 904 क्षत्रिय समितियाँ और 83 जिला पंचायतें बनाई गईं।[17]

उत्तर प्रदेश ने 73 वें संविधान संशोधन के अनुरूप नए पंचायती राज कानून को लागू किया। इसने दो मौजूदा कानूनों, अर्थात् संयुक्त प्रांत पंचायती राज अधिनियम, 1947 और उत्तर प्रदेश क्षत्र समिति और जिला परिषद अधिनयम, 1961 में संशोधन किया, जिसमें 73 वें संविधान

संशोधन के अनुरूप प्रावधान शामिल हैं। संशोधित कानून 22 अप्रैल, 1994 को लागू हुए। पंचायती राज के संशोधित कानून के तहत राज्य में त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था की गयी है जिनमे ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत, खंड (खंड स्तर) और जिला पंचायत में क्षत्र पंचायत जिला स्तर की है। 73 वें संवैधानिक संशोधन भाग- IX के अनिवार्य प्रावधान के अनुपालन में, विकेंद्रीकरण की प्रक्रिया की दिशा में उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा निम्नलिखित कदम उठाए गए (झा 2007)[18]

राज्य चुनाव आयोग और राज्य वित्त आयोग का गठन किया गया है।

- SC / ST और महिलाओं के लिए आरक्षण का प्रावधान किया गया है।
- पंचायतों का कार्यकाल पांच साल के लिए निर्धारित किया गया। कार्यकाल से पहले पंचायत से पहले भंग कर दिया जाए तो इसके कार्यकाल की समाप्ति तक या छह महीने के भीतर ताजा चुनाव होने होंगे। उत्तर प्रदेश पंचायती राज अधिनियम 1947 में 29 से अधिक संशोधन किए गए। इस अधिनियम को संयुक्त प्रांत की विधानसभा ने 5 जून 1947 को और संयुक्त प्रांत की विधान परिषद ने 16 सितंबर, 1947 को पारित किया और गवर्नर जनरल की सहमति प्राप्त की। 73 वें संविधान संशोधन के बाद पहली बार वर्ष 1995 में और उसके बाद वर्ष 2000 में पुनर्गठित किया गया। इसमें गठित तीन स्तरीय पंचायती राज निकायों में 52028 ग्राम पंचायतें (ग्राम स्तर), 813 क्षेत्र पंचायतें (ब्लॉक स्तर या मध्यस्थ स्तर) शामिल थीं। और 75 जिला पंचायतें (जिला स्तर) थी।[19]

- मध्यस्थ और जिला पंचायतों के अध्यक्ष का अप्रत्यक्ष चुनाव। 73 वें संवैधानिक संशोधन, भाग- IX के वैकल्पिक प्रावधान (राज्य सरकार के विवेक के अधीन) के अनुपालन के संबंध में, निम्नलिखित उपाय किए गए हैं।
- अधिकारियों, कार्यों और निधियों का स्थानांतरण। ग्राम सभा को अधिकार
- ग्रामीण स्तर पर पंचायत के अध्यक्ष के चुनाव का तरीका
- ओबीसी का आरक्षण
- करों, कर्तव्यों, टोलों और शुल्क तय करने के लिए पंचायतों का प्राधिकरण
- खातों के रखरखाव और पंचायतों के ऑडिट का प्रावधान

पंचायत चुनावों के संचालन, वित्तीय शक्तियों के विचलन, धन के हस्तांतरण, कार्यों और कार्यवाहियों, ग्राम सभा के सशक्तिकरण और कार्यों के निष्पादन के लिए समितियों के संबंध में पीआरआई की स्थिति की समीक्षा करने के लिए भी प्रावधान किए गए हैं। संविधान का भाग- IX लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण व्यवस्था में सकारात्मक विचलन लाने का इरादा रखता है।

पंचायती राज संस्थाओं को हमेशा सुशासन का साधन माना जाता रहा है और 73 वीं संवैधानिक संशोधन इस उम्मीद से प्रभावित हुआ कि इससे बेहतर शासन को बढ़ावा मिलेगा और अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और महिलाओं जैसे समाज के वंचित वर्ग को राजनीतिक स्थान मिलेगा। 73 वें संवैधानिक संशोधन अधिनियम, 1992 ने पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा प्रदान किया। पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से ग्रामीण विकेंद्रीकरण ने राजनीतिक भागीदारी और गतिशीलता के लिए एक मजबूत मंच प्रदान किया

है और इसमें कोई संदेह नहीं है, इससे हाशिए पर और सामाजिक रूप से बहिष्कृत आदिवासी और जनजातीय तथा महिलाओ समूहों जैसे सभी वर्गों के लोगों में राजनीतिक जागरूकता बढ़ी है। 73 वें संवैधानिक संशोधन ने समाज के कमजोर वर्गों, विशेषकर अनुसूचित जाति और जनजातियो (आदिवासीयों) के मामले में आरक्षण प्रदान करने की प्रक्रिया को भी शामिल किया गया है। यह माना जाता है कि भविष्य में, विकेंद्रीकरण और लोकतांत्रिकरण समाज के हर वर्ग की क्षमता को मजबूत करेगा, विशेष रूप से कमजोर वर्गों के उत्थान के लिये। समाज के बहिष्कृत और वंचित समूहों के लिए, यह जमीनी जड़ लोकतंत्र को सफल बनता है। 73 वें संवैधानिक संशोधन की नई संभावनाओं को पूरा करने के लिए जमीनी स्तर पर मजबूत राजनीतिक संस्थान एक आवश्यक शर्त है।

संदर्भ सूची-

1. अल्टेकर, ए.एस. (1955), 'प्राचीन भारत में राज्य और सरकार', बनारस: मोतीलाल बनारसी दास

2. अरोड़ा, के.आर. और रजनी गोयल (2006), 'भारतीय लोक प्रशासन: संस्थान और मुद्दे', नई दिल्ली: विसवा प्रकाशन

3. मालवीय, एच.डी. (1956), 'प्राचीन भारत में ग्राम पंचायत', नई दिल्ली: अखिल भारतीय कांग्रेस समितियाँ

4. मजूमदार, आर.सी. (1948), 'एन एडवांस्ड हिस्ट्री ऑफ इंडिया', लंदन: मैकमिलन और कंपनी पेज 137

5. मिश्रा, एस.एन. (1993), 'पंचायती राज संस्थाएँ: प्रारंभ और उसके बाद', नई दिल्ली

6. बाजपेयी, ए (1997), पंचायती राज और ग्रामीण विकास, नई दिल्ली: साहित्य प्रकाशन

7. वर्न. डी सूजा, पीआर (2002), 'विकेंद्रीकरण और स्थानीय सरकार: भारत में लोकतंत्र की दूसरी हवा'

8. वही

9. खन्ना, बी.एस. (1999), भारत में पंचायती राज: ग्रामीण स्थानीय स्वशासन, नई दिल्ली: दीप और दीप प्रकाशन

10. अरोड़ा, के.आर. और रजनी गोयल (2006), 'भारतीय लोक प्रशासन: संस्थान और मुद्दे', नई दिल्ली: विसवा प्रकाशन

11. माही पाल (2000), 'पंचम अनुसूचित क्षेत्रों में पंचायतें', आर्थिक और राजनीतिक साप्ताहिक, 35 (19): 1602

12. माहेश्वरी, एस.आर. (2011), 'भारत में स्थानीय सरकार' , नई दिल्ली: ओरिएंट लॉन्गमैन.पब्लिकेशन

13. कश्यप, एस.सी. (2008), अवर पॉलिटिकल सिस्टम, नई दिल्ली: नेशनल बुक ट्रस्ट

14. कुन्नुमक्कल, सी. मैथ्यू (2011), 'ग्रास-रूट्स लेवल डेमोक्रेसी', योजना, नई दिल्ली, फरवरी 2011.

15. उत्तर प्रदेश सरकार (1938), स्थानीय स्वशासन समिति की रिपोर्ट, भाग II, लखनऊ

16. उत्तर प्रदेश सरकार (1938), स्थानीय स्वशासन समिति की रिपोर्ट, भाग II, लखनऊ

17. कुन्नुमक्कल, सी. मैथ्यू (2011), 'ग्रास-रूट्स लेवल डेमोक्रेसी ' , योजना, नई दिल्ली, फरवरी पृष्ट 210 .

18. झा, एन.एस. (2007), उत्तर प्रदेश: द लैंड एंड द पीपल, नई दिल्ली: नेशनल बुक ट्रस्ट

19. मैथ्यू, जी (2005), राज्यों में पंचायती राज की स्थिति और भारत के केंद्र शासित प्रदेश , सामाजिक विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली: संकल्पना प्रकाशन

अध्याय-चतुर्थ

उत्तरप्रदेश में पंचायती राज संस्थाओं तथा जनजातियों की सहभागिता: एक अवलोकन

परिचय

भारत में उत्तर प्रदेश राज्य ने 1961 में बलवंतराय मेहता समिति की रिपोर्ट के आधार पर पंचायतों की त्रिस्तरीय प्रणाली को अपनाया। ग्राम पंचायतों के अलावा, 1961 की क्षेत्र समिति और जिला परिषद अधिनयम के तहत क्षेत्रीय समितियों और जिला परिषदों का गठन किया गया। यूपी ने 73 वें संवैधानिक संशोधन के अनुरूप एक नया पंचायती राज कानून बनाया। इसमें संयुक्त प्रांत पंचायत राज अधिनियम, 1947 और उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत अधिनयम 1961 जैसे दो मौजूदा अधिनियमों में संशोधन किया गया, जिसमें 73 वें संविधान संशोधन के अनुरूप प्रावधान शामिल हैं।

2011 की जनगणना के अनुसार, उत्तर प्रदेश की जनसंख्या 19.98 करोड़ है, जो 2001 में 16.62 करोड़ थी (भारत की जनगणना) राज्य का भौगोलिक क्षेत्रफल 2.41 लाख वर्ग किमी है और देश के कुल क्षेत्रफल में इसका हिस्सा 3 फीसदी है, जबकि देश की आबादी में इसका हिस्सा 16.5 फीसदी है, जो 2001 में 16.16 फीसदी था। प्रति 2011 की जनगणना 829 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी है। जनसंख्या की औसत वार्षिक विकास दर राष्ट्रीय औसत 1.76 प्रतिशत से 2.02% अधिक है, ग्रामीण आबादी 1,06,774 गांवों (भारत की जनगणना 2011) में रहने वाले राज्य की कुल जनसंख्या का 77.73% है। सरकार द्वारा 2018 में प्रकाशित मानव विकास रिपोर्ट के अनुसार, यू.पी. 2018 में 19 प्रमुख राज्यों के बीच 10

वीं रैंक पर रहा है , जिसमें 0.6281 के अखिल भारतीय औसत के मुकाबले 0.5442 पर मानव विकास सूचकांक है। राज्य में विभिन्न सामाजिक और धार्मिक समूहों के बीच मानव विकास के स्तर में अधिक अंतर हैं। उच्च जातियों की तुलना में मुस्लिम, अन्य पिछड़े वर्गों और अनुसूचित जातियों और जनजातियो की सामाजिक-आर्थिक स्थिति बहुत कम है।

राज्य की अर्थव्यवस्था मुख्यतः कृषि प्रधान है। पूरे राज्य को चार आर्थिक क्षेत्रों में विभाजित किया जा सकता था। पश्चिमी क्षेत्र, मध्य क्षेत्र, पूर्वी क्षेत्र और बुंदेलखंड, पहले तीन क्षेत्र गंगा के मैदानों में आते हैं, जबकि बुंदेलखंड दक्षिणी पठार का हिस्सा है।

प्रशासनिक रूपरेखा

राज्य 75 जिलों और 821 विकास खंडों में व्यवस्थित है। उत्तर प्रदेश में 51,914 ग्राम पंचायतें हैं।

उत्तर प्रदेश राज्य में पंचायती राज

चूँकि प्राचीन काल से ही पंचायती राज भारतीय समाज का एक अभिन्न अंग रहा था, ऋगवेद में सभा और समितियों का उल्लेख किया गया है। इसका अर्थ है ग्रामीणों द्वारा निर्वाचित अपनी ग्राम सभा से था। हालांकि, ब्रिटिश राज के दौरान, विकेन्द्रीकृत शासन की इस प्राचीन प्रणाली ने अपना महत्व को कम दिया गया था। आजादी के तुरंत बाद भारत सरकार ने इस मूल्यवान सामाजिक संस्था को पुनर्जीवित करने के लिए कदम उठाए और उत्तर प्रदेश भारत में पहला राज्य बन गया जिसके पास उत्तर प्रदेश पंचायत राज अधिनियम, 1947 और 15 अगस्त 1949 को लागू होने के साथ ही 35000 पंचायतें और 8000 हैं। 5 करोड़

40 लाख की तत्कालीन ग्रामीण आबादी की सेवा के लिए पंचायत अदालतों की स्थापना की गई थी।

राज्य ने 1961 में बलवंतराय मेहता समिति की रिपोर्ट की सिफारिशों के आधार पर पंचायतों की त्रिस्तरीय प्रणाली को अपनाया। ग्राम पंचायतों के अलावा, 1961 की क्षेत्र समिति और जिला परिषद का गठन क्षत्र समिति और जिला परिषद अधिनयम के तहत किया गया था। यूपी ने 73 वें संविधान संशोधन के अनुरूप एक नया पंचायत राज कानून बनाया गया। इसमें संयुक्त प्रांत पंचायत राज अधिनियम, 1947 और उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत अधिनयम 1961 जैसे दो मौजूदा अधिनियमों में संशोधन किया गया, जिसमें 73 वें संविधान संशोधन के अनुरूप प्रावधान शामिल हैं। 22 अप्रैल 1994 को संशोधित अधिनियम लागू हुए। उत्तरप्रदेश में भी पण पंचायती राज में राज्य वित्त आयोग और राज्य चुनाव आयोग की स्थापना की गयी है। उत्तरप्रदेश ने ग्रामीण पंचायतों के कार्यालय पांच वर्ष रखा हैं। एससी / एसटी आदिवासी , ओबीसी और महिलाओं के लिए आरक्षण की व्यवस्था की गयी इस प्रकार पंचायतों को और अधिकार और जिम्मेदारी दी गयी।[1]

उत्तरप्रदेश जिला पंचायत अधिनियम 1961 स्पष्ट रूप से क्षेत्र पंचायत (मध्यवर्ती पंचायत) और जिला पंचायत की शक्तियों, कर्तव्यों और कार्यों को पंचायत राज की निमावली धारा 31-38 में परिभाषित करता है, जबकि उत्तरप्रदेश पंचायत राज अधिनयम 1947 शासन के स्वाबलंबन को स्पष्ट रूप से परिभाषित करता है। पंचायत राज की निमावली धारा 15 से 30 के तहत ग्राम पंचायत (ग्राम पंचायत) के कार्य का उल्लेख था। यह अधिनियम स्पष्ट रूप से पंचायत राज की निमावली धारा 3, 5 और 11 के तहत ग्राम सभाओं और इसकी बैठकों

और कार्यों से सम्बंधित था। हालांकि, पंचायत राज की निमावली में स्पष्ट शक्तियों, कर्तव्यों का उल्लेख नहीं था।

पंचायतों के विकास का पाचवां चरण (1983-84 से 1992-93)

वर्ष 1988 में ग्राम पंचायतों का छठा सामान्य निर्वाचन सम्पन्न हुए। 1988 में ही पंचायत राज अधिनियम में संशोधन कर यह व्यवस्था की गयी कि गाव पंचायतों के सदस्य पदों पर 30 प्रतिशत प्रतिनिधित्व महिलाओं को प्राप्त हुआ। साथ ही यह भी व्यवस्था की गयी कि प्रत्येक गांव पंचायत में कम से कम एक अनुसूचित जाति की महिला को प्रतिनिधित्व रहा । इस आम चुनाव में गांव पंचायतों की संख्या 73927 तथा न्याय पंचायतों की संख्या 8814 थी जिसमें महिला प्रधानों की संख्या 930 तथा महिला सदस्यों की संख्या 1,50,577 थी जिसमें अनुसूचित जाति की महिला सदस्यों की संख्या 65937 थी। वर्ष 1989 में ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगार और अल्प रोजगार वाले पुरूषों एवं महिलाओं के लिए लाभकारी रोजगार सृजन करने के उद्देश्य से जवाहर रोजगार योजना प्रारम्भ की गयी। इस योजना के कार्यान्वयन का भार ग्राम पंचायतों को सौंपा गया।[2]

ग्राम पंचायतों के विकास का छठवा चरण (1993-94 से)

भारतीय संविधान के निर्माण के समय ही राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्त के अन्तर्गत अनुच्छेद - 40 में आधारभूत स्तर पर पंचायतो को मान्यता देते हुए यह कहा गया कि राज्य गांव पंचायतों को संगठित करने के लिए उपाय करेगा और उन्हें ऐसी शक्तिया और अधिकार प्रदान करेगा जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाई के रूप कार्य करने के लिए आवश्यक हैं। वर्ष 1994 में देश की ग्राम पंचायतो को संविधानिक इकाई मानते हुए स्वशासी संस्था के रूप मे स्थापित करने, उनमें एकरूपता लाने, निश्चित समय पर चुनाव कराने, आर्थिक रूप से उन्हें

सुदृढ़ करने तथा पंचायतों को संवैधानिक दर्जा देने के उद्देश्य से 72वा संविधान संशोधन लोकसभा में प्रस्तुत किया गया जो बाद में 73वा संविधान संशोधन 1992 के रूप में 24 अप्रैल, 1993 से सम्पूर्ण देश में लागू हुआ। 73वें संविधान संशोधन के अनुक्रम में प्रदेश सरकार द्वारा उत्तर प्रदेश पंचायत विधि (संशोधन) अधिनियम संख्या 9 विधेयक 1994 पारित किया गया, जो 22 अप्रैल1994 से पूरे प्रदेश में लागू हुआ। इसमें महत्वपूर्ण रूप से शामिल किये गये-

1. पंचायतों का संगठन और संरचना का निर्माण।

2. अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति, पिछड़े वर्ग तथा महिलाओं के लिए आरक्षण की व्यवस्था।

3.पंचायतों का निश्चित कार्यकाल का गठन।

4. पंचायतों के कृत्य, शक्तिया और उत्तरदायित्व का विस्तार किया गया।

5. राज्य निर्वाचन आयोग का गठन गया।

6. राज्य वित्त आयोग की स्थापना की गयी।

उपर्युक्त व्यवस्थाओं के अंतर्गत उत्तरप्रदेश में यथासम्भव 1000 की आबादी पर ग्राम पंचायतों का गठन किया गया। संविधानिक व्यवस्थाओं के अनुरूप आबादी के प्रतिशत के आधार पर पंचायती राज के प्रत्येक स्तर पर अध्यक्ष पदों एवं सदस्यों के स्थानों पर अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति तथा पिछड़ा वर्ग (27 प्रतिशत) एवं प्रत्येक वर्ग में महिलाओं के लिए एक तिहाई पदों एवं स्थानो पर आरक्षण व्यवस्था सुनिश्चित की गई है। यह भी सुनिश्चित किया गया है कि पंचायतों का कार्य काल 5 वर्ष हो एवं वह उसे पूरा कर सकें। संविधान एवं राज्य के पंचायत राज अधिनियमों मे किये गए प्राविधानो के अनुसार प्रदेश में अधिसूचना

दिनांक 23 अप्रैल, 1994 के द्वारा राज्य निर्वाचन आयोग की स्थापना की गई है और वर्ष 1994 से राज्य निर्वाचन आयोग की देखरेख में 73वां संविधान संशोधन के अनुरूप त्रिस्तरीय पंचायतों के सामान्य निर्वाचन सम्पन्न कराये जाते रहे हैं।[3]

उत्तर प्रदेश में पंचायतों के चुनाव, प्रतिनिधित्व और संरचना

15 अगस्त 1949 को, यूपी में 5 करोड़ 40 लाख की तत्कालीन ग्रामीण आबादी पर लगभग 35000 पंचायतें और 8000 पंचायत अदालतें स्थापित की गईहै। जबकि दसवें आम चुनाव अक्टूबर से नवंबर 2010 में 51,914 ग्राम पंचायतों, 821 क्षेत्र पंचायत और 72 के लिए हुए थे। जिला पंचायत राज्य में होने वाले पंचायत चुनावों के कालक्रम को नीचे तालिका 2 से संदर्भित किया जा सकता है:

तालिका 4.1: यूपी राज्य में पंचायत चुनाव का कालक्रम

पहला	वर्ष 1949
दूसरा	वर्ष 1955
तीसरा	10 फरबरी 1961 से 7 फ़रवरी 1962
चौथा	वर्ष 1972 से 73 तक
पंचम	वर्ष 1982- जुलाई 1982
छठा	वर्ष 1988
सातवां	अक्टूबर 1996 दिसम्बर 1996
आठवां	जून 2000 – अगस्त 2000
नवीं	जून 2005- अक्टूबर 2005
दसवीं	अक्टूबर 2010- नवम्बर 2010
ग्यारहवीं	नवम्बर 2015- दिसम्बर 2015
बारहवीं	अप्रैल-2021 मई- 2021

स्रोत: पंचायती राज विभाग, सरकार उत्तर प्रदेश और राज्य निर्वाचन आयोग

तालिका 4.1 का उल्लेख करते हुए यह देखा जा सकता है कि सातवें चुनाव के बाद से पंचायत चुनावों को नियमित कर दिया गया है, यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि राज्य चुनाव आयोग (SEC) की स्थापना वर्ष 1994 में यूपी पंचायत राज आयोग 1947 में संशोधन के आधार पर की गई थी और 73 वें संविधान संशोधन के बाद उत्तर प्रदेश पंचायत और जिला पंचायत अधिनयम 1961के अंतर्गत है । राज्य में राज्य निर्वाचन आयोग (SEC) राज्य निर्वाचन आयुक्त के नेतृत्व में है, राज्य चुनाव आयुक्त को उच्च न्यायालय के न्यायाधीश का दर्जा नहीं दिया गया है। एसईसी के अलावा एक राज्य चुनाव आयुक्त में एक उप- चुनाव आयुक्त है। राज्य चुनाव आयुक्त, एक सचिव, एसईसी, दो संयुक्त राज्य चुनाव आयुक्त, एक संयुक्त चुनाव आयुक्त और अन्य, राज्य निर्वाचन आयुक्त के अलावा राज्य में एसईसी के तहत 240 पद हैं। जिला स्तर पर ए.एस.टी. जिला निर्वाचन अधिकारी जिला इकाई का प्रमुख होता है और एक अराजपत्रित पद होता है।

अलग-अलग राज्यों में, तीन स्तरों को अलग नाम दिया गया है। यूपी में यह ग्राम पंचायत, क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत है और निर्वाचित प्रतिनिधियों को क्रमशः प्रधान, प्रधान और अध्यक्ष नाम दिया गया है। तालिका 4.2 उसी का नामकरण प्रस्तुत करती है।

तालिका 4.1 का उल्लेख करते हुए यह देखा जा सकता है कि सातवें चुनाव के बाद से पंचायत चुनावों को नियमित कर दिया गया है, यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि राज्य चुनाव आयोग (SEC) की स्थापना वर्ष 1994 में यूपी पंचायत राज आयोग 1947 में संशोधन के आधार पर की गई थी और 73 वें संविधान संशोधन के बाद उत्तर प्रदेश पंचायत और जिला पंचायत अधिनयम 1961। राज्य में राज्य निर्वाचन आयोग (SEC) राज्य निर्वाचन आयुक्त के नेतृत्व में है, राज्य चुनाव आयुक्त को उच्च न्यायालय के न्यायाधीश का दर्जा दिया गया है।

राज्य चुनाव आयुक्त, एक सचिव, एसईसी, दो संयुक्त राज्य चुनाव आयुक्त, एक संयुक्त चुनाव आयुक्त और अन्य, राज्य निर्वाचन आयुक्त के अलावा राज्य में एसईसी के तहत 240 पद हैं। जिला स्तर पर ए.एस.टी. जिला निर्वाचन अधिकारी जिला इकाई का प्रमुख होता है और एक राजपत्रित अधिकारी होता है।[4]

अलग-अलग राज्यों में, तीन स्तरों को अलग नाम दिया गया है। यूपी में यह ग्राम पंचायत, क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत है और निर्वाचित प्रतिनिधियों को क्रमशः प्रधान, प्रमुख और अध्यक्ष नाम दिया गया है। तालिका 4.2 उसी का नामकरण प्रस्तुत करती है।

तालिका 4.2 : यूपी में पंचायतों के 3 स्तरों के लिए नामकरण

पंचायत का स्तर	प्रयुक्त नाम	विभिन्न पंचायत स्तर पर अध्यक्ष के लिए प्रयुक्त नाम
जिला पंचायत	जिला पंचायत	अध्यक्ष
मध्यवर्ती पंचायत	क्षेत्र पंचायत	प्रमुख
ग्राम पंचायत	ग्राम पंचायत	प्रधान

स्रोत: पंचायती राज विभाग, सरकार उत्तर प्रदेश सरकार

विभिन्न स्तरों पर पंचायतों के गठन के लिए जनसंख्या मानदंड निम्नानुसार दर्शाया गया है:

तालिका 4.3 : प्रत्येक स्तर पर पंचायतों की संख्या

1.	जिला पंचायत	75
2.	क्षेत्र पंचायत	821
3.	ग्राम पंचायत	59,074

स्रोत: राज्य चुनाव आयोग उत्तर प्रदेश सरकार

तालिका 4.4: पंचायत के तीन स्तरों के लिए जनसंख्या मानदंड

क्रम संख्या	पंचायत का स्तर	विशेष रूप से पंचायत के गठन के लिए सामान्य जनसंख्या
1.	जिला पंचायत	प्रत्येक सदस्य पचास हजार की आबादी पर निर्वाचित
2.	क्षेत्र पंचायत	प्रत्येक सदस्य दो हजार की आबादी पर निर्वाचित
3.	ग्राम पंचायत	निम्न जनसंख्या 0-500 के साथ ग्राम पंचायत : सदस्य निर्वाचित -7 501-1000: सदस्य निर्वाचित -9 1001-2000: सदस्य निर्वाचित -11 2001-3000: सदस्य निर्वाचित -13 3001 और उससे अधिक: सदस्य निर्वाचित -15

स्रोत: पंचायती राज विभाग, सरकार उत्तर प्रदेश सरकार

एक अध्ययन से पता चलता है कि लोगों ने मतदान प्रक्रिया को काफी हद तक ठीक माना है। साथ ही चुनाव में भागीदारी का स्तर उच्च स्तर रही है। हालांकि जहां तक राज्य चुनाव आयोग (एसईसी) द्वारा अपनाई गई नियंत्रण प्रणाली की प्रभावशीलता उत्तरदाताओं ने अपना संदेह भी उठाया है। मतदाताओं को प्रभावित करने और विरोध करने पूरी प्रक्रिया में शामिल अनुचित साधनों, राजनीतिकरण, अपराधीकरण की जाँच करना भी शामिल था। साथ ही, उत्तरदाताओं द्वारा विभिन्न एसईसी की स्वायत्तता पर सवाल भी उठाया है। यह कई उत्तरदाताओं द्वारा माना जाता है कि एसईसी सत्ता में सरकार से बहुत प्रभावित होती है। चुनाव के समग्र परिणाम में इसका एक निश्चित प्रभाव पड़ता है। सत्तारूढ़ दल द्वारा अनौपचारिक रूप से ग्रामीण पंचायत चुनाव में समर्थित उम्मीदवारों का पक्ष लिया जाता है।

उत्तरप्रदेश राज्य निर्वाचन आयोग (SEC) पंचायत चुनावों के लिए पंचायत चुनाव के लिये 'आदर्श आचार संहिता' जारी करता है, जो चुनाव कार्यक्रम की घोषणा होने पर लागू होता है। वर्ष 2021 के चुनावों में, SEC ने PAC की 350 कंपनियों, 1 लाख 50 हजार पुलिस बल के जवानों, 1 लाख 20 हजार होमगार्ड के जवानों को सुचारू चुनाव सुनिश्चित करने के लिए तैनात किया गया। उत्तरप्रदेश में ग्राम पंचायत अध्यक्ष अर्थात प्रधान के चुनाव प्रत्यक्ष मतदान द्वारा होता है, जबकि ब्लाक और जिला स्तर पर अध्यक्ष अप्रत्यक्ष हैं। सार्वजनिक रूप से क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत के सदस्य, इन दोनों स्तरों पर अपने संबंधित अध्यक्षों का चुनाव करते हैं। राजनीतिक दलों को आधिकारिक रूप से पंचायत चुनावों में भाग लेने की अनुमति नहीं है। राज्य चुनाव आयोग ने चुनाव प्रचार के दौरान प्रतिनिधियों द्वारा कुल मौद्रिक व्यय नीचे तालिका में दर्शाया गया है-

तालिका 4.5: चुनाव प्रचार के दौरान मौद्रिक व्यय के लिए (वर्ष 2021 के आंकड़े)

क्रम संख्या	उम्मीदवार का पद	अभियान के दौरान मौद्रिक व्यय (रु)
1.	सदस्य ग्राम पंचायत	उपलब्ध नहीं
2.	प्रधान ग्राम पंचायत	60,000
3.	सदस्य क्षेत्र पंचायत	90,000
4.	प्रमुख	100,000
5.	सदस्य जिला पंचायत	210 ,000
6.	अध्यक्ष	500,000

हालाँकि, चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा सूचित किए जाने पर, वास्तविक व्यय सभी मामलों में अधिक है और प्रधान पद के लिए चुनाव जीतने और जीतने के लिए लगभग 500,000 रुपये

खर्च किए गए (2021 का आंकड़ा), हालांकि बयान प्रस्तुत करने का प्रावधान है एसईसी को व्यय के व्यय के ऐसे विवरण की प्रामाणिकता को सत्यापित करने की आवश्यकता है।

प्रतिनिधित्व

प्रतिनिधित्व आरक्षण उत्तरप्रदेश के पंचायती राज अधिनियम 1994 के अनुसार दिया जाता है, जिसके अनुसार महिला आरक्षण सभी श्रेणियों में एक तिहाई होना चाहिए और ओबीसी के लिए आरक्षित सीटें 27% से अधिक नहीं होनी चाहिए।

पंचायत के तीनों स्तरों पर महिलाओं का औसत प्रतिनिधित्व 39% है जो एक अच्छा संकेत है । निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों को उनके पुरुष परिवार के सदस्यों द्वारा, आमतौर पर पति या पुत्र द्वारा ही निर्णय लिया जाता है। नेतृत्व की भूमिका निभाने वाली महिलाओं के खिलाफ सामाजिक वर्जनाएं भी इस परिवर्तन प्रक्रिया में महिलाओं की भागीदारी को प्रभावित कर रही हैं।

आरक्षित सीटों के रोटेशन का प्रावधान राज्य में लागू है। इसका नियंत्रण भी राज्य के पास है। आरक्षण नीति के संबंध में ज्यादातर सकारात्मक प्रतिक्रिया दी। सकारात्मक प्रतिक्रिया यह थी कि रोटेशन नीति समग्र विकास के लिए अच्छी है क्योंकि इससे विभिन्न समुदायों के प्रतिनिधियों को विकास की जरूरतों को पूरा करने का अवसर मिलता है। [5]

उत्तरप्रदेश राज्य की पंचायत की संरचना

उत्तरप्रदेश के पंचायती राज अधिनियम की धारा 6 और 18 के अनुसार क्षेत्र और जिला पंचायत अधिनियम, 1961 क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत में निम्नलिखित रचना होगी:

क्षेत्र पंचायत की रचना-

1. प्रधान-अध्यक्ष

2. खण्ड में ग्राम-पंचायतों के सभी प्रधान

3. निर्वाचित सदस्य और प्रत्येक सदस्य दो हजार की आबादी पर चुने जाएंगे

4. राज्य के क्षेत्र में निवास करते हो जो पूरी तरह से या आंशिक रूप से उस क्षेत्र में पड़ता हो।

5. विधान परिषद के सदस्य जो अपने ब्लाक में निर्वाचक के रूप में पंजीकृत हो।

जिला-पंचायत की रचना

1.अध्यक्ष, चेयरमैन

2. जिले के सभी क्षेत्र पंचायतों के प्रधान

3. निर्वाचित सदस्यों को प्रत्यक्ष चुनाव द्वारा चुना जाता है, प्रत्येक पचास हजार की आबादी पर होगी।

4. राज्य के क्षेत्र में निवास करते हो जो पूरी तरह से या आंशिक रूप से उस क्षेत्र में पड़ता हो।

5. विधान परिषद के सदस्य जो पंचायत क्षेत्र के भीतर निर्वाचक के रूप में पंजीकृत हैं।

उत्तर प्रदेश में पंचायत के सभी 3 स्तरों पर 6 स्थायी समितियाँ बनाई गई हैं, जिनका विवरण नीचे दी गई तालिका में दिया गया है:

तालिका-4.6: स्थायी समितियां सभी तीनो स्तरों पर

संख्या	स्थायी समितियों
1.	नियोजन विकास समिति (योजना और विकास समिति)
2.	शिक्षा समिति (शिक्षा समिति)
3.	प्रसारिणी समिति (प्रशासनिक समिति)
4.	निर्माण कार्य समिति (नागरिक कार्य समिति)
5.	स्वास्थ्य विकास कल्याण समिति (स्वास्थ्य और कल्याण समिति)
6.	जल प्रबन्धन समिति (जल प्रबंधन समिति)

पंचायती राज विभाग, उत्तर प्रदेश सरकार

उत्तरप्रदेश में पंचायतों के कामकाज की पारदर्शिता बढ़ाने के लिए, इन समितियों के माध्यम से सभी कार्य करने का प्रावधान किया गया है। साथ ही, इस समितियों में विशेष आमंत्रित सदस्यों को शामिल करने का प्रावधान किया गया है। कुल आमंत्रित सदस्यों की संख्या सात से अधिक नहीं हैं। वे विभिन्न सुझावों पर अपने सुझाव दे सकते हैं लेकिन निर्णय लेने की प्रक्रिया में अपने वोट नहीं डालेंगे।

73 वें संवैधानिक संशोधनों के आधार पर राज्य सही दिशा में आगे बढ़े हैं, लेकिन परिवर्तन की गति को बढ़ाने की आवश्यकता है और त्रिस्तरीय पंचायती राज संरचना का लोकतंत्रीकरण और सशक्तिकरण करने के लिए आत्मनिरीक्षण की आवश्यकता है। कुछ विशिष्ट सुझाव निम्नानुसार हैं। पंचायती राज के चुनाव में चुनावी सूची वही होनी चाहिए जो लोकसभा या विधानसभा चुनावों में इस्तेमाल की जाती है, सभी मतदाताओं को वोट डालने के लिए फोटो पहचान पत्र अनिवार्य होना चाहिए। साथ ही, ईवीएम का उपयोग किया जाना चाहिए। क्षमता-निर्माण को अधिक गंभीरता से लिया जाना चाहिए और इसे एक बार के

चक्कर के बजाय एक सतत प्रक्रिया होना चाहिए। एफएम रेडियो / रेडियो के इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के माध्यम से क्षमता निर्माण की कोशिश की जा सकती है, एक ग्राम चैनल शुरू किया जाना चाहिए जहाँ मनोरंजन के साथ साथ अन्य पंचायतों से संबंधित जानकारी भी प्रसारित हो। ग्राम पंचायत के लोगो को उनके अधिकार, पंचायत प्रतिनिधियों के कर्तव्यों को नियमित रूप से प्रसारित करने की आवश्यकता है।

विशेष रूप से जिला परिषद में अध्यक्ष के पास पंचायत निधि के आवंटन और विकास के लिए परियोजनाओं की मंजूरी के लिए केंद्रीयकृत शक्ति नहीं होनी चाहिए। प्रभावी लोकतंत्रीकरण के लिए इसे मजबूत करने की आवश्यकता है। [6]

उत्तर प्रदेश राज्य की जनजातियाँ (आदिवासीयों) संक्षिप्त परिचय

भारत का उत्तर प्रदेश राज्य एक प्राचीन संस्कृति, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और धार्मिक आस्था का केंद्र रहा है । आजादी के बाद विशेष रूप से उत्तर प्रदेश देश में राजनीति की धुरी रहा है। उत्तर प्रदेश राज्य में विभिन्न प्रकार की जनजातियाँ निवास करती हैं। जनगणना के अनुसार मध्य भारत और बुंदेल खंड की कुल जनसंख्या 7699502 थी, उत्तर पश्चिमी प्रांतों की कुल जनसंख्या 31688217 थी, अवध प्रांतों की कुल जनसंख्या 11220232 थी और मध्य प्रांतों की कुल जनसंख्या 9251299 थी। वर्तमान में 2011 की जनगणना के अनुसार उत्तर प्रदेश की कुल जनजातीय जनसंख्या 1134273 है, जो कुल जनसंख्या का लगभग 0.6 प्रतिशत है, जिसमें से 0.7 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों में और 0.2 प्रतिशत शहरी क्षेत्रों में रहती है। 2001-2011 के दौरान जनजातीय जनसंख्या की दशकीय वृद्धि 93.6 प्रतिशत रही है। उत्तर प्रदेश में जनजातीय जनसंख्या का कुल लिंगानुपात 944 महिलाएं प्रति 1000 पुरुष है, जो राज्य के औसत 849 (जनगणना 2011) से अधिक है। समग्र साक्षरता दर 2001 की जनगणना में अनुसूचित

जनजातियों की संख्या 15.1 प्रतिशत से बढ़कर 2011 की जनगणना में 20.6 प्रतिशत हो गई है। सुधार के बावजूद, अनुसूचित जनजातियों की साक्षरता दर राज्य के औसत 67.7 प्रतिशत से काफी कम है, जो कुल अनुसूचित जनजातियों की साक्षरता दर 55.7 प्रतिशत है।

उत्तर प्रदेश में, गोंड (चार उप जातियों-धुरिया, नायक, ओजाहा, पटारी और राजगोंड सहित) सबसे अधिक आबादी वाली जनजाति है, जो उत्तर प्रदेश में कुल अनुसूचित जनजातियों की आबादी का 50.16 प्रतिशत है (जनगणना 2011) खरवार दूसरी प्रमुख जनजाति है, (14.16), इसके बाद थारू, शरिया, बैगा, पनिका, अगरिया, भुइन्या, भोटिया, बुक्सा, चेरो, जौनसारी, राजी, परहिया और पटारी। पटारी उत्तर प्रदेश में एक छोटा आदिवासी समुदाय है।

तालिका 4.7 : 2002 में विशिष्ट जिले में अनुसूचित जनजाति के रूप में मान्यता प्राप्त समुदाय

क्रम संख्या	जाति/उप-जाति	विशिष्ट जिले
1.	गोंड (धुरिया, नायक, ओझा, पथरी, राज गोंड)	बलिया, गाजीपुर, मऊ, गोरखपुर, देवरिया, बस्ती, आजमगढ़, मिर्जापुर, सोनभद्र, महाराजगंज, जौनपुर
2.	खरवार, खैरवारी	बलिया, देवरिया, गाजीपुर, वाराणसी और सोनभद्र
3.	सहरिया	ललितपुर
4.	परहिया	सोनभद्र
5.	पणिका, पंखुड़ी	सोनभद्र और मिर्जापुर
6.	अगरिया	सोनभद्र
7.	पटारी	सोनभद्र
8.	चेरो	सोनभद्र और वाराणसी
9.	भुइंया, भुइयां	सोनभद्र
10.	बैगा	सोनभद्र

स्रोत - अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आदेश (संशोधन) अधिनियम 2002

उत्तर प्रदेश की जनजातियाँ और उनकी जनगणना, सामाजिक-आर्थिक, राजनीतिक स्थितियाँ:-

जौनसारी- जौनसारी एक मध्य हिमालयी जनजाति है। जौनसारी खुद को महाभारत के पांडवों का अपना वंशज बताते हैं। जौनसरी तीन मुख्य वर्गों का प्रतिनिधित्व करते हैं, जिसमे राजपूत खास रूप में और शीर्ष पर ब्राह्मण, मध्य वर्ग के रूप में रथे लुहार, बदाई, बाजगी कारीगर और निम्नतम वर्ग के रूप में हरिजन, डोम, कोली, कोल्टा, कोई, औज आदि जौनसारी बहुपति प्रथा के रूप में बहुपतित्व वाले समुदाय के रूप में जाने जाते हैं। यद्यपि अब उनकी जनसँख्या ठीक हो रही है क्योंकि उन्होंने बहुविवाह प्रथा को अपनाना भी शुरू कर दिया है। जौनसारी समाज का पंचायतो के माध्यम से सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्रों में प्रमुख विकास हुआ है। (नास्वा 2001)

परंपरागत रूप से, इस क्षेत्र की प्रतिकूल जलवायु परिस्थितियों से उत्पन्न घोर गरीबी के कारण, बंधुआ मजदूरी भी होती थी। लेकिन बंधुआ श्रम उन्मूलन अधिनियम 1976 के लागू होने के बाद स्थिति में सुधार हुआ है। अपनी आजीविका को बनाए रखने के लिए इनमें से अधिकांश जौनसारियों ने कृषक मजदूरों का पेशा अपना लिया और अपना जीवन यापन करने के लिए कृषि और पशुपालन पर भी निर्भर है।

2011 की जनगणना के अनुसार उत्तर प्रदेश में जौनसारी की अधिकतम जनसंख्या ललितपुर जिले में रहती है। 2011 की जनगणना रिपोर्ट के अनुसार जौनसारी जनजाति की साक्षरता दर कुल 50.6 प्रतिशत है। इनमें पुरुष साक्षरता दर 60.4 प्रतिशत और महिला साक्षरता दर 39.8 प्रतिशत है जो औसत राज्य साक्षरता दर 67.7 प्रतिशत से कम है। जौनसारी समुदाय में कुल

2499 (61.17) लोग गैर-श्रमिक हैं, केवल 1221 (37.82%) लोग श्रमिक हैं, जिसमें कुल 745 (61.01%) लोग मुख्य श्रमिक हैं और अधिकतम (252) लोग खेतिहर मजदूर हैं।

थारू जनजाति :- थारू जनजाति स्वदेशी समुदाय है, जो नेपाल और भारत की सीमा पर तराई के मैदानों में रहती है। थारू ज्यादातर बिहार के चंपारण जिले में और उत्तराखंड के उधम सिंह नगर जिले में, लखीमपुर खीरी, पीलीभीत, गोंडा, बलरामपुर, गोरखपुर, बहराइच, उत्तर प्रदेश के जिले में रहते हैं (साहनी 2014) अपने मूल के बारे में थारू लोग राजपूत होने का दावा करते हैं। ये हिमालय के पश्चिमी तराई क्षेत्र से नेपाल तक फैले हुए हैं। थारू जनजाति राज्य की कुल आदिवासी आबादी का लगभग 9.2 प्रतिशत है। 2011 की जनगणना के अनुसार, थारू जनजाति में कुल साक्षरता दर 54.6 प्रतिशत है जहाँ पुरुष साक्षरता दर 66.3 प्रतिशत और महिला साक्षरता दर 42.5 है। थारू समुदाय में कुल श्रमिक 38851 (36.80%) हैं। अधिकतम थारू जनजातियो की आजीविका कृषक हैं।

बुक्सा जनजाति :- बुक्सा मुख्य रूप से उत्तराखंड राज्य और उत्तर प्रदेश के तराई और भाबर क्षेत्रों में निवास करती है। उनके अधिकतम निवास स्थान में उत्तर प्रदेश के जिले में बिजनौर और लखीमपुर खीरी शामिल हैं। बुक्स प्राचीन काल से तराई के उपजाऊ इलाकों में रह रहे हैं और राजस्थान के पूर्वज राजा जगतदेव के पुत्रों से संबंध होने का दावा करते हैं। राजा जगतदेव और उनके अनुयायी मुगलों से हारने के बाद उनसे शरण लेने के लिए तराई चले गए (अमीर 1971)

वर्ष 1981 में बुक्सा को राज्य का आदिम आदिवासी समूह घोषित किया गया है। बुक्सा जनजाति में कुल साक्षरता दर 50.6 प्रतिशत है, जिसमें पुरुष साक्षरता दर 60.9 है और महिला साक्षरता दर 39.1 प्रतिशत है। कुल 1767 (37.51%) लोग श्रमिक हैं। बुक्सा

जनजाति। 2011 की जनगणना के अनुसार बुक्सास में मुख्य श्रमिक 876 (18.59%) हैं और कुल गैर श्रमिक 2943 (62.48%) हैं।

राजी जनजाति- राजी, एक खानाबदोश समुदाय, मानवशास्त्रीय रूप से तिब्बती बर्मन परिवार से संबंधित है। राजी उत्तर प्रदेश की सबसे पिछड़ी, सबसे छोटी जनजाति है। वे खुद को कुमाऊं क्षेत्र का वंशज मानते हैं। राजी को राजा किरात के वंशज भी माना जाता है जिन्होंने प्रागैतिहासिक काल में इस क्षेत्र पर शासन किया था। वे खुद को कई बहिर्विवाही पितृवंशों में विभाजित करते हैं जैसे - पाल, चंद, ब्योम, कुंवर, आदि।

राजी की पारंपरिक अर्थव्यवस्था पूरी तरह से जंगल के आसपास बनी थी और उनकी आजीविका का तरीका जंगली खाद्य पौधों, जड़ों, फलों, कंदों, शिकार और मछली पकड़ने के संग्रह पर आधारित था जो लकड़ी के जहाजों के निर्माण के पूरक थे (बिष्ट 2006)

राजी को 1975 में राज्य में उत्तरप्रदेश का एक आदिम आदिवासी समूह घोषित किया गया है। 2011 की जनगणना के अनुसार उत्तर प्रदेश में राजी की कुल जनसंख्या केवल 1295 है। इस समुदाय में कुल साक्षरता दर 35.6 प्रतिशत है, जहाँ कुल पुरुष साक्षरता दर 42.1 और महिला साक्षरता दर 27.6 प्रतिशत है। राजी समुदाय में 324 (41.23%) लोग मुख्य कार्यकर्ता हैं और शेष 761 (58.78%) गैर-श्रमिक हैं।

भोटिया जनजाति- भोटिया जनजाति एक मंगोलोइड जातीय समुदाय है। भोटिया के पूर्वज तिब्बत से उत्तर पूर्वी नेपाल, सिक्किम, दार्जिलिंग, कलिम्पोंग और नेपाल के अन्य हिस्सों, भारत, भूटान चले गए। पूरे समुदाय में दो मुख्य सामाजिक वर्ग होते हैं यानी राजपूत (उच्च जाति) और डुमरास (हरिजन या सेवा वर्ग)। हालाँकि उनके कई सामाजिक समूह हैं जिन्हें उनके आवास के माध्यम से पहचाना जा सकता है। उनके पारंपरिक व्यवसायों और

आजीविका के साधनों के आधार पर, संपूर्ण जनजातियों को तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है जो क्रमश व्यापारी सह पशुचारक, कृषक चरवाहे और कृषक (साहनी: 2014)

2011 की जनगणना के अनुसार भोटिया समुदाय की कुल जनसंख्या उत्तर प्रदेश में केवल 5196 है। भोटिया समुदाय में कुल साक्षरता दर 58.6 प्रतिशत है, जहां पुरुष साक्षरता दर 66.8 प्रतिशत और महिला साक्षरता दर 49.4 प्रतिशत है। इस समुदाय में कुल 1616 (81.77%) श्रमिक हैं, जिनमें से मुख्य कार्यकर्ता 1068 (20.55%)भोटिया समुदाय के हैं। अधिकतम भोटिया अन्य कार्यों में लगे हुए हैं।

सहरिया जनजाति - सहरिया शब्द की उत्पत्ति पर्सियन शब्द 'सेह' से हुई है जिसका अर्थ जंगल होता है। मुस्लिम शासकों ने सहरिया को जंगल का निवासी माना। यह स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि सहरिया हमेशा से जंगलों के बीच रहने वाला वनवासी रहा है। अपनी जंगल पर निर्भरता के कारण वह साहसी भी होते है। सहरिया खुद को रामायण से साबरी के वंशज के रूप में दावा करते हैं इनमे कुछ अपने को ब्रम्हा से उत्पन्न मानते है।

सहरिया जनजाति उत्तर प्रदेश, राजस्थान और मुख्य रूप से मध्य प्रदेश राज्य में निवास करती है। उत्तर प्रदेश में सहरिया को 2002 में ललितपुर जिले में अनुसूचित जनजाति के रूप में मान्यता दी गई है। सहरिया राज्य की कुल सहेदुल जनजाति की आबादी का 6.22 प्रतिशत है। सहरिया में साक्षरता दर बहुत कम है, 2011 की जनगणना के अनुसार 30.4 प्रतिशत, महिला दर 21.7 और पुरुषों की 38.6 प्रतिशत है। इस समुदाय में कुल 63696 (44.87%) कार्यकर्ता हैं। उनमें से ज्यादातर खेतिहर मजदूर हैं।

बैगा जनजाति - एक आदिम द्रविड़ जनजाति जिसका घर उत्तर-पूर्व में बिहार से देश के दूसरे हिस्सों में स्थानांतरित हो गया है। उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर जिले में बैगा के पर्यायवाची के रूप

में कभी-कभी "भूमि के भगवान" शब्द का प्रयोग किया जाता है। वे अपने जादू और ड्रग्स के लिए भी जाने जाते हैं। बैगा मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, छत्तीसगढ़ और झारखंड राज्यों में भी पाया जाता है। बैगा समुदाय को 2002 में उत्तर प्रदेश के सोनभद्र जिले में जनजाति के रूप में घोषित किया गया है। बैगा जनजाति 2011 की जनगणना के अनुसार राज्य की कुल एसटी आबादी का केवल 2.6 प्रतिशत है। गरीबी के कारण साक्षरता का स्तर बहुत कम है, यह 2011 की जनगणना से स्पष्ट है, जहां उनके बीच साक्षरता का स्तर सिर्फ 28.5 प्रतिशत है, महिला साक्षरता केवल 21.7 प्रतिशत है जबकि पुरुष साक्षरता दर 2011 की जनगणना के अनुसार 37.4 प्रतिशत है। कुल जनसंख्या 13537(45.11%) श्रमिक हैं, जिनमें से 6494 (47.97%) मुख्य श्रमिक हैं। बैगा जनजाति वन क्षेत्रों में स्थानांतरित खेती का अभ्यास करती है। वे अपनी आजीविका के लिये जंगल की जलाऊ लकड़ी, लाख और अन्य वन उपज भी बेचते तथा एकत्र करते हैं। (हंसदा 2010)

तालिका-4.8 उत्तर प्रदेश में सभी अनुसूचित जनजातियों (कुल, पुरुष, महिला) की रोजगार स्थिति)

क्रम संख्या	सभी जनजातियाँ	कुल जनसंख्या	कुल श्रमिक	मुख्य श्रमिक	सीमांत श्रमिक	गैर-श्रमिक
1-	कुल जनजातियाँ	1134273	419652	212477	207175	714621
2-	भोटिया	5196	1616	1068	547	3581
3-	बुक्सा	4710	1767	876	891	2943
4-	जौनसारी	3720	1221	745	476	2499
5-	राजी	1295	534	324	210	761
6-	थारू	105291	38851	25335	13516	66440
7-	गौंड	569035	195299	93193	102106	373736

क्रम संख्या	सभी जनजातियाँ	कुल जनसंख्या	कुल श्रमिक	मुख्य श्रमिक	सीमांत श्रमिक	गैर-श्रमिक
8-	खरवार	160676	60164	20876	30288	100512
9-	सहरिया	70634	63696	20234	11462	38938
10-	पहरिया	901	395	213	182	506
11-	बैगा	30006	13537	6494	7043	16469
12-	पनिका	24862	10084	4650	5434	14778
13-	अगरिया	17376	8035	3217	4818	9341
14-	पटारी	132	72	12	60	60
15-	चेरो	4227	18475	6605	11870	23752
16-	भुइया	15599	6619	2201	4418	8980

स्रोत-ए परिकलित, राज्य प्राथमिक जनगणना अनुसूचित जनजाति

खरवार जनजाति :- खारवार, खेरवार झारखंड, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, गुजरात, राजस्थान, महाराष्ट्र, छत्तीसगढ़ की एक द्रविड़ खेती और भूमि जोतने वाली जनजाति है। कुछ खरवार अपने को मूल रूप से रोहतास जिले से सम्बंधित करते हैं। जिसे सूर्यवंसी परिवार के हरिश्चंद्र के पुत्र रोहिताश्व का चुना हुआ निवास स्थान के रूप में चिन्हित किया गया है। इस प्राचीन घर से वे वंश का भी दावा करते हैं, खुद को सुरजाबंसिस कहते हैं और राजपूतों को अलग करने वाले जनेओ या जाति के धागे पहनते हैं। खरवार में छह अंतर्विवाही समूह हैं जो सूरजबंसी, दौलत बंदी परबंद, खारिया, भोगती और मौझिया हैं। (हंसदा 2010)

उत्तर प्रदेश के बलिया, देवरिया, गाजीपुर, वाराणसी और सोनभद्र जिले में खरवार समुदाय को जनजाति के रूप में मान्यता दी गई है। खरवार दूसरी आबादी वाली जनजाति है, जो राज्य की कुल एसटी आबादी का 14.16 प्रतिशत है। इस समुदाय की कुल साक्षरता दर 58.5 प्रतिशत

है, जिसमें से 70.3 पुरुष और 46.0 प्रतिशत महिलाएं हैं। इस समुदाय में कुल 37.44 प्रतिशत श्रमिक हैं, जहां 12.99 मुख्य श्रमिक हैं, जिनमें से अधिकांश आबादी खेतिहर मजदूर है।

पहडीया जनजाति- बिहार और उत्तर प्रदेश राज्य में पहडीया जनजाति के लोग रहते हैं और उन्हें बैगा के नाम से भी जाना जाता है। ब्रिटिश मानवशास्त्री फोर्ब्स के अनुसार ये पलामू के सबसे पुराने निवासी हैं, झारखंड प्रसाद (1988) में कहा गया है कि पहडीया जनजाति महान हिंदू महाकाव्य के वंशज हैं। महाभारत इसलिए उन्हें पांडवबंसी के रूप में जाना जाता है। पहडीया जनजाति का अर्थ गोंडी भाषा में जंगल को जलाने वाला कहा जाता है, इस तथ्य के कारण कि वे कृषि को काटने और जलाने का अभ्यास करते हैं।

2011 की जनगणना के अनुसार उत्तर प्रदेश में पहडीया जनजाति की आबादी केवल 901 है, इस समुदाय को 2002 में सोनभद्र जिले में सहेडल जनजाति के रूप में मान्यता दी गई थी। पहडीया जनजाति में कुल 42.7 हैं जहां पुरुष साक्षरता दर 61.9 है और महिला साक्षरता दर 12.31 प्रतिशत है।

चेरो जनजाति- शब्द चेरो संभवतः चेरा से लिया गया है, एक सांप वे अपनी उत्पत्ति सागा च्यवन का पता लगाते हैं, जबकि कुछ और लोगो का मानना है कि चेरो एक पेड़ भर की एक शाखा है जो कोल आदिवासी से जुड़ा हुआ है। चेरो को दो उप जातियों में बांटा गया है, बड़ा हजार और तेरा हजार या बीरबंधी । 2002 में उत्तर प्रदेश राज्य के दो जिलों सोनभद्र और वाराणसी में चेरो समुदाय को जनजाति के रूप में सूचीबद्ध किया गया था। 2011 की जनगणना के आंकड़ों के अनुसार, राज्य की कुल एसटी आबादी 3.7 प्रतिशत के साथ 42227 थी। इस समुदाय में साक्षरता प्रतिशत 40.9 प्रतिशत है, जिसमें 51.7 पुरुष और 42.9 महिलाएं हैं। 2011 की जनगणना के अनुसार, उनकी कुल आबादी का हिस्सा 18475

(43.75%) है, जिसमें से 6605 (35.75%) मुख्य श्रमिक हैं, जिनमें से 3854 (20.86%) कृषि मजदूर हैं।

तालिका 4.9: उत्तर प्रदेश में विभिन्न कार्यों के विवरण के साथ जनजातिवार सूची

क्रम संख्या	सभी जनजातीयां	कुल आबादी	कुल खेती करने वाले	कृषि मजदूर	गृहस्थी उद्योग	अन्य काम करने वाले
1-	कुल जनजातियाँ	113423	57036	84760	7415	63266
2-	भोटिया	5196	91	121	40	816
3-	बुक्सा	4710	101	421	19	270
4-	जौनसारी	3720	209	252	26	258
5-	राजी	1295	4	62	17	241
6-	थारू	105291	12039	7567	770	4959
7-	गौंड	569035	23244	35279	3621	31049
8-	खरवार	160676	7348	13352	977	8199
9-	सहरिया	70634	7061	10276	106	2791
10-	पहरिया	901	55	154	0	4
11-	बैंगा	30006	1278	4081	72	1063
12-	पनिका	24862	1099	2261	63	1227
13-	अगरिया	17376	531	2092	64	530
14-	पतारी	132	1	9	0	2
15-	चेरो	4227	963	3854	171	1179
16-	भुइया	15599	293	1399	22	401

स्रोत-ए परिकलित, ए-11 राज्य प्राथमिक जनगणना का सार व्यक्तिगत अनुसूचित जनजातियों के लिए

पनिका जनजाति- पनिका की उत्पत्ति के बारे में बहुत कम जानकारी है। हालांकि कुछ सूत्रों का कहना है कि पनिका द्रविड़ मूल के हैं, अन्य उन्हें केवल अवर्गीकृत के रूप में संदर्भित करते हैं। ये समुदाय ऐतिहासिक गोंड लोगों के बीच रहते हैं। पनिका जनजाति दो व्यापक समूहों में विभाजित है कबीरपंथी (सबसे बड़ा समूह) और शक कबीरपंथी संत कबीर की शिक्षाओं का पालन करते हैं। वे शराब, मांस और अन्य अशुद्ध प्रथाओं से बचते हैं। पणिका कभी जनजातियों अपनी ईमानदारी के लिए जाने जाते थे (कपूर 2005) पनिका जनजाति राज्य की कुल जनजातीय आबादी का 2.19 प्रतिशत है। पंनिका को राज्य के सोनभद्र और मिर्जापुर जिले में जनजाति के रूप में मान्यता प्राप्त है। इस समुदाय में साक्षरता प्रतिशत 55.8 प्रतिशत है, जिसमें 67.8 प्रतिशत पुरुष और 42.7 प्रतिशत महिलाएं 2011 की जनगणना के अनुसार हैं। इस समुदाय के लोग 10084 (40.55%) कामगार हैं, जिनमें से 1227(19.36%) अन्य कार्यों में लगे हुए हैं।

भुइन्या जनजाति :- भुइन्या जनजाति छत्तीसगढ़, उड़ीसा, बंगाल, बिहार, असम और उत्तर प्रदेश के कई हिस्सों में व्यापक रूप से पाई जाती है। भुइया संस्कृत शब्द भूमि से लिया गया है जिसका अर्थ है भूमि या पृथ्वी। इस जनजाति को भुइयां, भुइया और भुइया के नाम से जाना जाता है। जनजाति जनजातियों के मुंडा समूह से संबंधित है। उत्तर प्रदेश के सोनभद्र जिले में भुइया समुदाय को जनजाति के रूप में सूचीबद्ध किया गया (जनजाति अधिनियम 2002) 2011 की जनगणना के अनुसार भुइन्या जनजाति राज्य की कुल एसटी आबादी का केवल 1.37 प्रतिशत है। इस समुदाय की कुल साक्षरता दर 38.7 प्रतिशत है, जिसमें से 50.2 पुरुष और 26.7 महिलाएं हैं। इस समुदाय में कुल 6619 (42.43%) लोग श्रमिक हैं, जहां 2201 (14.10%) मुख्य श्रमिक हैं, अधिकतम कृषि मजदूर हैं, अपनी आजीविका को बनाए रखने

के लिए उनमें से अधिकांश शिकार, पशुपालन, मत्स्य पालन और वन उपज पर निर्भर हैं।(मोहंती 2010)

अगरिया जनजाति :- अगरिया जनजाति को भारत में सबसे महत्वपूर्ण लोहा-गलाने वाली जनजातियों में से एक माना जाता था, जो लोग अपने शिल्प और अपनी सामग्री बनाते थे । अगरिया कई कुलों में विभाजित हैं। कबीले बहिर्विवाही समूह हैं जो आम तौर पर कुलदेवतावादी होते हैं, जिनका नाम पौधों, जानवरों, पक्षियों आदि के नाम पर रखा जाता है। यह माना जाता है कि अगरिया गोंड की उपजाति है। अगरिया उत्तर प्रदेश का छोटा जातीय समूह है, जिसकी जनसंख्या 2011 में 17376 थी। अगरिया को सोनभद्र जिले, उत्तर प्रदेश राज्य (अधिनियम 2002) में जनजाति के रूप में मान्यता दी गई है। अगरिया राज्य के कुल अनुसूचित जनजाति की कुल जनसंख्या का 1.53 प्रतिशत है। अगरिया में साक्षरता दर बहुत कम 24.6 है जिसमें से पुरुष 33.4 प्रतिशत और महिलाएं 15.1 प्रतिशत हैं, इस समुदाय में अधिकांश महिलाएं निरक्षर हैं। अगरिया में केवल 3217(18.51%) लोग मुख्य श्रमिक हैं जिनमें अधिकतम खेतिहर मजदूर है। (मेहता 2004)

तालिका- 4.10: उत्तर प्रदेश में अनुसूचित जनजातियों में साक्षरता दर

क्रम संख्या	सभी जनजातियाँ	कुल जनसंख्या	कुल साक्षरता	साक्षरता पुरुष	साक्षरता महिला
1-	कुल जनजातियाँ	1134273	55.7	67.1	43.7
2-	भोटिया	5196	58.6	66.8	49.4
3-	बुक्शा	4710	50.6	60.4	39.1
4-	जौनसारी	3720	50.6	60.4	39.8
5-	राजी	1295	35.6	42.1	27.6
6-	थारू	105291	54.6	66.3	42.5
7-	गोंड	569035	61.2	73.5	48.4
8-	खरवार	160676	58.4	70.3	46.19
9-	सहरिया	70634	30.4	38.6	21.7
10-	पहरिया	901	47.2	61.9	32.5
11-	बैगा	30006	28.5	37.4	18.9
12-	पनिका	24862	55.8	67.8	47.7
13-	अगरिया	17376	24.6	33.4	15.14
14-	पटारी	132	56.5	71.2	42.9
15-	चेरो	4227	40.9	51.7	29.3
16-	भुइया	15599	38.7	50.2	26.7

स्रोत-ए परिकलित, ए-11 राज्य प्राथमिक जनगणना व्यक्तिगत अनुसूचित जनजातियों के लिए सार

पटारी जनजाति - पटारी जनजाति गोंड जनजाति की उप जाति है। वे गोंड साम्राज्य में अनुष्ठान विशेषज्ञ और सलाहकार हैं। विलियम क्रुक का दावा है कि पटारी वास्तव में मझवार मूल की हैं। पटारी उत्तर प्रदेश के सोनभद्र जिले और मध्य प्रदेश के आसपास के क्षेत्रों में पाए जाते हैं। वे आदिवासी पुजारी हैं। 2011 की जनगणना के अनुसार इस राज्य में 132 व्यक्ति

जनजाति के रूप में पहचाने गए हैं। कुल 61 पुरुष-महिला साक्षर हैं जिनमें से 87 पुरुष और 24 महिलाएं साक्षर हैं।(चिब 1977)

गोंड जनजाति-गोंड मध्य भारत के आदिवासी हैं। गोंड जनजातियों ने मध्य भारत में एक विशाल क्षेत्र में निवास किया है, अपने इतिहास की कई शताब्दियों के दौरान उन्होंने कई क्षेत्रों पर कब्जा कर लिया था जो बाद में उनका आदिवासी निवास बन गया। राजनीतिक रूप से गोंडवाना के रूप में जाना जाने वाला क्षेत्र गोंड राज्य 17 वीं से 19 वीं शताब्दी के मध्य तक सबसे मजबूत राजनीतिक शक्ति थे। गोंड को आर्यों के आक्रमण से पहले भारत में दुनिया की सबसे पुरानी जनजाति और उनके निवास स्थान के रूप में मान्यता प्राप्त है। गोंड खुद को रावण का वंशज बताते हैं। गोंड देश में दूसरी सबसे बड़ी जनजाति हैं और उत्तर प्रदेश में सबसे बड़ी जनजातीय आबादी है (जनगणना 2011) गोंड और उनकी चार उपजातियाँ- धुरिया, नायक, ओझा, पटारी और राजगोंड को पूर्वी उत्तर प्रदेश के तेरह जिलों में जनजातियों के रूप में मान्यता प्राप्त है। गोंड 2011 की जनगणना के अनुसार उत्तर प्रदेश की कुल अनुसूचित जनजाति की आबादी का 50.16 प्रतिशत है। गोंड समुदाय में साक्षरता प्रतिशत 61.2 प्रतिशत है, जिसमें 73.5 पुरुष और 48.4 प्रतिशत महिलाएं हैं। (मेहता 1984)

उत्तर प्रदेश की जनजातियाँ अभाव की स्थिति में जी रही हैं। उनकी आर्थिक स्थिति और उनका जीवन स्तर बहुत निम्न है। उनके पास न जमीन है, न शिक्षा और न ही एसेट्स, यही मुख्य कठिनाइयाँ हैं। उन्हें समाज में सच मायने में पिछड़ा कहा जाता है। राज्य में उनकी दोहरी स्थिति है, क्योंकि, अधिनियम 2002 ने कई समस्याओं को उठाया है, जिनका सामना जनजातियाँ कर रही हैं, कुछ जनजातियों को कुछ जिलों में अनुसूचित जाति के रूप में और कुछ अन्य में अनुसूचित जनजातियों को अधिसूचित किया गया है और उस हद तक एक ही

समुदाय को उत्तर प्रदेश में दोहरी स्थिति प्राप्त है। जनजाति समुदायों को भी राज्य की सेवा में आरक्षण के लाभों से वंचित किया जा रहा है।

सोनभद्र एक परिचय

राज्य- उत्तर प्रदेश

जिला- सोनभद्र

जिला मुख्यालय- रॉबर्ट्सगंज

जनसंख्या (2011)- 1862559

विकास दर- 0.27

लिंग अनुपात- 918

साक्षरता- 64.03

क्षेत्रफल (वर्ग किमी)- 6788

घनत्व (/ वर्ग किमी)- 274

तहसील- दूधी, घोरावल, रॉबर्ट्सगंज

लोकसभा क्षेत्र- रॉबर्ट्सगंज

विधानसभा क्षेत्र- ओबरा, दुद्धी, घोरावल, रॉबर्ट्सगंज

भाषाएं- हिंदी, उर्दू

नदियां- सोन, रिहंड, कन्हर

सोनभद्र भारत के उत्तर प्रदेश का दूसरा सबसे बड़ा जिला है। सोनभद्र भारत का एकमात्र जिला है जो मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ झारखंड और बिहार के चार राज्यों से है। जिले में 6788 वर्ग किमी का क्षेत्रफल है और इसकी आबादी 1,862,559 (2011 की जनगणना) है, जिसमें प्रति वर्ग वर्ग 270 व्यक्तियों की जनसंख्या घनत्व है। सोनभद्र जनपद उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर मण्डल में 23°52' उत्तरी अक्षांश से 25°32' उत्तरी अक्षांश तथा 82°72' पूर्वी देशान्तर से 83°33 पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। इसकी सीमायें पांच राज्यों (उ.प्र., मध्य प्रदेश, छत्तीशगढ़, बिहार एवं झारखण्ड) के आठ जनपदों (मिर्जापुर, चंदौली, रोहतास, पलामू, गढ़वा, रीवा, सीधी तथा सरगुजा) का संगम स्थल है। इसके पूर्व में बिहार के रोहतास, झारखण्ड के गढवा एवं पलामू, दक्षिण में छत्तीसगढ़ के सरगुजा मध्य प्रदेश के सीधी, पश्चिम में मध्यप्रदेश के रीवा, उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर तथा उत्तर में उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर चन्दौली जनपद स्थित है। जनपद मुख्यालय रावर्टसगंज मिर्जापुर से लगभग 70 कि.मी. दक्षिण में तथा वाराणसी से 85 कि.मी. की दूरी पर वाराणसी शक्तिनगर राष्ट्रीय राज्य मार्ग पर स्थित है। क्षेत्रफल की दृष्टि से उत्तर प्रदेश के दूसरे सबसे बड़े जिले सोनभद्र है।[7]

प्रशासनिक सरंचना

विंध्याचल मण्डल में तीन जिले अर्थात मिर्जापुर, सोनभद्र और भदोही शामिल हैं, और इसका नेतृत्व मंडलायुक्त विंध्याचल करते हैं। आयुक्त, मण्डल में स्थानीय सरकारी संस्थानों के प्रमुख हैं, वह मण्डल में बुनियादी ढांचे के विकास के प्रभारी हैं, और विभाजन में कानून और व्यवस्था बनाए रखने के लिए भी जिम्मेदार हैं।

सोनभद्र जिला प्रशासन का नेतृत्व सोनभद्र के जिलाधिकारी करते हैं। जिलाधिकारी को मुख्य विकास अधिकारी और अपर जिलाधिकारी द्वारा सहायता दी जाती है।

जिला 04 तहसील (रॉबर्ट्सगंज, घोरावल और दुद्धी ,ओबरा) और 08 विकास खण्ड (रॉबर्ट्सगंज, घोरावल, चतरा, नगवां, चोपन, बभनी, मयुरपुर और दुद्धी) में बांटा गया है। प्रत्येक तहसील का नेतृत्व एक उप जिलाधिकारी के द्वारा होता है।

सोनभद्र जिला पुलिस की अध्यक्षता पुलिस अधीक्षक करते हैं । सोनभद्र पुलिस में 03 सर्किल कार्यालय और 16 पुलिस स्टेशन शामिल हैं।

मानचित्र-1

ऊपर दिया हुआ सोनभद्र जिले का नक्शा (मानचित्र) राष्ट्रीय राजमार्ग, सड़क, रेलवे, नदी, जिला मुख्यालय, जिला सीमा, प्रमुख शहरों और गांवों को दर्शाता है|

सोनभद्र जिले की अनुसूचित जनजाति की आबादी

त्रिस्तरीय पंचायत चुनाव को लेकर शासन स्तर पर तैयारी चल रही है। जिले में भी इसे लेकर प्रयास जारी है। जिला प्रशासन ने अनुसूचित जनजाति की आबादी का सत्यापन फिर से कराना शुरू कर दिया है। त्रिस्तरीय पंचायत चुनाव को लेकर पूर्व में ही सीटों के परिसीमन और आबादी का निर्धारण किया जा चुका है। वर्ष 2011 की जनगणना के आधार पर जिले में ग्रामीण क्षेत्र की कुल आबादी 15,60,299 लाख है। इसमें अनुसूचित जनजाति का भी ब्लॉकवार आबादी का निर्धारण किया जा चुका है।

वर्ष 2011 की जनगणना के आधार पर आबादी

वर्ष 2011 की जनगणना के आधार पर जिले में अनुसूचित जनजाति की कुल आबादी करीब तीन लाख 65 हजार 601 आंकी गई है। इसमें नगवां ब्लॉक में 27,599, चतरा में 6902, राबर्ट्सगंज में 13898, घोरावल में 11562, चोपन में 73175, म्योरपुर में 83203, दुद्धी में 62082, बभनी में 52093, करमा में 2648 और कोन ब्लॉक की अनुसूचित जनजाति की आबादी 32439 है। जबकि ग्रामीण क्षेत्रों की कुल आबादी 1560299 आंकी गई है। इसमें अनुसूचित जाति 383705, अन्य पिछड़ा वर्ग 630096 और सामान्य वर्ग की आबादी 180897 है। पंचायत राज निदेशालय में जिला पंचायत राज अधिकारियों के हुए प्रशिक्षण में आबादी को आधार मानकर और वर्ष 1995 से अब तक आरक्षण को आधार मानकर चुनाव में सीटों का आरक्षण दी गई है।

सोनभद्र जिले में पंचायत क्षेत्र सदस्यों की आरक्षण सूची में बदलाव

जिले के 629 ग्राम पंचायत, 7778 ग्राम पंचायत सदस्य, 781 क्षेत्र पंचायत सदस्य, 10 ब्लाक प्रमुख और 31 जिला पंचायत सदस्य पद के लिए चुनाव होना है। इसके लिए बुधवार की शाम को आरक्षण सूची जारी की गई थी। सूची जारी के होने के बाद ही कई जगह से आपत्ती आनी शुरू हो गई है। कोई अपने ग्राम पंचायत का आरक्षण बदलवाना चाहता है तो कोई क्षेत्र पंचायत या जिला पंचायत का आरक्षण बदलने के लिए आपत्तियां दाखिल कर सकता है।

पांच ब्लॉकों के क्षेत्र पंचायत सदस्यों के निर्वाचन क्षेत्र की आरक्षण सूची

ब्लॉक का नाम - घोरावल

अनुसूचित जाति महिला- सतौहा, खुटहां, बिसरेखी, पुरना, इमलीपोखर, कन्हारी प्रथम, परसौना प्रथम, परसौना द्वितीय, बर, मिझुन-देवगढ़, कोहरथा, गुरूवल, बेलवनिया, गुरेठ-अहरौरा, उचका।

अनुसूचित जाति- तिलौलीकला प्रथम, तिलौलीकला द्वितीय, केवली मय देवली, कनेटी, नेवारी, भैंसवार प्रथम, जुड़िया, नौगवां नंदलाल, धरसड़ा, दीवा, रेही, मुक्खा, मूर्तियां द्वितीय, मूर्तियां प्रथम, तेंदुहार, बरदिया, सतद्वारी, शिवद्वार, डोरिहार, मझिगवां चौहान, वीरकला, डोमखरी, बकौली, कुसुम्हा, मोराही, सरवट, जमगांव, कोलकाड़ी, सहूआर।

अनुसूचित जनजाति महिला- जुड़ौली कोलानी, रघुनाथपुर

अनुसूचित जनजाति- कड़िया, कन्हारी द्वितीय, सिलहटा, दुगौलिया।

पिछड़ा महिला- खरुआंव, पेढ़ प्रथम, पेढ़ तृतीय, भैंसवार तृतीय, जमगाई, खजुरौल, बेलाटांड़, ढुठेर, बिछिया

पिछड़ा वर्ग क्षेत्र- मरसड़ा, केवटा द्वितीय, मधका, तेंदुआ, भरकना, खड़देऊर, पड़वनिया, लोहांड़ी, बरौली, डीबर, सोतिल, मुडिलाडीह, मसी आदिनाथ, सिद्धी, मुसरधारा, मराची, खैरा, दुरावल खुर्द

महिला के लिए आरक्षित क्षेत्र- करींबरांव, पिडरिया, विसुंधरी, भैंसवार द्वितीय, केवटा प्रथम, सिरसाई, घुवास, महांव

अनारक्षित- पेढ़ द्वितीय, देवरीकाठ, भरौली, भवना, हिनौती, खगिया, गड़मा, तेंदुई, बालडीह, कूसीनिस्फ, ओड़हथा, शाहगंज, जमगाई ब, डोहरी, अमउड़, डाभा, ईनम

ब्लॉक का नाम- कोन

अनुसूचित जाति - कचनरवा-3,कचनरवा,4,,करईल-2,किशुनपुरवा, रोरवा, खरौधी-1,खेमपुर-2 ,महिउद्दीनपुर, रामगढ़-1

अनुसूचित महिला- बागेसोती-2,मिटिहिनिया,बरवाडीह,रामगढ़-2,नौडिहा।

अनुसूचित जनजाति- पिपरखाड-2,पिपरखाड-3,कुडवा-2,कचनरवा-5,कचनरवा-7 कर ईल-1, निगाई-1निगाई-3, पिण्डारी,ब्रहमोरी।

अनुसुचित जनजाति महिला- गिधिया-2,कुडवा-3, निगाई-2,बोधाडिह, करहिया, चननी।

पिछडा जाति- पिपरखाड-1,कचनरवा-6, बागेसोती-3,खरौधी-2,मिश्री, बरवाखाडं, मझगवां, खेतकटवा, खेमपुर-1

पिछडा जाति महिला- नकतवार, देवाटन, कोन-1,कोन-2, चकरिया,

महिला - चांचीकला, चेरवाडीह

अनारक्षित - गिधिया-1,कुडवा-1, कचनरवा-1 कचनरवा-2,बागेसोती-1,बागेसोती-4,बागेसोती-5

ब्लॉक का नाम - नगवां

अनुसूचित जनजाति महिला-कजियारी, सूअरसोत खुर्द, बाराडाड़, सरईगाढ़ तृतीय, मऊकला।

अनुसूचित जाति:- तेनुआ, पड़री, रायपुर, गोटीबांध, सिकरवार, नगांव, देवरी मय देवरा, बिजवार, पनीकप कला।

अनुसूचित महिला:- कोदई, ढोसरा, मड़पा।

अनुसूचित जाति:- डोरिया, नंदन, दुबेपुर, कम्हरिया, पटवध, ददरेव।

पिछड़ी महिला :- आमडीह, सरईगाढ द्वितीय, बनबहुआर,सोहदवल,

पिछड़ी जाति :- खलियारी, मकरीबारी, मरकुड़ी, रामपुर, केवटम, मझुई, खोड़ैला।

अनारक्षित:- सरईगाढ प्रथम, वैनी,चेरूई, बैजनाथ,पनौरा,बाकी

ब्लॉक का नाम- चतरा ब्लॉक

अनारक्षित-ढोढरी, बेलगाई, बनौली, कसारी, पिथौरी, पकरहट, पुरना कलां, पन्नूगंज, पटना प्रथम, रामगढ़ प्रथम, रामगढ़ द्वितीय, संडी, चपईल, अईलकर।

महिला-लेडुआं, पड़री खुर्द, सिलथम द्वितीय, बिरधी, कोरियांव, करवनियां, करौंदिया।

पिछड़ी-ऐलाई, करमांव, किचार, संड़ा, सरई, सौली, नरोखर, नौडीहा, गुल्लीडाढ़।

पिछड़ी महिला-खडुई, ऊंची खुर्द, बरईल, बगही, नेवारी।

अनुसूचित जाति- धर्मदासपुर प्रथम, बभनियांव, बबुरी, कुसुम्हा, कूरां कलां, सिलथम प्रथम, भुसौलियां, पड़री कलां, सेहूआं, चरकोनवां, जगदीशपुर, गुरौटी खुर्द।

अनुसूचित महिला- धर्मदासपुर द्वितीय, बबुरी, गिरियां, भीखमपुर, सोढ़ा द्वितीय।

अनुसूचित जनजाति-पटना द्वितीय, सोढ़ा प्रथम,

अनुसूचित जनजाति महिला-डोमरिया

ब्लॉक का नाम- दुद्धी ब्लॉक

अनारक्षित- बूटबेडवा प्रथम, मुड़ीसेमर प्रथम, हरनाकछार प्रथम,घिवही, बीडर द्वितीय, कटौन्धी द्वितीय, बघाडू प्रथम, बघाडू तृतीय, निमियाडीह, गोइठा।

अनुसूचित- धरतीडोलवा, धूमा द्वितीय, फुलवार द्वितीय, महुली प्रथम, अमवार द्वितीय, धनौरा प्रथम, धनौरा द्वितीय, बैरखड़।

अनुसूचित महिला- रजखड़ प्रथम, मनबसा, जाताजुआ, बरखोरहा।

अनुसूचित जनजाति- मुड़ीसेमर द्वितीय, हरनाकछार द्वितीय, केवाल द्वितीय, सुखड़ा, जोरुखाड़ प्रथम, फुलवार प्रथम, महुली द्वितीय, पतरिहा, पोलवा प्रथम, मल्देवा, दुम्हान प्रथम,

दुम्हान द्वितीय, बीडर प्रथम, तुर्रीडीह, रन्नू द्वितीय, डूमरडीहा प्रथम, खजूरी, पोलवा द्वितीय, बोम, हरपुरा।

अनसूचित जनजाति महिला- मझौली प्रथम, मझौली द्वितीय, सरडीहा, रन्नू प्रथम, बघाडू द्वितीय, नगवां प्रथम, नगवां द्वितीय,

डूमरडीहा द्वितीय, पिपरडीह, पकरी, धोरपा।

पिछड़ी-केवाल प्रथम, धूमा प्रथम,जोरुखाड़ द्वितीय, डूमरा, हथवानी, बीडर तृतीय, झारोकला, झारोखुर्द प्रथम, झारोखुर्द द्वितीय, मूरता, महुअरिया, अमवार प्रथम, टेढ़ा,

पिछड़ी महिला-सलैयाडीह प्रथम, सलैयाडीह, डालापीपर, गडदरवा, रजखड़ द्वितीय, दिघुल प्रथम, दिघुल द्वितीय।

महिला- सलैयाडीह तृतीय, मेदनीखाड़, कटौली महिला, कटौंधी प्रथम

त्रिस्तरीय पंचायत चुनाव 2021 की आरक्षण की सूची को जारी कर दी गई है। इस बार जिले के 629 ग्राम पंचायतों में 212 सीटें महिलाओं के लिए , जबकि 207 सीटें अनारक्षित हैं। वहीं जिला पंचायत सदस्य की 11 सीटों पर महिलाओं और ब्लाक प्रमुख की चार सीटों पर महिलाओं के लिये आरक्षित हैं। त्रिस्तरीय पंचायत चुनाव को लेकर आरक्षण की सूची जारी कर दी गई। जिला पंचायत राज अधिकारी के मुताबिक इस बार जिले की 629 ग्राम पंचायतों में 207 सीटें अनारक्षित हैं। जिला पंचायत अध्यक्ष की सीट महिला के लिए आरक्षित हो गई है। जिला पंचायत सदस्य की 31 सीटों में कुल 11 सीटे महिलाओं के लिए आरक्षित की गई हैं।

वहीं छह सीटें अनारक्षित हैं। जबकि, पांच सीटें पिछड़ी जाति के लिए आरक्षित हैं। शेष सीटें अनुसूचित जाति और जनजाति के लिए आरक्षित की गई हैं। ब्लाक प्रमुख के 10 पदों में चार सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित हैं। जबकि तीन सीटें अनारक्षित हैं। पिछड़ी के लिए एक सीट पिछड़ा वर्ग, एक अनुसूचित तथा एक अनुसूचित जनजाति के लिए आरक्षित की गई हैं। इसी प्रकार ग्राम प्रधान के 629 पदों पर 207 पद अनारक्षित हैं, जबकि महिलाओं के लिए 212 सीटें आरक्षित की गई हैं। क्षेत्र पंचायत सदस्य के 781 सीटों में 642 सीटें आरक्षित की गई हैं।

सन्दर्भ सूची :-

1. मैथ्यू, जार्ज, (1994), "पंचायत राज इन इण्डिया: नई दिल्ली, फ्राम लेजिसलेशन द मुवमेन्ट'', इन्स्टीट्यूट आफ सोशल साइंसेज, बी-7/18 सफदरगंज इक्लेव

2. उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत अधिनियम, (1994)

3. लखनऊ, उत्तर प्रदेश सरकार, संयुक्त प्रांत पंचायत राज अधिनियम, (1947)

4. उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत अधिनियम, (1961)

5. उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत अधिनियम, (1994)

6. पाणीग्रही, राजीव लोचन, (2010), 'पंचायती राज इन्स्टीट्यूशस इम्प्यूल्ड चैलेन्जेज', डिसकवरी पब्लिसिंग हाऊस, नई दिल्ली

7 . https://sonbhadra.nic.in/notice/zila-panchyet-sonbhadra/

8. दत्त, डा. महेश्वर, (2003), "गाँधी का पंचायती राज", (दिल्ली: हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निर्देशालय), प्रथम संस्करण.

9. मिश्र, डा. सचिदानन्द (1984), "प्राचीन भारत में ग्राम एवं ग्राम्य जीवन", (गोरखपुर: पूर्वा संस्थान, प्रथम संस्करण)

10. के. शेषाद्री, (1976), "भारतीय राजनीति तब और अब", दिल्ली प्रगति प्रकाशन, नई दिल्ली

11. राय, ओ.पी.: उत्तर प्रदेश ग्रामसभा, ग्राम पंचायत एवं भूमिप्रबन्ध समिति मैनुअल (नयी पंचायती राज व्यवस्था पर आधारित), (इलाहाबाद ला काटेज), 2001.

12. रजनी कोठारी, (1980), "भारत की राजनीति", ओरिएंट लॉन्गमैन लिमिटेड, नई दिल्ली

13. प्रसाद, विरकेश्वर (2003), "भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन एवं संवैधानिक विकास", (नई दिल्ली: ज्ञानदा प्रकाशन)

14. नारंग, ए.एस, (2005), "भारतीय शासन एवं राजनीति", (नई दिल्ली: गीतांजलि पब्लिशिंग हाऊस),

15. बिष्ट बी.एस (2006) ट्राइब्स ऑफ उत्तराखंड ए स्टडी ऑफ एजुकेशन हेल्थ हाइजीन एंड न्यूट्रिशन नई दिल्ली कल्पाज पब्लिकेशन पेज -105

16. साहनी अशोक कुमार (2014), "चेंजिंग सोसिओ इकोनॉमिक सनारियो अमोंग द ट्राइब्स ऑफ़ उत्तरखंड , आईजेएआरएमएसएस वॉल्यूम -3 पेज -375

17. सिंह, बच्चन: भारत में जाति प्रथा और दलित ब्राह्मणवाद, (वाराणसी: विश्व विद्यालय प्रकाशन), प्रथम संस्करण, 2006.

18. लिंटन, राल्फ (1945), "द कल्चरल बैकग्राउंड ऑफ पर्सनैलिटी", एपिलेटिन सेंचुरी क्राफ्ट्स, न्यूयॉर्क, पेज 31

19. ए.पी. अवस्थी, (2009), "भारतीय राज व्यवस्था, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल", आगरा 2009

20. ब्रह्मदेव शर्मा, सहभागिता विकेन्द्रीयकरण और विकास भारतीय लोक प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली

21. रामसूरत सिंह, उत्तर प्रदेश पंचायत राज अधिनियम तथा नियमावली (एलेयाला एजेंसी, इलाहाबाद)

22. चौधरी सरित के और चौधरी सुचेता सेन (2005) समकालीन भारत की आदिम जनजातियाँ नृवंशविज्ञान और जनसांख्यिकी खंड III दिल्ली मित्तल प्रकाशन पेज 131

23. मोहंती पी.के (2010) एनीक्लोपीडिया ऑफ प्रिमिफाइव ट्राइब्स इन इंडिया एंथ्रोपोलॉजी ट्राइबल स्टडीज, दिल्ली कल्पाज प्रकाशन पेज -510

24. डॉ मेहता प्रकाश चंद, (2004), "एटलस ऑफ इंडियन ट्राइब्स", नई दिल्ली डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस पेज -59

25. मेहता बीएच (1984) ए स्टडी ऑफ डायनेमिक्स ऑफ गोंड सोसाइटी, नई दिल्ली, कॉन्सेप्ट पब्लिशिंग कंपनी पेज -58-60 .

26. श्रीवास्तव,शिवानन्द, उत्तर प्रदेश पंचायती राज मेन्यूअल,इलाहाबाद हिन्द पब्लिकेशन हाऊस,1999

Census of India Website: Office of the Registrar General & Census Commissioner, India. (2019). Retrieved from http://censusindia.gov.in

http://panchayatiraj.up.nic.in/

https://censusindia.gov.in/2011-common/censusdata2011.html

https://sonbhadra.nic.in/notice/zila-panchyet-sonbhadra/

https://panchayat.gov.in/state/ut-pr-act

https://hindi.mapsofindia.com/uttar-pradesh/sonbhadra/sonbhadra-district-map.html

http://sec.up.nic.in/site/symbol.aspx

http://upscst.in/castelist.html

अध्याय-पंचम

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज संस्थाओ में जनजातियों की सहभागिता: एक आनुभविक अध्ययन

परिचय

भारत जैसे देश में जहाँ की जनसंख्या का एक बड़ा भाग आज भी गाँवों में रहता है, इसीलिये ग्रामों की उन्नति से ही देश की उन्नति एवं विकास सम्भव है। ग्रामीण समाज की उन्नति का एक महत्वपूर्ण माध्यम पंचायती राज व्यवस्था है। पंचायती राज व्यवस्था भारत के प्रजातंत्र की आत्मा है। पंचायती राज व्यवस्था का उद्देश्य भारत के विशाल ग्रामीण जनसमूह को प्रजातंत्र की शिक्षा देना तथा उन्हें प्रजातंत्र के सक्रिय नागरिक बनाने की क्षमता प्रदान करना है। वास्तव में ग्रामीण जीवन के लिये पंचायती राज व्यवस्था जो महत्वपूर्ण कार्य कर रही है, वह किसी भी दूसरे संगठन द्वारा सम्भव नहीं हो सकता है। पंचायती राज व्यवस्था में कार्यों को मूर्त रूप प्रदान करने में ग्राम प्रधानों की अहम भूमिका होती है। उन्हीं के प्रयासों के परिणामस्वरूप ग्राम पंचायतें अपने निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने में सक्षम हो पाती हैं। प्रस्तुत अध्याय में ग्राम्य विकास कार्यक्रमों में ग्राम पंचायतो की भूमिका का मूल्यांकन किया गया है। इस अध्याय में आदिवासी क्षेत्रो के ग्राम प्रधानों से कृषि विकास, पशु सुधार, स्वास्थ्य, अनुसूचित जाति कल्याण, निर्बल वर्ग कल्याण कार्यक्रमों को सम्पन्न कराने में भूमिका का अध्ययन किया गया है। साथ ही ग्राम पंचायत क्षेत्र में कौन-कौन सी समस्याएँ विद्यमान हैं, उनका भी अध्ययन किया है। इस अध्याय के अन्त में ग्राम प्रधानों के विभिन्न संदर्भों के प्रति दृष्टिकोणों को भी ज्ञात किया गया है। संकलित प्राथमिक आँकड़ों को अग्रगामी सारिणियों में प्रदर्शित किया गया है।

अब तक हमने भारत में पंचायती राज संस्थान और ग्रामीण महिलाओं की स्थिति पर चर्चा की। बेशक इसमें अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़े वर्ग भी शामिल हैं। जैसा कि मेरा अध्ययन उत्तर प्रदेश के सोनभद्र जिले के अनुसूचित जनजातियों तक सीमित है, इस पर अब परिकल्पना के आधार पर चर्चा की गयी है। उत्तर प्रदेश में वर्ष 1971 की जनगणना तक कोई जनजातीय आबादी नहीं थी। अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के आयुक्त सहित विभिन्न वैधानिक निकाय ने जनजातीय आबादी के जिलेवार की सूचना दी गयी है। वर्ष 2002 के अंत में, कुछ जनजाति समूहों को अनुसूची जनजाति सूची में रखा गया है। एकमात्र शेड्यूल गोंड जनजाति, जिसे शेड्यूल जनजाति के रूप में मान्यता प्राप्त है। इन सभी पाँच वर्षों की अवधि के दौरान इन जनजाति के लोगों ने विभिन्न विकास कार्यों के माध्यम से सबसे अधिक शिकार किया है। उत्तरप्रदेश प्रदेश का दक्षिण पूर्वी भाग राज्य का एक आदिवासी क्षेत्र है और इन सभी वर्षों के दौरान वे विकास से वंचित थे, जो उन सभी वर्षों में अपनी सुविधाओं से वंचित लोगों से सत्ता छीन लेते हैं वे समुदाय नक्सलवाद के रास्ते पर चल पड़े हैं। आदिवासियों को उनकी ही ज़मीनों से हिंसक रूप से उखाड़ फेंका गया है और समाज को सहानुभूतिपूर्वक उन ज़मीनों की बहाली पर विचार करना चाहिए, जहाँ सदियों से अपना अपना घर मान कर रह रहे हैं। अधिकांश अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लोग (लगभग 75%) गरीबी रेखा से नीचे रहते हैं। ऊंची जाति के शोषण ने उन्हें गुलामों की तरह काम करने के लिए मजबूर किया गया है , जिससे उनके साथ सामाजिक भेदभाव हो गया। आदिवासी समाज में आर्थिक विकास और शैक्षिक सुविधाओं की कमी हैं। आदिवासी स्त्री के पिछड़ेन का कारण है।

1. लड़कियों को स्कूल भेजने के लिए परिवार का विरोध 2. गांवों में असुरक्षा का डर 3. आवास, स्कूल, परिवहन और चिकित्सा सुविधाओं जैसी भौतिक सुविधाओं का अभाव है

4. लड़कियों को घरेलू काम करने के लिए मजबूर किया जाता है जो उन्हें स्कूल जाने से रोकती हैं। 5. परिवार के लिए कमाने के लिए काम करना लड़कियों को स्कूल जाने से रोकती है। 6. कई को कम उम्र में शादी करने के लिए मजबूर किया गया है जिस कारण वह स्कूल जाना बंद कर देती हैं। 7. अपनी आजीविका कमाने के लिए माता-पिता के साथ काम करने के वे भी अनपढ़ रह गए है। 8. घर से स्कूलों की दूरी के कारण भी शिक्षा नहीं प्राप्त कर पाई है। जीवन के प्रति आदिवासी लोक के पूरी तरह से अलग रवैये के कारण, समाज की वर्तमान व्यवस्था के साथ खुद को समायोजित करना मुश्किल हो जाता है। उनका ग्रामीण क्षेत्रो में रहने वाले आदिवासियों जीवन दृष्टिकोण अलग है। आजीविका का तरीका न केवल ग्रामीण लोगों की अन्य श्रेणियों से अलग है, बल्कि जीवन के प्रति उनका दृष्टिकोण अन्य निचली जातियो से भी काफी अलग है। अब उन्हें समाज की मुख्य धारा में लाने के लिए सरकार और अन्य गैर-सरकारी संगठनों (N.G.O.) द्वारा कई कार्यकम चलाये जाना अनिवार्य हो गया है। सरकारी अधिकारियों, समाज सुधारकों और एनजीओ को जीवन के प्रति अपने विचारों का सम्मान करने और उनकी समाजशास्त्रीय मानसिकता को समझने के लिए अपना रवैया बदलना चाहिए। यदि वे आदिवासी लोगों की ओर अपना हाथ बढ़ाते हैं, तो भारत की इक्कीसवीं सदी बेहतर आजीविका और सम्मानजनक जीवन शैली के साथ उनके लिए एक नई उम्मीद जगाएगी। पंचायती राज संस्थाओ के माध्यम से आदिवासी समाज के अपने स्वशासन और सरकारी योजनाओ से उनकी सामाजिक,आर्थिक, और राजनीतिक उत्थान संभव हो रहा है।

शोध के उद्देश्य विषय वस्तु को सामान्य रूप से उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से आदिवासी के राजनितिक सामाजिक-आर्थिक जीवन में हो रहे परिवर्तन की जाँच करना है ।

ग्रामीण विकास विभाग द्वारा चलाए जा रहे आदिवासी विकास कार्यक्रमों के प्रभाव तक पहुँचने के लिए सोनभद्र जिले (यू.पी.) का अध्ययन, आदिवासी पुरुष और महिलाओं की जागरूकता और सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक गतिविधियों में उनकी भागीदारी का अध्ययन करना, पंचायती राज व्यवस्था में आदिवासी समाज की भागीदारी की उभरती प्रवृत्ति का अध्ययन करना, आदिवासीयों के सशक्तीकरण के लिए विकास के सरकारी पोरग्रामों के कार्यान्वयन का मूल्यांकन करना, पंचायतों के निर्वाचित सदस्यों से अपेक्षित भूमिका और उनके द्वारा देखे गए प्रदर्शन के स्तर का अध्ययन करना रहा है।

अनुसूचित जनजाति ग्राम प्रधान का चुनाव के कारण

एक जटिल समाज में विभिन्न व्यक्तियों के मध्य सामाजिक अन्तःक्रियाएँ निरन्तर होती रहती हैं। यह पद के अनुरूप व प्रस्थिति से सम्बन्धित होती हैं। इलियट एवं मैरिल ने लिखा है कि, ''प्रस्थिति व्यक्ति का वह पद है, जिसे व्यक्ति किसी समूह में अपने लिंग, आयु, परिवार, वर्ग, व्यवसाय, विवाह व उपलब्धियों आदि के फलस्वरूप प्राप्त करता है।'' भूमिका का तात्पर्य कार्य से होता है, इसका निर्धारण पद या प्रस्थिति के अनुसार होता है। भूमिका को प्रस्थिति से अलग नहीं किया जा सकता है, क्योंकि भूमिका प्रस्थिति का गत्यात्मक पक्ष है। लिण्टन ने भूमिका को परिभाषित करते हुए लिखा है कि, ''भूमिका शब्द का प्रयोग किसी विशेष प्रस्थिति से सम्बन्धित सांस्कृतिक प्रतिमान की सहायता के लिये किया जाता है, जो किसी विशेष पद से सम्बन्धित व्यक्ति या व्यक्तियों को समाज द्वारा प्रदत्त होती है।'' सार्जेणट ने भी लिखा है कि, ''किसी व्यक्ति की भूमिका सामाजिक व्यवहार का ही एक प्रतिमान अथवा प्रारूप है, जिसे वह अपने समूह के सदस्यों की प्रत्याशाओं के अनुसार एक विशेष प्रस्थिति में ठीक समझता है।'' प्रस्थिति एवं भूमिका में इतना घनिष्ठ सम्बन्ध है कि दोनों को एक दूसरे का

पूरक कहा जाता है। अतः कहा जा सकता है कि बिना प्रस्थिति के कोई भूमिका नहीं होती है और बिना भूमिका के कोई प्रस्थिति नहीं होती है। किसी भी सामाजिक व्यवस्था में व्यक्ति की जो सामाजिक प्रस्थिति है उसी के अनुसार व्यक्ति के आचरण की प्रत्याशा की जाती है। यह प्रस्थिति के अनुसार आचरण की प्रत्याशा और उसके अनुरूप व्यवहार की सामाजिक भूमिका है।

लोकतंत्र राजनैतिक विकास का आधार है। लोकतांत्रिक व्यवस्था के आधार पर समाज के सभी वर्ग के लोगों को राजनीति में आने का अवसर प्राप्त होता है। साथ ही लोकतांत्रिक संस्थाओं के प्रति जनसाधारण की निष्ठा बनी रहे इसके लिए आवश्यक है कि वयस्क मताधिकार पर आधारित चुनाव समय-समय पर होते रहें। प्रजातांत्रिक व्यवस्था में राजनीतिकरण की प्रक्रिया अधिक गतिशील रहती है। वर्तमान में गाँव से लेकर सम्पूर्ण देश तक में राजनीतिकरण की प्रक्रिया के प्रभाव को देखा जा सकता है। प्रस्तुत शोध में उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था और अनुसूचित जनजातियों सूचनादाताओं से यह ज्ञात किया है कि उन्होंने ग्राम प्रधान का चुनाव क्यों लड़ा है?

संकलित आँकड़ों को सारिणी संख्या 5.1 में प्रदर्शित किया गया है।

सारिणी संख्या 5.1

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था और अनुसूचित जनजाति सूचनादाताओं के ग्राम प्रधान का चुनाव लड़ने के कारणों के आधार पर वर्गीकरण

क्र.सं.	चुनाव लड़ने के कारण	संख्या	प्रतिशत
1.	ग्रामीण विकास करना	103	34-33%
2.	समाज सेवा करना	91	30-33%
3.	पारिवारिक प्रतिष्ठा को बढ़ाना	67	22-34%
4.	धन अर्जित करना	39	13-00%
	योग	300	100-00%

उपरोक्त सारिणी से स्पष्ट होता है कि अध्ययन में सम्मिलित 103 (34.33%) सूचनादाताओं (जनजाति समुदाय) ने ग्राम प्रधान का चुनाव ग्रामीण विकास करने के कारण, 91 (30.33%) ने समाज सेवा करने के कारण लड़ा गया है। 67 (22.34%) ने यह चुनाव पारिवारिक प्रतिष्ठा बनाने के लिये तथा 39 (13.00%) ने धन अर्जित करने के लिए लड़ा है। उपरोक्त से स्पष्ट होता है कि अधिकांश (64.66%) सूचनादाताओं ने ग्राम प्रधान का चुनाव ग्रामीण विकास एवं समाज सेवा करने के उद्देश्य को दृष्टिगत रखते हुए लड़ा है। यह तथ्य सूचनादाताओं का ग्रामीण समाज के प्रति समर्पित भाव को प्रकट करता है। ग्राम प्रधान चुनाव में विजय होने के कारण किसी भी देश की उन्नति एवं विकास में नेताओं की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। किसी भी व्यक्ति के चुनाव में विजयी होने के लिए आवश्यक है कि उसमें कुछ विशिष्ट गुण एवं योग्यताएँ हों। आलपोर्ट ने ने नेताओं के कुछ विशिष्ट गुणों जैसे -

शारीरिक शक्ति, तीव्रबुद्धि, सामाजिकता, प्रेरणात्मकता, कार्य संलग्नता, व्यापक समझ, फुर्तीलापन, मधुरवाणी, दृढ़ता, स्पष्टवादिता आदि का उल्लेख किया है। उनकी मान्यता है कि इन गुणों से सम्पन्न व्यक्ति सहजता के साथ चुनावों में विजय प्राप्त कर लेता है। इसी प्रकार लुईस की मान्यता है कि किसी भी व्यक्ति के चुनाव में विजयी होने के लिए उसमें कुछ विशिष्ट गुण जैसे - सम्पत्ति, शिक्षा, परिवार की प्रतिष्ठा, बाहर के लोगों से सम्बन्ध, अवकाश, व्यक्तित्व के गुण, परिवार में सदस्यों की अधिक संख्या आदि होने चाहिए।

प्रस्तुत शोध द्वारा उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था और अनुसूचित जनजातियों सूचनादाताओं अनुसूचित जनजाति समुदाय से ज्ञात किया है कि उनके चुनाव में विजयी होने के क्या कारण रहे हैं?

संकलित तथ्यों को सारिणी संख्या 5.2 में प्रदर्शित किया गया है।

सारिणी संख्या 5.2

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था और अनुसूचित जनजातिय सूचनादाताओं द्वारा ग्राम प्रधान चुनाव में विजयी होने के कारणों के आधार पर वर्गीकरण

क्रम संख्या	चुनाव में विजयी होने के कारण	संख्या	प्रतिशत
1-	परिवार की प्रतिष्ठा , शिक्षा एवं स्पष्टीकरण	169	56-33%
2-	जनजातीय सदस्यों एवं नेताओ का सहयोग	97	32-33%
3-	ईमानदारी, भूस्वामी एवं अधिक आयु	34	11-34%
	योग	300	100-00%

सारिणी संख्या 5.2 की विवेचना से स्पष्ट होता है कि 169 (56.33%) सूचनादाताओं ने ग्राम प्रधान चुनाव में विजयी होने का कारण परिवार की प्रतिष्ठा, शिक्षा एवं स्पष्टवादिता को माना है। 97 (32.33%) ने इसका कारण जातीय सदस्यों एवं नेताओं का सहयोग देना माना है तथा शेष 34 (11.34%) ने ग्राम प्रधान चुनाव में विजयी होने का कारण ईमानदारी, भूस्वामित्व तथा अधिक आयु को उत्तरदायी कारण माना हैं। उपरोक्त से स्पष्ट होता है कि अधिकांश (56.33%) सूचनादाताओं ने ग्राम प्रधान चुनाव में विजयी होने का प्रमुख कारण परिवार की प्रतिष्ठा, शिक्षा एवं स्पष्टवादिता को प्रमुख रूप से उत्तरदायी कारण माना है। उनकी मान्यता है कि इन्हीं प्रमुख कारणों से उन्हें ग्राम प्रधान चुनाव में विजय प्राप्त हुयी है।

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था और अनुसूचित जनजाति सूचनादाताओं द्वारा ग्राम पंचायतों की बैठकों में भाग लेना

त्रिस्तरीय पंचायत राजव्यवस्था की ग्राम पंचायत सबसे निम्नतम स्तर की इकाई है। ग्रामीण क्षेत्रों में कार्य करने की पूर्ण जिम्मेदारी ग्राम पंचायतों की है। ग्राम पंचायत में स्वशासन से सम्बन्धित सभी महत्वपूर्ण कार्य सम्पादित होते हैं। शासन ने पंचायतों को स्थानीय स्वशासन की स्वतंत्र इकाइयाँ बनाने हेतु विविध कार्यों, अधिकारों, कर्तव्यो एवं शक्तियों को ग्राम पंचायतों को प्रदान किया है। शोध के माध्यम से उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था और अनुसूचित जनजातियों सूचनादाताओं द्वारा अनुसूचित जनजातियो का ग्राम पंचायतों की बैठकों ज्ञात किया है कि क्या सूचनादाता अनुसूचित जनजातिय समुदाय ग्राम पंचायतों की बैठकों में नियमित रूप से भाग लेते हैं?

संकलित तथ्यों को सारिणी संख्या 5.3 में प्रदर्शित किया गया है।

सारिणी संख्या 5.3

ग्राम पंचायतों की बैठकों में नियमित भाग लेने के ग्राम पंचायतों बैठकों में आधार पर वर्गीकरण

क्रम संख्या	ग्राम पंचायतों की बैठकों में नियमित भाग लेते हैं	संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	219	73-00%
2.	नहीं	81	27-00%
	योग	300	100-00%

अध्ययन में सम्मिलित 219 (73.00%) सूचनादाताओं का कथन है कि वह ग्राम पंचायतों की बैठकों में नियमित रूप से भाग लेते हैं तथा शेष 81 (27.00%) सूचनादाता ग्राम पंचायतों की बैठकों में नियमित भाग नहीं लेते हैं। उपरोक्त से स्पष्ट होता है कि अधिकांश (73.00%) सूचनादाता ग्राम पंचायतों की बैठकों में नियमित रूप से भाग लेते हैं। यह तथ्य उनके उत्तरदायित्व के प्रति समर्पणभाव को प्रकट करता है।

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था और अनुसूचित जनजाति सूचनादाताओं द्वारा ग्राम प्रधानों के कर्तव्यों एवं अधिकारों की जानकारी

पंचायती राज व्यवस्था को आधुनिक समाज की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर समुचित अधिकार दिये गये हैं। उन्हें स्वशासन के अधिकार प्रदान किये गये हैं। पंचायती राज के अन्तर्गत ग्रामीण प्रशासन को तीन श्रेणियों - ग्राम स्तर, खण्ड स्तर तथा जिला स्तर में

विभक्त किया गया है। ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत समस्त प्रशासनिक तथा न्यायिक और कल्याण कार्यों को पूरा करती है। खण्ड स्तर पर पंचायतें और जिला स्तर पर जिला परिषद ग्रामीण प्रशासनिक तथा न्यायिक और कल्याण कार्यों को सम्पन्न करती है। पंचायती राज व्यवस्था को प्रभावशाली रूप से लागू करने हेतु ग्राम प्रधानों के कर्तव्यों एवं अधिकारों को निर्धारित किया गया है। ग्राम प्रधानों को अपने कर्तव्य एवं अधिकारों की पूर्णरूपेण जानकारी होने पर ही वह उसी के अनुरूप अपनी भूमिका निर्वहन कर सकेंगे। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु सरकार समय-समय पर गोष्ठियाँ, कार्यशालाएँ आदि का आयोजन भी करती हैं। शोधार्थी ने सूचनादाताओं से ज्ञात किया है कि क्या उन्हें ग्राम प्रधानों के निर्धारित कर्तव्य एवं अधिकारों की विस्तार से जानकारी है?

इस संदर्भ में संकलित आँकड़ों को सारिणी संख्या 5.4 में प्रदर्शित किया गया है।

सारिणी संख्या 5.4

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था और अनुसूचित जनजाति सूचनादाताओं द्वारा ग्राम प्रधानों के अधिकार एवं कर्तव्यों की विस्तार से जानकारी के आधार पर वर्गीकरण

क्रम संख्या	ग्राम प्रधानों के अधिकार एवं कर्तव्यों की विस्तार से जानकारी है	संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	193	64-33%
2.	नहीं	107	35-67%
	योग	300	100-00%

उपरोक्त सारिणी के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि 193 (64.33%) सूचनादाताओं को ग्राम प्रधानों के अधिकार एवं कर्तव्यों की विस्तार से जानकारी है तथा शेष 107 (35.67%) को इनकी विस्तार से जानकारी नहीं है। उपरोक्त से स्पष्ट होता है कि अधिकांश (64.33%) सूचनादाताओं को ग्राम प्रधानों के अधिकार एवं कर्तव्यों की विस्तार से जानकारी है। वह इसी जानकारी के आधार पर ही अपने उत्तरदायित्वों का निर्वहन करते हैं।

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था और अनुसूचित जनजाति सूचनादाताओं द्वारा कृषि विकास कार्यक्रमो को लागू कराने में भूमिका

वर्तमान समय में भारतवर्ष अनेक जटिल समस्याओं का शिकार बना हुआ है। यह कृषि प्रधान देश होते हुए भी कृषि में पिछड़ा हुआ है। इसका मुख्य कारण कृषि सम्बन्धी सुविधाओं का न होना और जो सुविधाएँ एवं कार्ययोजनाएँ हैं, उन्हें सही रूप में लागू न करना। साथ ही देश में कुटीर उद्योगों व छोटे उद्योगों की अवस्था भी काफी शोचनीय है। ग्रामीण समाज की समस्याओं के निराकरण करने एवं ग्रामीण समाज का पुननिर्माण करने के उद्देश्य से ग्राम पंचायतों को कृषि विकास कार्यक्रमों को सुचारू रूप से संचालित कराने में महत्वपूर्ण भूमिका प्रदान की गयी है। शोधार्थी ने इसी विचार को दृष्टिगत रखते हुए सूचनादाताओं से ज्ञात किया है कि क्या वह ग्रामीण व्यक्तियों को विभिन्न कृषि विकास कार्यक्रमों का लाभ दिलाने में भूमिका निभाते हैं?

इस संदर्भ में संकलित तथ्यों को सारिणी संख्या 5.5 में प्रदर्शित किया गया है।

सारिणी संख्या 5.5

कृषि विकास कार्यक्रमो को लागू कराने में भूमिका के आधार पर वर्गीकरण

क्रम संख्या	कृषि विकास कार्यक्रम	लाभ दिलाने में भूमिका निभायी है		योग
		हाँ	नहीं	
1-	उन्नत बीज	241	59	300
		80-33%	19-67%	100-00%
2-	रासायनिक उर्वरक	207	93	300
		69-00%	31-00%	100-00%
3-	कीटनाशक दवाएं	237	63	300
		79-00%	21-00%	100-00%
4-	नए कृषि यन्त्र	191	109	300
		63-67%	36-33%	100-00%
5-	कृषि आधारित कुटीर उद्योग	61	239	300
		20-33%	79-67%	100-00%

उपरोक्त सारिणी की विवेचना से स्पष्ट होता है कि अध्ययन में सम्मिलित 24 (80.33%) सूचनादाताओं ने ग्रामीण क्षेत्रीय व्यक्तियों को उन्नतशील बीज दिलाने में मदद की है तथा शेष 59 (19.67%) ने ऐसा नहीं किया है। 207 (69.00%) सूचनादाताओं ने क्षेत्रीय ग्रामीण आदिवासी व्यक्तियों को रासायनिक उर्वरक दिलाने में आवश्यक सहायता की है तथा शेष 93 (31.00%) व्यक्तियों ने ऐसा नहीं किया है। 237 (79.00%) सूचनादाताओं ने क्षेत्रीय ग्रामीण आदवासी व्यक्यिों को कीटनाशक दवायें दिलाने में आवश्यक सहायता की है तथा शेष 63

(21.00%) ने ऐसा नहीं किया है। 191 (63.67%) सूचनादाताओं ने क्षेत्रीय ग्रामीण आदिवासी व्यक्तियों को नये कृषि यंत्र दिलाने में आवश्यक मदद की है तथा शेष 109 (36.33%) ने ऐसा नहीं किया है। 61 (20.33%) सूचनादाताओं ने कृषि आधारित कुटीर उद्योग को खुलवाने में आवश्यक मदद की है तथा शेष 239 (79.67%) सूचनादाताओं ने इस संदर्भ में क्षेत्रीय व्यक्तियों की मदद नहीं की है। उपरोक्त से स्पष्ट होता है कि अधिकांश सूचनादाताओं ने क्षेत्रीय ग्रामीणों को उन्नतशील बीज, रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक दवाएँ, नये कृषि यंत्र आदि का लाभ प्रदान कराने में उल्लेखनीय भूमिका निभाई है। अतः कहा जा सकता है कि कृषि विकास कार्यक्रमों का ग्रामीण व्यक्तियों को लाभ दिलाने में ग्राम प्रधानों की भूमिका सराहनीय है।

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था का अनुसूचित जनजाति सूचनादाताओं द्वारा पशु सुधार कार्यक्रमों को लागू कराने में भूमिका

ग्रामीण अर्थव्यवस्था में पशुओं का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। परम्परागत कृषि कार्य में बैलों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। वर्तमान समय में पशुपालन ग्रामीण अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण अंग है। गाय, भैंस, बकरी आदि पशुओं के पालने से नकद धनराशि प्राप्त होती है जो कि ग्रामीण व्यक्तियों की आर्थिक मदद करने में अहम भूमिका निभाती है। सरकार ने ग्रामीण क्षेत्रों में पशु सुधार के अनेकों कार्यक्रमों को संचालित किया है जैसे - पशु चिकित्सालय, कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र, पशु आहार की व्यवस्था आदि है। ग्राम प्रधान इन पशु सुधार कार्यक्रमों को संचालित करने में अहम भूमिका निभाते हैं। शोधार्थी ने सूचनादाताओं से ज्ञात किया है कि क्या उन्होंने अपने क्षेत्रों में विभिन्न पशु सुधार कार्यक्रमों को लागू कराने में भूमिका निभाई है?

अध्ययन द्वारा संकलित आँकड़ों को सारिणी संख्या 5.6 में प्रदर्शित किया गया है।

सारिणी संख्या 5.6

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था का अनुसूचित जनजाति सूचनादाताओं द्वारा पशु सुधार कार्यक्रमों को लागू करवाने मे भूमिका के आधार पर वर्गीकरण

क्र.सं.	पशु सुधार कार्यक्रम	लाभ दिलाने में भूमिका		योग
		हाँ	नहीं	
1-	पशु चिकित्सा	187	113	300
		62.33%	37.67%	100.00%
2-	कृत्रिम गर्भाधान केॉद्र	159	141	300
		53.00%	47.00%	100.00%
3-	पशु आहार	196	104	300
		65-33%	34.67%	100.00%

उपरोक्त सारिणी की विवेचना से स्पष्ट होता है कि अध्ययन में सम्मिलित 187 (62.33%) सूचनादाताओं ने क्षेत्रीय ग्रामीण व्यक्तियों को पशु चिकित्सा का लाभ दिलाने में आवश्यक मदद की है तथा शेष 113 (37.67%) सूचनादाताओं ने ऐसा नहीं किया है। 159 (53.00%) सूचनादाताओं ने कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र की स्थापना करवाने एवं उसमें आवश्यक संसाधन उपलब्ध कराने में वांछित सहयोग प्रदान किया है तथा शेष 141 (47.00%) सूचनादाताओं ने इस कार्य में कोई भी सहयोग नहीं दिया है। 196 (65.33%) सूचनादाताओं ने पशु आहार ग्रामीण व्यक्तियों को उचित मूल्य पर उपलब्ध कराने में आवश्यक मदद की है तथा शेश 104 (34.67%) व्यक्तियों ने इस संदर्भ में कोई भी सहयोग नहीं दिया है। उपरोक्त से स्पष्ट होता है

कि अधिकांश सूचनादाताओं ने विभिन्न पशु सुधार कार्यक्रमों जैसे - पशु चिकित्सा, कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र, पशु आहार आदि का क्षेत्रीय ग्रामीण व्यक्तियों को लाभ दिलाने में आवश्यक सहयोग प्रदान कर महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है। इसी के परिणामस्वरूप पशुओं के स्वास्थ्य की दशाओं में उल्लेखनीय परिवर्तन आया है। स्वास्थ्य कार्यक्रमों को लार्गू कार्यकम कराने में भूमिका किसी भी राष्ट्र की उन्नति के लिए उस राष्ट्र के नागरिकों का स्वस्थ होना आवश्यक है। किसी भी राष्ट्र के व्यक्तियों की शक्ति तथा देश की उत्पादन क्षमता का मापदण्ड स्वास्थ्य होता है। राष्ट्र के उद्योगों तथा कृषि की उत्पादन क्षमता जनसंख्या पर निर्भर करती है। केवल रोगों की अनुपस्थिति का ही नाम स्वास्थ्य नहीं है, बल्कि यह व्यक्ति के प्राकृतिक तथा सामाजिक बाह्य वातावरण का समन्वय है और प्राणीमात्र के शारीरिक तथा मानसिक सामथ्र्य के अनुरूप विकास की स्थिति है। ग्रामीण जनसंख्या को स्वास्थ्य हेतु उपचार की सुविधाएँ प्रदान करने के उद्देश्य से सरकार ने न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य की मूलभूत सुविधाएँ पहुँचाने पर विशेष बल दिया है। राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति में आम जनता के लिए रोगों की रोकथाम, उपचार और पुनर्वास की व्यवस्था वाले प्रावधानों पर जोर दिया है। इसका उद्देश्य यह है कि ग्रामीण व्यक्तियों को प्राथमिक स्वास्थ्य परिचर्चा का दृष्टिकोण अपनाते हुए लोगों के स्वास्थ्य और उपचार की गतिविधियों में उनकी सीधी भागीदारी सुनिश्चित की जाय। उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था का अनुसूचित जनजातियों सूचनादाताओं द्वारा अनुसूचित जनजातियो में शोधार्थी ने अध्ययन में सम्मिलित सूचनादाताओं से ज्ञात किया है कि क्या उनकी विभिन्न स्वास्थ्य कार्यक्रमों का ग्रामीण व्यक्तियों को लाभ दिलाने में भूमिका रही है?

इस संदर्भ में संकलित आँकड़ों को सारिणी संख्या 5.7 में प्रदर्शित किया गया है।

सारिणी संख्या 5.7

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था का अनुसूचित जनजाति सूचनादाताओं द्वारा स्वास्थ्य कार्यक्रमों को लागू कराने मे भूमिका के आधार पर वर्गीकरण

क्र.सं.	स्वास्थ्य कार्यक्रम	लाभ दिलाने मे भूमिका		योग
		हाँ	नहीं	
1-	पौष्टिक आहार	233	67	300
		77.67%	22.33%	100%
2-	टीकाकरण	271	29	300
		90-33%	9.67%	100%
3-	प्रशिक्षित दाइयाँ	210 70.00%	90 30.00%	300 100%
4-	आंगनबाड़ी	265	35	300
		88.33%	11.67%	100%
5-	शौचालय	161 53.67%	139 46.33%	300 100%

उपरोक्त सारिणी के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि अध्ययन में सम्मिलित 233 (77.67%) सूचनादाताओं ने पौष्टिक आहार कार्यक्रम को लागू करने में भूमिका निभाई है तथा शेष 67 (22.33%) ने इस संदर्भ में कोई भी भूमिका नहीं निभाई है। 271 (90.33%) आदिवासी सूचनादाताओं ने टीकाकरण कार्यक्रम को ग्रामीण अदिवासी क्षेत्र में लागू कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है तथा शेष 29 (9.67%) ने इस संदर्भ में कोई भूमिका नहीं निभाई है। 210

(70.00%) सूचनादाताओं ने ग्रामीण क्षेत्र में प्रशिक्षित दाइयों की सेवाएँ उपलबध कराने में सहयोग प्रदान किया है तथा शेष 90 (30.00%) ने इस संदर्भ में कोई सहयोग नहीं दिया है। 265 (88.33%) सूचनादाताओं ने आंगनबाड़ी कार्यक्रम को क्षेत्र में लागू कराने में सहयोग प्रदान किया है तथा शेष 35 (11.67%) ने इस संदर्भ में कोई कार्य नहीं किया है। 161 (53.67%) आदिवासी सूचनादाताओं ने ग्रामीण क्षेत्रों में शौचालय निर्माण कार्यक्रम को लागू कराया है तथा शेष 139 (46.33%) ने इस संदर्भ में कोई प्रयास नहीं किया है। उपरोक्त से स्पष्ट होता है कि अधिकांश सूचनादाताओं ने पौष्टिक आहार, टीकाकरण, प्रशिक्षित दाइयों की सेवाएँ उपलब्ध कराना, आँगनबाड़ी, शौचालय निर्माण आदि स्वास्थ्य कार्यक्रमों को ग्रामीण क्षेत्र में लागू कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इन्हीं सकारात्मक प्रयासों के परिणामस्वरूप क्षेत्रीय व्यक्तियों को स्वास्थ्य सेवाओं का समुचित लाभ मिल रहा है।

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था का अनुसूचित जनजाति सूचनादाताओं द्वारा अनुसूचित जनजातियो के कल्याण कार्यक्रमों को में भूमिका

परम्परागत भारतीय समाज में अनेक जातियाँ ऐसी थीं, जिनकी समाज में स्थिति अत्यन्त निम्न ही नहीं थी, वरन् वह विभिन्न सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक, राजनैतिक, धार्मिक आदि निर्योग्यताओं से भी ग्रसित थीं। इन्हें विभिन्न नामों - 'अंत्यज', 'अस्पृश्य', 'दलित', 'हरिजन' आदि नामों से सम्बोधित किया जाता रहा है। स्वतंत्र भारत के संविधान में इन जातियों की विभिन्न निर्योग्यताओं को दूर करने एवं उन्हें मानवीय अधिकार दिलाने हेतु अनेक प्रावधान किये गये हैं। साथ ही इन जातियों को अनुसूचित जाति के नाम से सम्बोधित करने की वैधानिक मान्यता भी प्रदान की गयी है। स्वतंत्र भारत के संविधान में अनुसूचित

जाति के व्यक्तियों को संरक्षण प्रदान करने हेतु जो प्रावधान किये गये हैं, उनमें से प्रमुख प्रावधान निम्नवत् है -

1. 'अस्पृश्यता' का अन्त और किसी भी रूप में उसके आचरण को निषिद्ध करना (अनुच्छेद 17)

2. शिक्षा और अर्थ सम्बन्धी उनके हितों की उन्नति तथा सामाजिक अन्याय एवं सभी प्रकार के शोषण से उनका संरक्षण (अनुच्छेद 46)

3. हिन्दुओं की सार्वजनिक प्रकार की धर्म संस्थाओं को हिन्दुओं के सब वर्गों और विभागों के लिए खोलना (अनुच्छेद25)

4. दुकानों, सार्वजनिक भोजनालयों, होटलों आदि के उपयोग के बारे में किसी भी निर्योग्यता, दायित्व निर्बन्धन या शर्त का प्रतिषेध (अनुच्छेद 15)

5. कोई भी वृत्ति, उपजीविका, व्यापार या कारोबार करने का अधिकार (अनुच्छेद 19)

6. राज्य द्वारा पोषित या राज्य निधि से सहायता पाने वाले किसी शिक्षा संस्था में प्रवेश का अधिकार (अनुच्छेद 29)

7. सार्वजनिक सेवाओं में उनकी नियुक्ति के दावे तथा अपर्याप्त प्रतिनिधित्व की स्थिति में संरक्षण का शासन का दायित्व (अनुच्छेद 16 तथा 335)

8. राज्य में उनके हितों के संरक्षण एवं कल्याण के लिए अलग विभाग तथा सलाहकार परिषद का गठन तथा केन्द्र में इसी हेतु विशेष अधिकारी की नियुक्ति (अनुच्छेद 164, 338 तथा पंचम अनुसूची)

9. लोकसभा तथा राज्य विधान सभाओं में विशेष प्रतिनिधित्व हेतु आरक्षण की व्यवस्था (अनुच्छेद 330, 332 तथा 334)

10. अनुसूचित जाति क्षेत्र के प्रशासन एवं नियंत्रण के लिए विशेष उपबन्ध (अनुच्छेद 224 तथा पंचम एवं षष्ठ अनुसूची)।

इन संवैधानिक प्रावधानों के अतिरिक्त सरकार ने ''अस्पृश्यता अपराध अधिनियम'', 1955, ''नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम'', 1976, ''अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति अत्याचार निवारण अधिनियम'', 1989 पारित किया है। साथ ही संविधान के 73वें एवं 74वें संशोधन के माध्यम से अनुसूचित जातियों को स्थानीय निकायों एवं पंचायतों में विशेष संरक्षण देने का प्रावधान भी किया है। शोधार्थी ने उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था का अनुसूचित जनजातियों सूचनादाताओं द्वारा अनुसूचित जनजातियो सूचनादाताओं से ज्ञात किया है कि क्या उन्होंने अपने क्षेत्र में अनुसूचित जाति कल्याण कार्यक्रमों का लाभ ग्रामीण व्यक्तियों को दिलाने में भूमिका निभाई है?

संकलित आँकड़ों को सारिणी संख्या 5.8 में प्रदर्शित किया गया है।

सारिणी संख्या 5.8

अनुसूचित जनजाति कल्याण कार्यक्रमो को लागू कराने मे भूमिका के आधार पर वर्गीकरण

क्र.सं.	अनुसूचित जाति कल्याण कार्यक्रम	लाभ दिलाने मे भूमिका		योग
		हाँ	नहीं	
1-	छात्रवृत्ति	289	11	300
		96.33%	3.67%	100%
2-	रोजगार हेतु अनुदान / ऋण	241	59	300
		80.33%	19.67%	100%
3-	आवास निर्माण	183	117	300
		61.00%	39.00%	100%
4-	सरकारी सेवाओं में आरक्षण का लाभ	274	26	300
		91.33%	8.67%	100%

सारिणी संख्या 5.8 के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि अध्ययन में सम्मिलित 289 (96.33%) सूचनादाताओं ने ग्रामीण क्षेत्र के व्यक्तियों को छात्रवृत्ति दिलाने में भूमिका निभाई है तथा शेष 11 (3.67%) ने इस संदर्भ में भूमिका नहीं निभाई है। 241 (80.33%) सूचनादाताओं ने क्षेत्रीय अनुसूचित जाति के व्यक्तियों को रोजगार हेतु अनुदान/ऋण दिलाने में वांछित सहयोग प्रदान किया है तथा शेष 59 (19.67%) ने इस संदर्भ में कोई सहयोग नहीं किया है। 183 (61.00%) सूचनादाताओं ने अनुसूचित जाति के व्यक्तियों को आवास निर्माण हेतु वांछित

सहयोग प्रदान किया है तथा शेष 117 (39.00%) ने इस दिशा में कोई भी सहयोग नहीं दिया है। 274 (91.33%) सूचनादाताओं ने अनुसूचित जाति के व्यक्तियों को सरकारी सेवाओं में आरक्षण का लाभ दिलाने में वांछित भूमिका का निर्वहन किया है तथा शेष 26 (8.67%) ने इस संदर्भ में कोई भी भूमिका नहीं निभाई है। उपरोक्त से स्पष्ट होता है कि अधिकांश सूचनादाताओं ने क्षेत्रीय अनुसूचित जाति के व्यक्तियों के विभिन्न कल्याण कार्यक्रमों - छात्रवृत्ति, रोजगार हेतु अनुदान/ ऋण दिलाने, आवास निर्माण, सरकारी सेवाओं में आरक्षण का लाभ दिलाने आदि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इन्हीं प्रयासों के परिणामस्वरूप क्षेत्रीय अनुसूचित जाति के व्यक्तियों को उनके उत्थान हेतु संचालित विभिन्न योजनाओं एवं कार्यक्रमों का लाभ मिल पा रहा है।

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था का अनुसूचित जनजाति सूचनादाताओं द्वारा अनुसूचित जनजातियो में निर्बल वर्गों के कल्याण कार्यक्रम में भूमिका

भारत एक विशाल देश है। यहाँ हर स्तर के व्यक्ति निवास करते हैं। भारतीय समाज के संदर्भ में निर्बल वर्ग के अर्थ को अनेक आधारों पर देखा जा सकता है। सामुदायिक आधार पर एक निर्बल वर्ग वह है जिसे समुदाय में कोई अधिकार न मिलने के कारण शक्तिहीन समझा जाता है। एक विशेष समुदाय में जिस वर्ग के लोगों की संख्या बहुत कम होती है, यह वर्ग प्रायः निर्बल वर्ग के रूप में बदल जाता है। 60 वर्ष एवं उससे अधिक आयु के व्यक्ति भी निर्बल वर्ग की श्रेणी में आते हैं, क्योंकि इस आयु में उनकी इन्द्रियाँ कमजोर हो जाती हैं तथा व्यक्ति की क्षमताएँ घट जाती हैं। इस सबका परिणाम यह होता है कि उनके समक्ष अनेक समस्याएँ पैदा हो जाती हैं। सरकार ने वृद्ध व्यक्तियों की समस्याओं के निराकरण के लिए अनेक योजनाएँ एवं

कार्यक्रम संचालित किये हैं। भारतवर्ष में वृद्धों के प्रति राष्ट्रीय नीति का उद्देश्य समाज में इनको सम्मानपूर्वक स्थान दिलाना है। इन वरिष्ठ नागरिकों को आर्थिक सुरक्षा, स्वास्थ्य रक्षा एवं पोषण, आवास, कल्याण तथा अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति की ओर विशेष ध्यान दिया गया है। ग्रामीण समाज में भी निर्बल वर्ग के व्यक्तियों के कल्याणार्थ अनेक कार्यक्रम संचालित किये गये हैं। सूचनादाताओं से ज्ञात किया गया है कि क्या उन्होंने अपने ग्रामीण क्षेत्र के निर्बल वर्ग के व्यक्तियों को कल्याण कार्यक्रमों का लाभ दिलाने में भूमिका निभाई है?

संकलित आँकड़ों को सारिणी संख्या 5.9 में प्रदर्शित किया गया है।

सारिणी संख्या 5.9

निर्बल आदिवासियों के कल्याण कार्यक्रमो को लागू कराने मे भूमिका के आधार पर वर्गीकरण

क्र.सं.	निर्बल वर्ग कल्याण कार्यक्रम	लाभ दिलाने मे भूमिका		योग
		हाँ	नहीं	
1-	वृद्धावस्था पेंशन	267	33	300
		89.00%	11.00%	100%
2-	विधवा पेंशन	251	49	300
		83.67%	16.33%	100%
3-	विकलांग कल्याण कार्यक्रम	209	91	300
		69.67%	30.33%	100%

उपरोक्त सारिणी की विवेचना से स्पष्ट होता है कि अध्ययन में सम्मिलित सूचनादाताओं में से 267 (89.00%) सूचनादाताओं ने वृद्धावस्था पेंशन क्षेत्रीय ग्रामीण व्यक्तियों को दिलाने में आवश्यक भूमिका निभाई है तथा शेष 33 (11.00%) सूचनादाताओं ने ऐसा नहीं किया है।

251 (83.67%) सूचनादाताओं ने क्षेत्रीय विधवाओं को विधवा पेंशन दिलाने में आवश्यक भूमिका निर्वाह की है तथा शेष 49 (16.33%) सूचनादाताओं ने ऐसा नहीं किया है। 209 (69.67%) सूचनादाताओं ने ग्रामीण क्षेत्र में विकलांग कल्याण कार्यक्रम को प्रभावी ढंग से लागू कराने में आवश्यक भूमिका का निर्वहन किया है तथा शेष 91 (30.33%) ने ऐसा नहीं किया है। उपरोक्त से स्पष्ट होता है कि अधिकांश सूचनादाताओं ने ग्रामीण क्षेत्रों में वृद्धावस्था पेंशन, विधवा पेंशन एवं विकलांग कल्याण कार्यक्रमों को प्रभावी रूप से लागू कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। यह सभी तथ्य सूचनादाताओं के निर्बल वर्गों के कल्याण कार्यक्रमों को क्षेत्र में लागू कराने में सकारात्मक भूमिका के परिचायक हैं।

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था का अनुसूचित जनजाति सूचनादाताओं द्वारा अनुसूचित जनजाति के लिये वैकैकल्पिक ऊर्जा कार्यक्रमों को लागू कराने में भूमिका

ऊर्जा का मानव के दैनिक जीवन में महत्वपूर्ण योगदान है। ऊर्जा के परम्परागत स्त्रोतों का निरन्तर दोहन होने से यह अनुमान सहज लगाया जा सकता है कि इसी प्रकार इन स्त्रोतों का निरन्तर दोहन किया गया तो यह स्त्रोत समाप्त हो जायेंगे। इसी तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए वैज्ञानिकों ने ऊर्जा के नये स्त्रोतों का आविष्कार किया है। ऊर्जा के इन नये स्त्रोतों में गोबर गैस तथा सौर ऊर्जा महत्वपूर्ण है। इन स्त्रोतों की मुख्य विशेषता यह है कि इनके उपयोग करने से ग्रामीण संसाधनों गोबर आदि का सद्उपयोग हो सकेगा और ग्रामीण व्यक्तियों को ऊर्जा बहुत कम लागत में मिल सकेगी। सरकार ने भी ग्रामीण क्षेत्रों में गोबर गैस प्लान्ट एवं सौर ऊर्जा प्लान्टों को लगाने के लिये विशेष प्रकार का प्रशिक्षण, अनुदान आदि प्रदान करने की व्यवस्था की है। साथ ही ग्राम पंचायतों को इस कार्यक्रम को ग्रामीण क्षेत्रों में लागू कराने के

लिए विशेष प्रकार का दायित्व सौंपा है। शोधार्थी ने उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था का अनुसूचित जनजातियों सूचनादाताओं से ज्ञात किया है कि क्या उन्होंने वैकल्पिक ऊर्जा कार्यक्रम को ग्रामीण आदिवासी क्षेत्रों में लागू कराने में भूमिका निभाई है?

इस संदर्भ में संकलित आँकड़ों को सारिणी संख्या 5.10 में प्रदर्शित किया गया है।

सारिणी संख्या 5.10

वैकल्पिक ऊर्जा कार्यक्रम को लागू कराने में भूमिका के आधार पर वर्गीकरण

क्र.सं.	वैकल्पिक ऊर्जा कार्यक्रम	लाभ दिलाने मे भूमिका		योग
		हाँ	नहीं	
1-	गोबर गैस	53	247	300
		17.67%	82-33%	100%
2-	सौर ऊर्जा	26	274	300
		8.67%	91.33%	100%

सारिणी संख्या 5.10 के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि 53 (17.67%) सूचनादाताओं ने ग्रामीण क्षेत्र में गोबर गैस प्लान्ट लगवाने में वांछित भूमिका निभाई है तथा शेष 247 (82.33%) ने इस संदर्भ में वांछित भूमिका नहीं निभाई है। 26 (8.67%) सूचनादाताओं ने ग्रामीण क्षेत्रों में सौर ऊर्जा कार्यक्रम को लागू करवाने में भूमिका निभाई है तथा शेष 274 (91.33%) ने इस संदर्भ में कोई भी भूमिका नहीं निभाई है। उपरोक्त से स्पष्ट होता है कि अधिकांश सूचनादाताओं ने गोबर गैस तथा सौर ऊर्जा कार्यक्रम को ग्रामीण क्षेत्र में लागू कराने में भूमिका नहीं निभाई है, क्योंकि क्षेत्रीय ग्रामीण व्यक्ति वैकल्पिक ऊर्जा कार्यक्रम - गोबर गैस, सौर ऊर्जा को सरकार द्वारा समुचित साधन एवं आर्थिक अनुदान प्रदान करने के

उपरान्त भी लगाने में रुचि नहीं लेता है। इसी के परिणामस्वरूप उनके सतत् प्रयास करने के उपरान्त भी वह वैकल्पिक ऊर्जा कार्यक्रम को क्षेत्र में लागू कराने में असफल रहे हैं।

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था का अनुसूचित जनजाति सूचनादाताओं द्वारा अनुसूचित जनजातियों के ग्राम्य विकास के अन्य कार्यक्रमों में भूमिका

ग्रामीण समाज का पुनर्निर्माण होने पर ही गाँवों का सर्वांगीण विकास होना सम्भव है। गाँवों का विकास करवाने का एक महत्वपूर्ण माध्यम ग्राम पंचायतें हैं। ग्राम पंचायतें ही वह माध्यम हैं, जिनके द्वारा स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार योजनाओं के निर्माण के सुझाव दिये जाते हैं तथा उन योजनाओं के कार्यान्वयन को प्रभावपूर्ण बनाया जाता है। इस संदर्भ में ढेबर ने भी लिखा है कि, ''पंचायतों का महत्व इसी तथ्य से स्पष्ट हो जाता है कि गाँव पंचायतें छोटे से छोटे प्रत्येक स्थान पर ग्रामीणों को जनतंत्र की शिक्षा देने तथा उन्हें अपना विकास स्वयं करने का प्रशिक्षण देने वाला सबसे प्रभावशाली माध्यम है। इनमें ग्रामीण गणतंत्र के सभी गुण विद्यमान हैं।'' शोधार्थी ने उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था का अनुसूचित जनजातियों सूचनादाताओं द्वारा से ज्ञात किया है कि क्या उन्होंने आदिवासी ग्राम्य विकास के विभिन्न कार्यक्रमों जैसे- सामाजिक-वानिकी, परिवार कल्याण कार्यक्रम, प्रौढ़ साक्षरता, सम्पर्क मार्ग निर्माण, विद्युतीकरण, मनरेगा में रोजगार दिलाना, बैंकों की शाखाएँ खुलवाना आदि को लागू कराने में भूमिका निभाई है?

इस संदर्भ में संकलित तथ्यों को सारिणी संख्या 5.11 में प्रदर्शित किया गया है।

सारिणी संख्या 5.11

आदिवासी ग्रामीण विकास के विभिन्न कार्यक्रमों को पंचायत द्वारा लागू कराने मे भूमिका के आधार पर वर्गीकरण

क्र.सं.	ग्रामीण विकास के विभिन्न कार्यक्रम	ग्रामीण विकास के विभिन्न कार्यक्रम लागू कराने मे भूमिका		योग
		हाँ	नहीं	
1-	सामाजिक वानिकी	277	23	300
		92.33%	7.67%	100%
2-	परिवार कल्याण कार्यक्रम	268	32	300
		89.33%	10.67%	100%
3-	प्रौढ़ साक्षरता	167	133	300
		55.67%	44.33%	100%
4-	सम्पर्क मार्ग निर्माण	281	19	300
		93.67%	6.33%	100%
5-	विद्युतीकरण	244	56	300
		81.33%	18.67%	100%
6-	मनरेगा में रोजगार दिलाना	239	61	300
		79.67%	20.33%	100%
7-	बैंकों की शाखाओं को खुलवाना	173	127	300
		57.67%	42.33%	100%

सारिणी संख्या 5.11 की विवेचना से स्पष्ट है कि अध्ययन में सम्मिलित उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था का अनुसूचित जनजातियों सूचनादाताओं द्वारा अनुसूचित जनजातियो ग्रामीण विकास के अन्य कार्यक्रमों में भूमिका में से 277 (92.33%) सूचनादाताओं ने ग्रामीण समाज में सामाजिक वानिकी कार्यक्रम सम्पन्न कराने में भूमिका निभाई है तथा शेष 23 (7.67%) ने इस संदर्भ में कोई प्रयास नहीं किया है। 268 (89.33%) सूचनादाताओं ने परिवार कल्याण कार्यक्रम को ग्रामीण क्षेत्र में संचालित कराने में भूमिका निभाई है तथा शेष 32 (10.67%) ने इस संदर्भ में भूमिका नहीं निभाई है। 167 (55.67%) सूचनादाताओं ने प्रौढ़ साक्षरता को बढ़ावा देने के लिए सकारात्मक प्रयास किया है तथा शेष 133 (44. 33%) ने इस संदर्भ में कोई प्रयास नहीं किया है। 281 (93.67%) सूचनादाताओं ने ग्रामीण क्षेत्र में सम्पर्क मार्ग का निर्माण कराने हेतु वांछित प्रयास किये हैं तथा शेष 19 (6.33%) ने इस संदर्भ में कोई प्रयास नहीं किया है। 244 (81.33%) सूचनादाताओं ने ग्रामीण समाज में विद्युतीकरण कराने हेतु आवश्यक प्रयास किये हैं तथा शेष 56 (18.67%) ने इस संदर्भ में कोई भी प्रयास नहीं किया है। 239 (79.67%) सूचनादाताओं ने ग्रामीण व्यक्तियों को मनरेगा योजना में रोजगार दिलाने हेतु वांछित प्रयास किये हैं तथा शेष 61 (20.33%) ने इस संदर्भ में कोई प्रयास नहीं किया है। 173 (57.67%) सूचनादाताओं ने ग्रामीण क्षेत्र में बैंक की शाखाएँ खुलवाने हेतु आवश्यक प्रयास किये हैं तथा शेष 127 (42.33%) ने इस संदर्भ में कोई प्रयास नहीं किया है। उपरोक्त से स्पष्ट होता है कि अधिकांश सूचनादाताओं ने ग्राम्य विकास के विभिन्न कार्यक्रमों यथा - सामाजिक वानिकी, परिवार कल्याण कार्यक्रम, प्रौढ़ साक्षरता, सम्पर्क मार्ग निर्माण, विद्युतीकरण, मनरेगा में रोजगार दिलाना, बैंकों की शाखाएँ खुलवाना आदि को मूर्त रूप में लागू कराने में वांछित भूमिका का

निर्वाह किया है। इन्हीं सतत् प्रयासों के परिणामस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रों में विविध कार्यक्रम प्रारम्भ हो सके हैं।

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था का अनुसूचित जनजाति सूचनादाताओं द्वारा अनुसूचित जनजातियो के ग्राम्य विकास एवं अन्य कार्यक्रमों में सहभागिता का औसत प्रतिशत

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था का अनुसूचित जनजातियों सूचनादाताओं द्वारा अनुसूचित जनजातियो ग्राम्य विकास के अन्य कार्यक्रमों में भूमिका शोधार्थी ने सूचनादाताओं द्वारा विभिन्न विकास कार्यों को सम्पन्न कराने में जो भूमिका निभाई है उसका औसत प्रतिशत भी ज्ञात किया है।

इस औसत प्रतिशत को सारिणी संख्या 5.12 में प्रदर्शित किया गया है।

सारिणी संख्या 5.12

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था का अनुसूचित जनजाति सूचनादाताओं द्वारा अनुसूचित जनजातियो के ग्राम्य विकास एवं अन्य कार्यक्रमों में सहभागिता का औसत प्रतिशत

क्र.सं.	विकास कार्यक्रमों का विवरण	लागू कराने मे भूमिका का प्रतिशत
1-	कीटनाशक दवाइयां	79-00%
2-	नये कृषि यंत्र	63-67%
3-	कृषि आधारित कुटीर उद्योग	20-33%
4-	पशु चिकित्सा	62-33%

क्र.सं.	विकास कार्यक्रमों का विवरण	लागू कराने मे भूमिका का प्रतिशत
5-	कृत्रिम गर्भाधान केॉंद्र	53-00%
6-	पशु आहार	65-33%
7-	पौष्टिक आहार	77-67%
8-	टीकाकरण	90-33%
9-	प्रशिक्षित दाइयाँ	70-00%
10-	आंगनबाड़ी	88-33%
11-	शौचालय	53-67%
12-	छात्रवृत्ति	96-33%
13-	रोजगार हेतु अनुदान/ ऋण	80-33%
14-	आवास निर्माण	61-00%
15-	सरकारी सेवाओं में आरक्षण का लाभ	91-33%
16-	वृद्धावस्था पेंशन	89-00%
17-	विधवा पेंशन	83-67%
18-	विकलांग कल्याण कार्यक्रम	69-67%
19-	गोबर गैस	17-67%
20-	सौर ऊर्जा	8-67%
21-	सामाजिक वानिकी	92-33%
22-	परिवार कल्याण कार्यक्रम	89-33%
23-	प्रौढ़ साक्षरता	55-67%
24-	सम्पर्क मार्ग निर्माण	93-67%
25-	विद्युतीकरण	81-33%
26-	मनरेगा में रोजगार दिलाना	79-67%
27-	बैंकों की शाखा खुलवाना	57-67%
28-	लाभ दिलाने में भूमिका का कुल	20-33%
	कुल प्रतिशत योग	**2020.33**

औसत प्रतिशत मान = 2020.33/29 = 69.67%

उपरोक्त सारिणी के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि सूचनादाताओं द्वारा विकास कार्यों का ग्रामीण आदिवासी व्यक्तियों को लाभ दिलाने का कुल प्रतिशत योग 2020.33 आया है। इस कुल प्रतिशत योग में कुल 29 विकास कार्य योजनाओं से विभक्त करने पर मान 69.67% प्राप्त हुआ है। अतः निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि अध्ययन में सम्मिलित ग्राम प्रधानों ने अपने ग्रामीण क्षेत्रों में विभिन्न विकास योजनाओं को संचालित कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था का अनुसूचित जनजाति सूचनादाताओं द्वारा आदिवासी ग्राम पंचायत क्षेत्र की समस्याएँ

विभिन्न समाज और राजनीतिक वैज्ञानिकों जिनमे एक बी.एस. खन्ना है आदि ने अपने अध्ययनों से स्पष्ट किया है कि पंचायती राज संस्थाएँ विभिन्न समस्याओं के कारण वांछित लक्ष्यों के अनुरूप सफलता प्राप्त नहीं कर सकी है। जब तक इन समस्याओं का सही परिप्रेक्ष्य में अध्ययन करके निराकरण नहीं किया जाता है, तब तक इन संस्थाओं के माध्यम से ग्रामीण पुनर्निमाण का कार्य अधूरा ही रहेगा। पंचायती राज संस्थाओं के संदर्भ में दिये गये इस वक्तव्य को दृष्टिगत रखते हुए शोधार्थी ने उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था का अनुसूचित जनजातियों सूचनादाताओं द्वारा कुल सूचनादाताओं से यह ज्ञात किया है कि उनके आदिवासी ग्राम पंचायत क्षेत्र में कौन-कौन सी समस्याएँ हैं?

इस संदर्भ में संकलित आँकड़ों को सारिणी संख्या 5.13 में प्रदर्शित किया गया है।

सारिणी संख्या 5.13

आदिवासी ग्रामीण पंचायत क्षेत्र की समस्याओं के आधार पर वर्गीकरण

क्र.सं.	आदिवासी ग्रामीण पंचायत क्षेत्र की समस्या	संख्या	प्रतिशत
1-	विधवा/वृद्धावस्था पेंशन का समय से न मिलना	147	49-00%
2-	स्कूल एवं अस्पतालों का न होना	96	32-00%
3-	आदिवासी गरीबों को आवास न मिलना	34	11-33%
4-	मनरेगा योजना का सही क्रियावयन न होना	23	7-67%
	योग	300	100-00%

सारिणी संख्या 5.13 के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि 147 (49.00%) सूचनादाताओं का मानना है कि उनके आदिवासी ग्राम पंचायत क्षेत्र की मुख्य समस्या विधवा/ वृद्धावस्था पेंशन का समय से न मिलना है। 96 (32.00%) का मानना है कि उनके क्षेत्र की मुख्य समस्या क्षेत्र में स्कूल एवं अस्पतालों का न होना है। 34 (11.33%) सूचनादाताओं का मानना है कि उनके आदिवासी क्षेत्र की प्रमुख समस्या गरीब व्यक्तियों को समय से आवास न मिलना है। 23 (7.67%) का मानना है कि उनके क्षेत्र में मनरेगा योजना का सही रूप में क्रियान्वयन नहीं हो रहा है। उपरोक्त से स्पष्ट होता है कि अधिकांश (81.00%) सूचनादाताओं का मानना है कि उनके पंचायत क्षेत्र की मुख्य समस्या विधवा/वृद्धावस्था पेंशन का समय से न मिलना, स्कूल एवं अस्पतालों का न होना है। इन्हीं समस्याओं के कारण क्षेत्रीय ग्रामीण व्यक्ति कठिनाइयों के साथ जीवन यापन कर रहे हैं।

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था और आदिवासी ग्रामीण पंचायत क्षेत्र की समस्याओं के निराकरण के प्रयास

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था और आदिवासी ग्रामीण पंचायत क्षेत्र की समस्याओं के निराकरण के प्रयास सूचनादाताओं के पंचायत क्षेत्र में विभिन्न समस्यायें व्याप्त हैं। इन सूचनादाताओं ने इन विभिन्न समस्याओं के समाधान के लिये किस प्रकार प्रयास किया है, इस संदर्भ में तथ्यों का संकलन किया गया है।

संकलित तथ्यों को सारिणी संख्या 5.14 में प्रदर्शित किया गया है।

सारिणी संख्या 5.14

समस्याओ के निराकरण के प्रयासों के आधार पर वर्गीकरण

क्रम संख्या	समस्याओं के निराकरण के प्रयास	संख्या	प्रतिशत
1-	अधिकारियों से सम्पर्क करके	161	53-67%
2-	क्षेत्रीय विधायक, सांसद एवं जिला पंचायत अध्यक्ष से सम्पर्क करके	104	34-67%
3-	धरना एवं प्रदर्शन करके	35	11-60%
	योग	300	100-00%

सारिणी संख्या 5.14 की विवेचना से स्पष्ट होता है कि अध्ययन में सम्मिलित 161 (53.67%) सूचनादाता ग्रामीण क्षेत्र की समस्याओं के निराकरण के लिए अधिकारियों से सम्पर्क करते हैं। 104 (34.67%) ग्रामीणों की समस्याओं का निराकरण करने हेतु क्षेत्रीय विधायक,सांसद एवं जिला पंचायत अध्यक्ष से सम्पर्क करते हैं तथा शेष 35 (11.66%) सूचनादाता ग्रामीण व्यक्तियों की समस्याओं का निराकरण करने हेतु धरना एवं प्रदर्शन भी

करते हैं। उपरोक्त से स्पष्ट होता है कि अधिकांश (88.34%) सूचनादाता ग्रामीण व्यक्तियों की समस्याओं के निराकरण हेतु सम्बन्धित अधिकारियों, क्षेत्रीय विधायक, सांसद एवं जिला पंचायत अध्यक्ष से सम्पर्क करते हैं।

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था का अनुसूचित जनजाति सूचनादाताओं द्वारा आदिवासी ग्राम पंचायत क्षेत्र की समस्याएँ समस्याओं के निराकरण में प्राप्त सफलता का प्रतिशत अध्ययन

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था का अनुसूचित जनजातियों सूचनादाताओं द्वारा आदिवासी ग्राम पंचायत क्षेत्र की समस्याएँ समस्याओं के निराकरण में प्राप्त सफलता का प्रतिशत अध्ययन में सम्मिलित सूचनादाताओं से यह भी ज्ञात किया गया है कि वह ग्रामीण व्यक्तियों की समस्याओं के निराकरण करने हेतु जो कार्यविधि अपनाते हैं, उनमें उन्हें कितने प्रतिशत सफलता प्राप्त हुयी है?

इस संदर्भ में संकलित आँकड़ों को सारिणी संख्या 5.15 में प्रदर्शित किया गया है।

सारिणी संख्या 5.15

आदिवासी समस्याओ के निराकरण मे प्राप्त सफलता का प्रतिशत के आधार पर वर्गीकरण

क्र.सं.	कितने प्रतिशत समस्याओ का निराकरण हुआ	संख्या	प्रतिशत
1-	25 प्रतिशत तक	73	24-33%
2-	50 प्रतिशत तक	191	63-67%
3-	75 प्रतिशत तक	34	11-33%
4-	100 प्रतिशत तक	02	0-67%
	योग	300	100-00%

उपरोक्त सारिणी की विवेचना से स्पष्ट हाता है कि 73 (24.33%) सूचनादाताओं का मानना है कि उन्होंने सोनभद्र के आदिवासी क्षेत्रीय ग्रामीण व्यक्तियों की समस्याओं के निराकरण हेतु तो तरीके अपनाये हैं उनके परिणाम स्वरूप उन्हें क्षेत्रीय समस्याओं के निराकरण में 25 प्रतिशत तक सफलता प्राप्त हुयी है। 191 (63.67%) सूचनादाताओं का मानना है कि इन प्रयासों के परिणामस्वरूप क्षेत्रीय समस्याओं के निराकरण में उन्हें 50 प्रतिशत तक सफलता प्राप्त हुयी है। 34 (11.33%) का मानना है कि उनके प्रयासों के फलस्वरूप उन्हें 75 प्रतिशत तक सफलता प्राप्त हुयी है। 02 (0.67%) का मानना है कि इस संदर्भ में उन्हें 100 प्रतिशत तक सफलता प्राप्त हुयी है। उपरोक्त से स्पष्ट होता है कि अधिकांश (63.67%) सूचनादाताओं का मानना है कि ग्रामीण व्यक्तियों की समस्याओं के निराकरण हेतु जो उन्होंने कार्ययोजना बनायी है, उसी के परिणामस्वरूप उन्हें 50 प्रतिशत तक सफलता प्राप्त हुयी है।

समस्याओं के निराकरण महसूस की गयी कठिनाइयाँ अध्ययन में सम्मिलित सूचनादाताओं ने क्षेत्रीय समस्याओं के निराकरण करने में समय-समय पर अनेक समस्याओं का सामना किया है, जिसके परिणामस्वरूप वह आशातीत रूप में समय से समस्याओं का समाधान नहीं कर सके हैं। सूचनादाताओं ने आदिवासी क्षेत्रीय समस्याओं के समाधान करते समय किन-किन समस्याओं का सामना किया है उनसे जानकारी प्राप्त की गयी है।

इस संदर्भ में संकलित तथ्यों को सारिणी संख्या 5.16 में प्रदर्शित किया गया है।

सारिणी संख्या 5.16

समस्याओ के निराकरण मे महसूस की गयी कठिनाइयो के आधार पर वर्गीकरण

क्र.सं.	महसूस की गयी कठिनाइयाँ	संख्या	प्रतिशत
1-	भ्रस्ताचार एवं पक्षपात	181	60-33%
2-	सरकारी अधिकारियों का अपेक्षित सहयोग न मिलना	93	31-00%
3-	क्षेत्रीय जन सहयोग का अभाव	26	8-67%
	योग	300	100-00%

सारिणी संख्या 5.16 की विवेचना से स्पष्ट होता है कि अध्ययन में सम्मिलित 181 (60.33%) सूचनादाताओं ने क्षेत्रीय समस्याओं के निराकरण में भ्रष्टाचार एवं पक्षपात को मुख्य समस्या के रूप में महसूस किया है। 93 (31.00%) ने यह महसूस किया है कि सरकारी अधिकारी अपेक्षित सहयोग नहीं देते हैं, जिसके कारण समस्याओं का निराकरण नहीं हो पाता है। 26 (8.67%) का मानना है कि क्षेत्रीय जन सहयेाग का भी पूर्णतः अभाव है, जिस कारण समस्याओं का निस्तारण नहीं हो पाता है। उपरोक्त से स्पष्ट होता है कि अधिकांश (60.33%) सूचनादाताओं ने क्षेत्रीय समस्याओं के निराकरण करते समय भ्रष्टाचार एवं पक्षपात को मुख्य समस्या के रूप में महसूस किया है, जिसके परिणामस्वरूप क्षेत्रीय समस्याओं का निस्तारण समय से एवं शीघ्र नहीं हो पाता है।

सूचनादाताओं द्वारा आदिवासी क्षेत्रीय समस्याओं के निराकरण हेतु सुझाव

आदिवासी क्षेत्र में समस्याओं के निराकरण हेतु सुझाव सूचनादाताओं ने क्षेत्रीय समस्याओं के निराकरण करते समय भ्रष्टाचार एवं पक्षपात को मुख्य समस्याओं के रूप में महसूस किया है।

शोधार्थी ने उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था के अंतर्गत आदिवासी जनजाति लोगो तथा क्षेत्रो की समस्याओ के निदान के लिये सूचनादाताओं से अनौपचारिक वार्तालाप के माध्यम से इन समस्याओं के निराकरण हेतु सुझावों को प्राप्त

किया है। अध्ययन से प्राप्त प्रमुख सुझाव निम्नवत् हैं:-

1. ग्रामीण व्यक्तियों को ग्राम्य विकास कार्यक्रमों का लाभ लेने हेतु भ्रष्टाचार का सामना सरकारी कार्यालयों में करना पड़ता है। सरकारी कार्यालयों में भ्रष्टाचार रोकने के लिए कर्मचारियों की जबावदेही निर्धारित की जानी चाहिये। निर्धारित समय अवधि तक कार्य न करने वाले अधिकारियों को दण्डित किया जाना चाहिये।

2. पंचायती राज व्यवस्था में भ्रष्टाचार रोकने के लिए योजनाबद्ध रूप से सामाजिक, आर्थिक, कानूनी, प्रशासनिक उपायों को अपनाना चाहिये तथा पंचायत स्तर पर 'सोशल आडिट दल' का गठन किया जाना चाहिये जो भ्रष्टाचार के मामलों में आवश्यक नियंत्रण कर सके।

3. भ्रष्टाचार निवारण हेतु भ्रष्टाचार निवारण विभाग की स्थापना की जाय। इस विभाग द्वारा पंचायत से सम्बन्धित कार्यों की समय-समय पर जाँच की जाय तथा भ्रष्ट अधिकारियों एवं कर्मचारियों के कृत्यों का व्यापक प्रचार प्रसार किया जाय एवं उन्हें कठोर दण्ड दिया जाय।

4. आदिवासी जातीय आधार पर पक्षपात समाप्त करने के लिये आवश्यक है कि जातीय संगठनों पर प्रतिबन्ध लगाना चाहिए। जातीय आधार पर होने वाली सभाओं एवं बैठकों को पूर्णरूपेण नियंत्रित किया जाना चाहिये।

5. आदिवासी ग्रामीण नेतृत्व आज भी जातिवादी, भाग्यवादी, अन्धविश्वासी है, जिसका मूल कारण अशिक्षा एवं अज्ञानता है। अतः आवश्यक है कि ग्रामीण नेतृत्व को शिक्षित एवं

प्रशिक्षित किया जाय, जिससे कि वह पक्षपात रहित होकर अपने दायित्वों का निर्वाह कर सकें।

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था का अनुसूचित जनजातियों व आदिवासी ग्राम पंचायत क्षेत्र में पंचायती राज व्यवस्था के प्रति मनोवृत्तियाँ

मानव व्यवहार के निर्धारण एवं निर्देशन में मनोवृत्तियों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। मनोवृत्तियाँ न केवल हमारे व्यवहारों को प्रभावित करती हैं, अपितु उन्हें एक निश्चित दिशा भी प्रदान करती हैं। मनोवृत्तियों के कारण ही व्यक्तियों में प्रेम-घृणा, रुचि-अरुचि, पसन्द-नापसन्द, सहयोग-संघर्ष आदि के भाव पाये जाते हैं। किसी व्यक्ति की मनोवृत्ति को जानकर उसके वर्तमान के व्यवहार को सरलता से समझा जा सकता है। इस संदर्भ में कि, ''मनोवृत्ति व्यक्ति के लिए अनेक महत्वपूर्ण कार्य करती है, उसके प्रतिदिन के प्रत्यक्षीकरणों एवं कार्यों को अर्थप्रदान करती है व उसके विभिन्न उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु चेष्टाओं में सहायता करती है।'' स्मिथ ने भी लिखा है कि मनोवृत्तियों का एक महत्वपूर्ण कार्य आन्तरिक समस्याओं का बाह्यीकरण करना है अर्थात् इनकी सहायता से व्यक्ति अपनी कुण्ठाओं, निराशाओं, अंतर्द्वंद , घृणा को दूसरे व्यक्तियों एवं समूहों की ओर मोड़ सकता है। मनोवृत्ति का सम्बन्ध व्यक्ति के व्यवहार को निर्देशित करने वाली प्रवृत्ति से होता है, स्वयं व्यवहार से नहीं। इसलिए मनोवृत्तियों का मापन कठिन कार्य है। अनेक मनोवैज्ञानिकों ने मनोवृत्तियों के मापन हेतु अनेक पैमानों को विकसित किया है। शोधार्थी ने उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था का अनुसूचित जनजातियों आदिवासी ग्राम पंचायत क्षेत्र में पंचायती राज व्यवस्था के प्रति मनोवृत्तियाँ में सूचनादाताओं से पंचायती राज व्यवस्था से सम्बन्धित विभिन्न पक्षों

के संदर्भ में उनकी मनोवृत्तियों को भी संकलित किया है। अध्ययन के द्वारा संकलित आँकड़ों को विभिन्न सारिणियों के माध्यम से प्रदर्शित किया गया है।

ग्राम पंचायतों को प्रदत्त अधिकार

पंचायती राज व्यवस्था को आधुनिक समाज की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर समुचित अधिकार प्रदान किये गये हैं। उनको स्वशासन, स्वास्थ्य, शिक्षा, सड़क, उद्योग धन्धे, मानव निर्माण, प्रशासन एवं न्याय से सम्बन्धित विभिन्न अधिकार दिये गये हैं। ग्राम पंचायतें, ग्राम स्तर पर समस्त प्रशासनिक तथा न्यायिक और कल्याण कार्यों को पूरा करती है। शोधार्थी ने सूचनादाताओं से ज्ञात किया है कि क्या वर्तमान समय में ग्राम पंचायतों को जो अधिकार प्रदान किये गये हैं वे पर्याप्त हैं?

इस संदर्भ में संकलित आँकड़ों को सारिणी संख्या 5.17 में प्रदर्शित किया गया है।

सारिणी संख्या 5.17

ग्राम पंचायतो को प्रदत्त अधिकारो के प्रति मनोवृत्ति के आधार पर वर्गीकरण

क्र.सं.	प्रदत्त अधिकारो के प्रति मनोवृत्ति	संख्या	प्रतिशत
1-	पर्याप्त हैं	233	77-67%
2-	पर्याप्त नहीं है	67	22-33%
	योग	300	100-00%

उपरोक्त सारिणी के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि अध्ययन में सम्मिलित 233 (77.67%) सूचनादाता वर्तमान समय में ग्राम पंचायतों को प्रदत्त अधिकारों को पर्याप्त मानते हैं तथा शेष 67 (22.33%) इन्हें पर्याप्त नहीं मानते हैं। उपरोक्त से स्पष्ट होता है कि अधिकांश (77.67%) सूचनादाता वर्तमान समय में ग्राम पंचायतों को प्रदत्त अधिकारों को पर्याप्त मानते हैं तथा शेष 67 (22.33%) इन्हें पर्याप्त नहीं मानते हैं। उपरोक्त से स्पष्ट होता है कि अधिकांश (77.67%) सूचनादाता वर्तमान समय में पंचायतों को प्रदत्त अधिकारों को पर्याप्त मानते हैं। उनकी मान्यता है कि संविधान के 73वें संशोधन के उपरान्त पंचायतों को विशेष अधिकार प्राप्त हुए हैं। इस संशोधन के परिणाम स्वरूप पंचायतों के नियमित चुनाव होने लगे हैं, अनुसूचित जाति/ जनजाति और महिलाओं को आरक्षण मिलने लगा है, साथ ही पंचायतों की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करने के भी अनेक प्रावधान किये गये हैं।

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था में अनुसूचित जनजातिय महिलाओ का ग्राम पंचायत क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी से लाभ

भारतवर्ष में संविधान के 73वाँ संशोधन पंचायती राज व्यवस्था को मजबूत बनाने का एक महत्वपूर्ण माध्यम है। इस संशोधन के माध्यम से उत्तरप्रदेश में पंचायतों की कुल सीटों में से एक तिहाई सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित की गयी हैं इसके माध्यम से महिलाओं को राजनैतिक व सामाजिक रूप से सशक्त होने एवं समाज में अपनी भागीदारी बढ़ाने की दिशा में महत्वपूर्ण अवसर मिलने लगे हैं। शोधार्थी ने उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था में अनुसूचित जनजातिय महिलाओ का ग्राम पंचायत क्षेत्र में पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी से लाभ सूचनादाताओं से यह ज्ञात किया है कि क्या पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी से लाभ हुआ है? यदि हाँ तो किन-किन क्षेत्रों में हुआ।

अध्ययन द्वारा संकलित तथ्यों को सारिणी संख्या 5.18 में प्रदर्शित किया गया है।

सारिणी संख्या 5.18

ग्राम पंचायतो मे महिलाओं की भागीदारी से होने वाले लाभो के आधार पर वर्गीकरण

क्र.सं.	पंचायतो मे महिलाओं की भागीदारी से लाभ	संख्या	प्रतिशत
1-	नेतृत्व करने एवं राजनैतिक प्रक्रिया में सहभागिता करने का अवसर मिला है	157	52-33%
2-	आत्म-विश्वाश एवं आत्म-सम्मान बढ़ा	111	37-00%
3-	शोषण एवं अत्याचारों पर नियंत्रण	21	7-00%
4-	कोई लाभ नहीं हुआ है	11	3-67%
	योग	300	100-00%
	योग	300	100-00%

उपरोक्त सारिणी की विवेचना से स्पष्ट होता है कि अध्ययन में सम्मिलित 157 (52.33%) सूचनादाताओं का मत है कि पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी से उन्हें नेतृत्व करने एवं राजनैतिक प्रक्रिया में सहभागिता करने का अवसर मिला है। 111 (37.00%) का मानना है कि पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी से उनमें आत्मविश्वास एवं आत्मसम्मान बढ़ा है। 21 (7.00%) सूचनादाताओं का मानना है कि पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी से उन पर होने वाले शोषण एवं अत्याचारों पर नियंत्रण लगा है। शेष 11 (3.67%) सूचनादाताओं का मानना है कि पंचायतों में महिलाओं की भागीदारी से उन्हें कोई लाभ नहीं हुआ है। उपरोक्त से स्पष्ट होता है कि अधिकांश (89.33%) सूचनादाताओं का मानना है कि उत्तरप्रदेश में 33

प्रतिशत पंचायतों में महिलाओं को आरक्षण देने से उन्हें नेतृत्व करने एवं राजनैतिक प्रक्रिया में सहभागिता करने का अवसर मिला है। साथ ही उनमें आत्मविश्वास एवं आत्मसम्मान की भावना भी बढ़ी है। अतः निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि पंचायतों में महिलाओं को आरक्षण देने से उनकी राजनैतिक सहभागिता ही नहीं बढ़ी है, वरन् नेतृत्व के नवीन प्रतिमान भी विकसित हुए हैं।

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं की प्रभावशाली भागीदारी बढ़ाने हेतु सुझाव

शोधार्थी ने सूचनादाताओं से अनौपचारिक वार्तालाप के माध्यम से पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं की प्रभावशाली भागीदारी बढ़ाने हेतु सुझाव को संकलित किया है। सूचनादाताओं से वार्तालाप द्वारा जो सुझाव प्राप्त हुए हैं, वे निम्नवत् हैं:-

ग्राम पंचायतों की सफलता का प्रथम चरण जागरूकता होना है। अध्ययनों और शोधो से यह स्पष्ट हुआ है कि प्रायः महिलाओं को अपने कर्तव्यो , अधिकार का ज्ञान नहीं होता है। अतः महिलाओं को उनके अधिकार और कर्तव्यो के संदर्भ में प्रशिक्षण देना आवश्यक है। महिला जन प्रतिनिधियों के लिए ग्रामीण स्तर पर प्रशिक्षण केन्द्र लगाकर इन्हें विकास के विभिन्न पहलुओं से अवगत कराया जाय। उन्हें यह प्रशिक्षण उनकी ही भाषा में दिया जाना चाहिये, जिससे कि वे सहजता से समझ सकें साथ ही यह प्रशिक्षण कार्य छोटे-छोटे समूहों में देना चाहिये, जिससे कि प्रत्येक महिला पर प्रशिक्षक उचित समय दे सके। प्रशिक्षण देने के लिये स्थानीय महिला प्रशिक्षिका को ही रखा जाय, जिससे कि वह जन प्रतिनिधियों की सुविधानुसार प्रशिक्षण कार्यक्रम को निर्धारित कर ठीक प्रकार से लागू कर सके। वर्तमान समय में पंचायतों में निर्वाचित अधिकांश महिला जन प्रतिनिधि अशिक्षित हैं। अतः महिला

साक्षरता पर विशेष बल दिया जाना चाहिए। शिक्षा के आधुनिक तरीकों जैसे - फिल्म, कम्प्यूटर आदि के माध्यम से इस प्रकार शिक्षा दी जानी चाहिये जिससे उनमें पढ़ने के प्रति आकर्षण उत्पन्न हो। साथ ही पंचायत चुनाव लड़ने वाली महिला के लिये एक न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता अवश्य रूप से निर्धारित की जानी चाहिये, जिससे चुनाव में विजयी होने के पश्चात वे पंचायत की कार्यप्रणाली को उचित रूप से समझकर उसमें अपना योगदान कर सके। ग्राम पंचायतों को दलबन्दी तथा राजनीतिक पार्टीबन्दी से अलग करना चाहिए। इसके लिए आवश्यक है कि ग्राम पंचायत के लिए किसी भी महिला प्रत्याशी को एक राजनैतिक दल के प्रत्याशी के रूप में खड़ा न किया जाय। साथ ही चुनाव टालने के लिए उचित होगा कि ग्राम की वृद्ध एवं सम्मानित महिला को ही ग्राम प्रधान के पद पर सरकार द्वारा मनोनीत किया जाय। चुनाव लड़ने वाली महिला को निर्वाचन क्षेत्र का, उसकी विभिन्न समस्याओं आदि का पर्याप्त मात्रा में ज्ञान होना चाहिए। यह ज्ञान उसे चुनाव में विजयी होने के उपरान्त क्षेत्र में कार्य करने में बहुत सहायक होगा। अतः यह प्रावधान किया जाय कि पंचायतों का चुनाव लड़ने वाली महिला प्रत्याशी को उस ग्रामसभा का कम से कम पाँच वर्ष से स्थायी निवासी अवश्य होना चाहिए। ऐसे आदिवासी परिवारों की पहचान की जानी चाहिए, जिनकी मुखिया महिलाएँ हैं, जो पंचायत सदस्य हैं, जिनके पास रोजगार, आवास, स्वच्छ जल आदि की व्यवस्था नहीं है। ऐसी महिलाओं को शासन द्वारा आवास दिया जाना चाहिए, लघु उद्योगों हेतु उन्हें 'महिला विकास कोष' से ऋण दिया जाना चाहिए। इन महिलाओं को लघु उद्योग धन्धों में लगाने से उत्पादन में वृद्धि के साथ-साथ पारिवारिक रोजगार एवं आय में वृद्धि के अधिक अवसर मिलेंगे। महिला जनप्रतिनिधियों को ऐसे कानूनों की अवश्य रूप से जानकारी दी जानी चाहिए, जो उन्हें सामाजिक एवं वैधानिक रूप से सशक्त बनाने में सहायक हों। ऐसे

अधिनियमों में प्रमुख रूप से हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956,

बाल विवाह निरोधक अधिनियम, 1986,

भारतीय दण्ड संहिता, 1872,

न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948,

कर्मकार प्रतिकर अधिनियम, 1923,

बन्धुआ मजदूरी अधिनियम, 1975,

समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976 आदि हैं।

इन अधिनियमों की जनजातीय महिला जन प्रतिनिधियों को जानकारी देने के लिए सरकार द्वारा समय-समय पर कार्यशालाएँ आयोजित की जानी चाहिए। विभिन्न अनुसन्धानों से ज्ञात हुआ है कि अधिकांश महिला जनप्रतिनिधि साक्षर भी नहीं हैं। साक्षर न होने के कारण वह बैठकों की कार्यवाही पर बिना देखे अंगूठा लगा देती हैं। यही नहीं बिना बैठकों में भाग लिए भी कार्यवाही पर अंगूठा लगा देती हैं। उनका यह व्यवहार पंचायत अधिनियम, 1993 की धारा 40 के अन्तर्गत गलत है। सामान्यतः इस बात का ज्ञान जनजाति महिला जन प्रतिनिधियों को नहीं होता है। अतः इस जानकारी से जनजाति महिला जन प्रतिनिधियों को आवश्यक रूप से अवगत कराना चाहिए, जिससे वह उक्त अधिनियम के विपरीत कार्य न करें। महिला पंचायत जन प्रतिनिधि के साक्षर न होने की स्थिति में आवश्यक है कि वह पंचायत सम्बन्धी किसी भी कागज पर अंगूठा लगाने से पूर्व किसी विश्वसनीय व्यक्ति से पंचायत की बैठक में ही अन्य व्यक्तियों के समक्ष उसे पढ़वाकर सुने और समझें। तत्पश्चात ही उस पर अंगूठा लगायें।

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था में अनुसूचित जनजातिय ग्राम पंचायत क्षेत्र के विकास में लघु एवं कुटीर एवं उद्योगों की भूमिका का लाभ

योजना निर्माताओं ने ग्राम्य विकास को सामुदायिक विकास योजना के मुख्य लक्ष्यों में से एक बताया है। एस.सी. दुबे ने सामुदायिक विकास योजना के प्रमुख उद्देश्यों में ग्राम विकास एवं लघु कुटीर उद्योगों को महत्वपूर्ण माना है। लघु कुटीर उद्योगों से आशय ऐसे उद्योगों से है जो पूर्णतया या मुख्यतया परिवार के सदस्यों की सहायता से पूर्णकाल या अंशकाल व्यवसाय के रूप में चलाया जाता है। भारतीय अर्थव्यवस्था ऐसे लघु कुटीर उद्योगों का महत्वपूर्ण स्थान है। योजना आयोग ने भी लिखा है कि, ''लघु कुटीर उद्योग हमारी अर्थव्यवस्था के महत्वपूर्ण अंग हैं, जिनकी कभी भी उपेक्षा नहीं की जा सकती है।'' शोधार्थी ने उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज व्यवस्था में अनुसूचित जनजातिय ग्राम पंचायत क्षेत्र में पंचायतों की भागीदारी से लाभ ग्राम्य विकास में लघु कुटीर उद्योगों की भूमिका के अध्ययन में सम्मिलित सूचनादाताओं से ज्ञात किया है कि क्या वह ग्राम्य विकास में लघु कुटीर उद्योगों की भूमिका मानते हैं?

इस संदर्भ में संकलित आँकड़ों को सारिणी संख्या 5.19 में प्रदर्शित किया गया है

सारिणी संख्या 5.19

पंचायती राज और ग्रामीण आदिवासी विकास मे लघु एवं कुटीर उद्योगो की भूमिका के आधार पर वर्गीकरण

क्र.सं.	ग्रामीण विकास मे लघु एवं कुटीर उद्योगों की भूमिका है	संख्या	प्रतिशत
1- 2-	हाँ नहीं	273 27	91-00% 9-00%
	योग	300	100-00%

उपरोक्त सारिणी की विवेचना से स्पष्ट होता है कि अध्ययन में सम्मिलित 273 (91.00%) सूचनादाताओं का मानना है कि आदिवासी ग्राम्य विकास में लघु कुटीर उद्योगों की महत्वपूर्ण भूमिका है तथा शेष 27 (9.00%) इस मत से सहमत नहीं है। उपरोक्त से स्पष्ट होता है कि अधिकांश (91.00%) सूचनादाता ग्राम्य विकास में लघु कुटीर उद्योगों की भूमिका को महत्वपूर्ण मानते हैं। उनका मानना है कि यदि ग्रामीण समाज की अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाना है तो लघु कुटीर उद्योगें को बढ़ावा देना आवश्यक है। ऐसा करने पर ही महात्मा गांधी के इस कथन की प्रासंगिकता भी सिद्ध हो सकेगी कि, ''भारतवर्ष के ग्रामों का भविष्य उसके कुटीर उद्योग धन्धों पर आश्रित है।''

आदिवासी ग्रामीण विकास कार्यक्रम चलाने हेतु उपयोगी संस्थाएं

भारत सरकार एवं राज्य सरकार ने विभिन्न ग्राम्य विकास कार्यक्रमों एवं योजनाओं को संचालित किया, जिससे कि ग्रामीण समाज का पुनर्निर्माण हो सके। इन योजनाओं एवं

कार्यक्रमों को प्रभावशाली रूप से संचालित करने में कौन सी संस्थाएँ उपयोगी होंगी, इस संदर्भ में भी सूचनादाताओं के दृष्टिकोणों को संकलित किया गया है।

सूचनादाताओं से प्राप्त सूचनाओं को सारिणी संख्या 5.20 में प्रदर्शित किया गया है।

सारिणी संख्या 5.20

आदिवासी ग्रामीण विकास कार्यक्रम चलाने हेतु उपयोगी संस्थाओं के आधार पर वर्गीकरण

क्र.सं.	उपयोगी संस्थाएं	संख्या	प्रतिशत
1-	स्वैच्छिक संस्थाएं	169	56-33%
2-	स्थानीय ग्राम पंचायतें	113	37-67%
3-	राज्य स्तरीय सरकारी मशिनरी	18	6-00%
	योग	300	100-00%

सारिणी संख्या 5.20 से स्पष्ट होता है कि 169 (56.33%) सूचनादाताओं का मत है कि ग्राम्य विकास कार्यक्रमों को प्रभावशाली रूप से चलने के लिए स्वैच्छिक संस्थाओं को यह दायित्व सौंपा जाना चाहिए। 113 (37.67%) का मत है कि यह दायित्व स्थानीय ग्राम पंचायतों को सौंपना चाहिए तथा शेष 18 (6.00%) का मत है कि यह दायित्व राज्य स्तरीय सरकारी मशीनरी को सौंपना चाहिए। उपरोक्त से स्पष्ट होता है कि अधिकांश (56.33%) सूचनादाताओं का मत है कि ग्राम्य विकास कार्यक्रमों को प्रभावशाली रूप से संचालित कराने हेतु यह दायित्व स्वैच्छिक संस्थाओं को सौंपना चाहिए। उनका मानना है कि यह

स्वैच्छिक संस्थाएँ अधिक निष्ठा एवं लगन के साथ ग्राम्य विकास कार्यक्रमों को चलायेंगी, जिससे वांछित ग्रामीण विकास हो सकेगा।

उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज और ग्रामीण विकास कार्यक्रमों से ग्रामीण आदिवासी समाज में परिवर्तन

स्वतंत्र भारत में ग्राम्य विकास हेतु अनेक नियोजित प्रयास किये गये हैं, अनेक योजनाएँ एवं कार्यक्रम संचालित किये गये हैं। इन सभी प्रयासों के परिणामस्वरूप ग्रामीण समाज में अनेक परिवर्तन की प्रक्रियाएँ गतिशील हुयी हैं। शोधार्थी ने उत्तरप्रदेश के सोनभद्र जिले में पंचायती राज और ग्रामीण विकास कार्यक्रमों से ग्रामीण कार्यक्रमों ग्रामीण आदिवासी समाज में परिवर्तन सूचनादाताओं से ज्ञात किया है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात संचालित ग्रामीण विकास कार्यक्रमों से ग्रामों में अपेक्षित परिवर्तन हुआ है या नहीं?

इस संदर्भ में संकलित तथ्यों को सारिणी संख्या 5.21 में प्रदर्शित किया गया है।

सारिणी संख्या 5.21

ग्रामीण विकास कार्यक्रमों से ग्रामीण आदिवासी समाज में जो परिवर्तन हुआ है उसके आधार पर वर्गीकरण

क्र.सं.	आदिवासी ग्रामीण समाज मे परिवर्तन हुआ है	संख्या	प्रतिशत
1-	हाँ	289	96-33%
2-	नहीं	11	3-67%
	योग	300	100-00%

उपरोक्त सारिणी की विवेचना से स्पष्ट होता है कि अध्ययन में सम्मिलित 289 (96.33%) सूचनादाताओं का मानना है कि ग्राम्य विकास कार्यक्रमों से ग्रामीण समाज में परिवर्तन हुआ है तथा शेष 11 (3.67%) ने इसके विपरीत मत व्यक्त किया है। उपरोक्त से स्पष्ट होता है कि अधिकांश (96.33%) सूचनादाताओं का मत है कि स्वतंत्रता के पश्चात संचालित ग्राम्य विकास कार्यक्रमों से ग्रामीण समाज में परिवर्तन हुआ है।

उत्तरप्रदेश राज्य के सोनभद्र जिले में पंचायती राज के माध्यम से ग्रामीण विकास कार्यक्रम और ग्रामीण आदिवासी समाज में परिवर्तन के क्षेत्र

उत्तरप्रदेश राज्य के सोनभद्र जिले में पंचायती राज के माध्यम से ग्रामीण विकास कार्यक्रमों ग्रामीण आदिवासी समाज में परिवर्तन और परिवर्तन के क्षेत्र अध्ययन में सम्मिलित जिन 289 सूचनादाताओं का मानना है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात ग्राम्य विकास कार्यक्रमों से ग्रामीण समाज में परिवर्तन हुआ है, उनसे ज्ञात किया गया है कि यह परिवर्तन किन-किन क्षेत्रों में हुआ है?

अध्ययन द्वारा संकलित तथ्यों को सारिणी संख्या 5.22 में प्रदर्शित किया गया है।

सारिणी संख्या 5.22

आदिवासी ग्रामीण समाज मे परिवर्तन के क्षेत्रो के आधार पर वर्गीकरण

क्र.सं.	किन-किन क्षेत्रो मे परिवर्तन हुआ है	संख्या	प्रतिशत
1-	शेक्षिनिक ,आर्थिक एवं राजनैतिक क्षेत्र में	173	59-86%
2-	सामाजिक एवं स्वास्थ्य के क्षेत्र में	91	31-49%
3-	जनसंचार एवं विद्युतीकरण के क्षेत्र में	19	6-57%
4-	सामाजिक, वानिकी, जल प्रबंधन , और गैर पारम्परिक ऊर्जा क्षेत्र में	06	02-08%
	योग	289	100-00%

सारिणी संख्या 5.22 की विवेचना से स्पष्ट होता है कि 173 (59.86%) सूचनादाताओं का मानना है कि ग्राम्य विकास कार्यक्रमों के प्रभाव के परिणामस्वरूप आदिवासी ग्रामीण समाज में शैक्षणिक, आर्थिक एवं राजनैतिक क्षेत्र में परिवर्तन हुआ है। 91 (31.49%) का मानना है कि ग्रामीण समाज में सामाजिक एवं स्वास्थ्य के क्षेत्र में परिवर्तन हुआ है। 19 (6.57%) का मानना है कि आदिवासी ग्रामीण समाज में जनसंचार एवं विद्युतीकरण के क्षेत्र में परिवर्तन हुआ है। 06 (2.08%) सूचनादाताओं का मानना है कि ग्रामीण समाज में सामाजिक वानिकी, जल प्रबन्धन एवं गैर-पारस्परिक ऊर्जा क्षेत्र में परिवर्तन हुआ है। उपरोक्त से स्पष्ट होता है कि अधिकांश (91.35%) सूचनादाताओं का मानना है कि ग्राम्य विकास कार्यक्रमों के प्रभाव के परिणामस्वरूप ग्रामीण समाज के शैक्षणिक, आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक एवं

स्वास्थ्य के क्षेत्र में परिवर्तन हुआ है। इन सभी परिवर्तनों के परिणामस्वरूप ग्रामीण सामाजिक संगठन एवं संरचना में उल्लेखनीय परिवर्तन दृष्टिगोचर हो रहे हैं।

पंचायती राज व्यवस्था को प्रभावशाली बनाने हेतु सुझाव

पंचायती राज व्यवस्था को प्रभावशाली बनाने के लिए समय-समय पर अनेक अध्ययन दलों एवं समितियों की नियुक्ति की गयी है। इनका कार्य ऐसे सुझाव देना था, जिनकी सहायता से पंचायती राज संस्थाओं को ग्रामीण विकास का एक प्रभावपूर्ण माध्यम बनाया जा सके। विभिन्न समितियों के सुझावों के आधार पर ही पंचायती राज संस्थाओं में पिछड़ी जातियों, कमजोर वर्गों, महिलाओं को प्रतिनिधित्व देने एवं उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार करने के प्रयत्न किये गये हैं। इन सभी प्रयत्नों के उपरान्त भी वर्तमान समय में पंचायती राज व्यवस्था में अनेक दोष दृष्टिगोचर हो रहे हैं, जिन्हें दूर किये बिना पंचायती राज व्यवस्था से लक्ष्यों के अनुरूप सफलता प्राप्त करने की आशा नहीं की जा सकती है। इसी विचार को दृष्टीगत रखते हुए शोधार्थी ने उत्तरप्रदेश राज्य के सोनभद्र जिले में पंचायती राज के माध्यम से ग्रामीण विकास कार्यक्रमों ग्रामीण आदिवासी समाज में सूचनादाताओं से पंचायती राज व्यवस्था को प्रभावशाली बनाने हेतु अनौपचारिक वार्तालाप कर सुझावों को संकलित किया है, जिनका संक्षिप्त विवरण निम्नवत है -

1. सर्वप्रथम आवश्यक है कि पंचायती राज संस्थाओं से सम्बद्ध अधिकारियों और प्रतिनिधियों के बीच सन्देह और अविश्वास को दूर किया जाये और सम्बन्धों में सुधार लाया जाय। ऐसा करने के उपरान्त ही पंचायती राज संस्थाओं की कार्यवाही प्रभावशाली रूप से संचालित हो सकेगी।

2. ग्रामीण शिक्षा पर विशेष रूप से बल दिया जाना चाहिए। कमजोर वर्ग, पिछड़े वर्ग, महिलाओं की शिक्षा पर विशेष बल देना चाहिए। अशिक्षित जन प्रतिनिधियों को विशेषतः पंचायती राज व्यवस्था की कार्यवाही का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए, जिससे कि वह पंचायती राज व्यवस्था की कार्यवाही को ठीक प्रकार से सम्पन्न कर सकें। साथ ही आवश्यक होगा कि जनप्रतिनिधियों के लिये भी एक न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता निर्धारित होना अनिवार्य किया जाना चाहिए। ऐसा होने के उपरान्त ही वह अपने अधिकारों, कत्र्तव्यों व विकास कार्यों को सही ढंग से समझ कर दायित्व का निर्वहन कर सकेंगे।

3. पंचायतों के सफल कार्य संचालन के लिये पर्याप्त वित्तीय साधन उपलब्ध कराया जाना चाहिए और स्पष्ट किया जाना चाहिए कि कब किस कार्य के लिए धन उपलब्ध किया जायगा और उसी समय पर धन उपलब्ध करा दिया जाना चाहिए, जिससे इन संस्थाओं के प्रति व्यक्तियों का विश्वास बना रहे। पंचायतों की वित्तीय स्थिति सुदृढ़ हो सके इसके लिए विभिन्न मदों से होने वाली आय का कुछ हिस्सा निश्चित कर इन्हें दिया जाना चाहिए, जिससे वे स्वयं ग्रामीण विकास के कार्य कर सकें।

4. ग्राम पंचायतों को विकास योजनाएँ तैयार करने का अधिकार दिया जाना चाहिए, जिससे वे अपने गाँव की आवश्यकतानुसार विकास कार्य योजना तैयार कर सकें। विकास कार्य योजनाओं की जानकारी सामान्य जनता तक भी पहुँचनी चाहिए, जिससे जनता अपना सक्रिय सहयोग इन योजनाओं एवं कार्यक्रमों को मूर्तरूप देने में दे सके।

5. वर्तमान समय में पंचायतों में विशेषकर अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, महिलाएँ एवं अन्य पिछड़े वर्ग के व्यक्तियों का प्रतिनिधित्व बढ़ा है, किन्तु अशिक्षा एवं अपने कर्तव्यो एवं अधिकारों की पर्याप्त जानकारी न होने के कारण वह अपनी भूमिका का सही रूप में

निर्वहन नहीं कर पाते हैं। अतः आवश्यक है कि सरकार द्वारा समय-समय पर विशेष प्रशिक्षण कार्यशालाओं का आयोजन किया जाना चाहिए और जन प्रतिनिधियों को उनके कर्तव्यो एवं अधिकारों की पर्याप्त जानकारी प्रदान की जानी चाहिए।

6. प्रायः यह देखा गया है कि प्रभुता सम्पन्न एवं उच्च जाति के व्यक्ति ग्राम सभा की बैठक ही नहीं बुलाते हैं, बल्कि घर बैठे ही सभी कार्यों की औपचारिकता पूरी कर लेते हैं। इस प्रवृत्ति पर रोक लगाने के लिए आवश्यक है कि जनसंचार के माध्यमों द्वारा ग्रामवासियों को जागरूक बनाया जाय तथ ग्रामवासियों को ग्रामसभा की बैठकों में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाय।

7. भारतीय राजनैतिक व्यवस्था पर जातिवाद का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है। ग्रामीण पंचायतें, नगर पालिकाओं, जिला परिषदों, विधानसभाओं, लोकसभा तक के चुनावों में जातिवाद का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है। इसी कारण डी.आर. गाडगिल ने ‘‘जातिवाद को राजनीति का केन्सर कहा है।’’ अतः राजनीति में जातिवाद के प्रभाव को कम करने के लिए आवश्यक प्रयास करने चाहिए तथा चुनावों में शिक्षित, योग्य, चारित्रिक छवि वाले व्यक्तियों को ही प्रत्याशी बनाया जाना चाहिए।

8. पंचायतों को राजकीय हस्तक्षेप से मुक्त रखा जाना चहिए, उन्हें अपने कार्यों को संचालित करने के लिए अधिक से अधिक स्वतंत्रता प्रदान की जानी चाहिए।

9. ग्राम पंचायतों के चुनाव की पद्धति सरल व गुप्त होनी चाहिए। सरपंचों का चुनाव पंचों के माध्यम से होना चाहिए। इससे जनमानस में सरपंचों के प्रति सोच सकारात्मक बनेगी।

10. ग्राम पंचायतों के चुनाव की पद्धति सरल एवं पारदर्शी होनी चाहिए। उन्हीं प्रत्याशियों को टिकिट दिया जाना चाहिए जो समाज सेवा की भावना रखते हों।, उनकी अपराधिक छवि न हो तथा संघर्षशील व्यक्तित्व हो। ऐसा करने के ही उपरान्त आशा की जा सकेगी कि जो व्यक्ति जन प्रतिनिधि के रूप में चयनित होंगे वह निश्चय ही पंचायती राज व्यवस्था के अपेक्षित लक्ष्यों को प्राप्त कराने में सफल सिद्ध होंगे।

11. पंचायतों में व्याप्त भ्रष्टाचार पर प्रतिबन्ध लगाया जाय। योजनाओं के क्रियान्वयन में पारदर्शिता लाने हेतु 'सोशल आडिट' की व्यवस्था की जाय।

12. प्रायः यह देखा जाता है कि ग्रामीण समाज में चुनावों के कारण वैमनस्यता बढ़ जाती है। उसे सख्ती के साथ रोका जाय। सरकार को महिला हिन्सा एवं उत्पीड़न करने वालों को कठोर दण्ड देना चाहिए। ऐसा करने से आदिवासी ग्रामीण समाज की महिलाएँ नेतृत्व करने की ओर अधिक आकर्षित होंगी।

अध्याय- षष्टम

निष्कर्ष एवं सुझाव

भारत के उत्तर प्रदेश राज्य ने आज़ादी के बाद पहली बार सन 1961 में बलवंतराय मेहता समिति की रिपोर्ट के आधार पर पंचायतों की त्रिस्तरीय प्रणाली को अपनाया गया। 1961 के अधिनियम में ग्राम पंचायतों के अलावा क्षेत्र समिति और जिला परिषद का भी गठन किया गया। उत्तरप्रदेश में ने पंचायती राज 73 वें संवैधानिक संशोधन अधिनियम के अनुरूप एक नया पंचायती राज कानून बनाया गया। इसमें संयुक्त प्रांत पंचायत राज अधिनियम, 1947 और उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत अधिनयम 1961 जैसे दो मौजूदा अधिनियमों में संशोधन किया गया, जिसमें 73 वें संविधान संशोधन के अनुरूप प्रावधान शामिल हैं।

जनजातीय विकास को एक ऐसे दृष्टिकोण के रूप में माना गया है जो जनजातीय लोगों को केंद्र स्तर पर रखता है। शब्द 'जनजाति' लैटिन शब्द 'ट्राइबस' से लिया गया है जो एक विशेष प्रकार के सामान्य और राजनीतिक संगठन को दर्शाता है जो कई अलग-अलग देशों और समाजों में पाया जाता है। यह शब्द अलग-अलग देशों में अलग-अलग अर्थ रखता है। भारत में, यह उन लोगों के समूह को संदर्भित करता है जिन्हें आदिम काल से विभिन्न नामों से जाना जाता है जैसे कि वनवासी, आदिवासी, वन्याजति और आदिमती। एक जनजाति को एक सामान्य भाषा, विशिष्ट रीति-रिवाजों, संस्कारों और अनुष्ठानों, विश्वासों, साधारण सामाजिक रैंक और राजनीतिक संगठन और संसाधनों के सामान्य स्वामित्व वाले स्वदेशी

लोगों के समूह के रूप में भी परिभाषित किया गया है। प्रत्येक जनजाति में कुछ विशिष्ट संस्कृति होती है जो इसे अन्य जनजातियों से अलग करती है।

यह शोध में उत्तरप्रदेश राज्य के सोनभद्र जिले में आदिवासी जनजातीय समाज के विकास में पंचायती राज की भूमिका त्रिस्तरीय पंचायती राज के तहत बुनियादी प्रणालियों, संरचनाओं और अभ्यावेदन की जांच करता है। अधिनियमों के तहत सूचना, पंचायती राज से संबंधित और 73 वें संवैधानिक संशोधन का पालन करने के लिए किए गए संशोधनों का अध्ययन किया गया और अन्य माध्यमिक स्रोतों का भी उपयोग किया गया। इसके अलावा, फोकस्ड ग्रुप डिस्कशन और की-इनफॉर्मेंट इंटरव्यू जैसे पार्टिसिपेटरी टूल्स का उपयोग करके फील्ड सर्वे के प्राथमिक गुणात्मक डेटा को एकत्र किया गया और माध्यमिक स्रोतों से जानकारी को पूरक और विश्लेषण करने के लिए एकत्र किया गया। ग्रामीण विकास विभाग द्वारा चलाए जा रहे आदिवासी विकास कार्यक्रमों के प्रभाव तक पहुँचने के लिए सोनभद्र जिले (यू.पी.) का अध्ययन, आदिवासी पुरुष और महिलाओं की जागरूकता और सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक गतिविधियों में उनकी भागीदारी का अध्ययन करना, पंचायती राज व्यवस्था में आदिवासी समाज की भागीदारी की उभरती प्रवृत्ति का अध्ययन करना, आदिवासीयों के सशक्तीकरण के लिए विकास के सरकारी कार्यक्रमों के कार्यान्वयन का मूल्यांकन करना, पंचायतों के निर्वाचित सदस्यों से अपेक्षित भूमिका और उनके द्वारा किये गए प्रदर्शन के स्तर का अध्ययन किया गया है।

भारत में विभिन्न क्षेत्रों में आदिवासी जनजाति समूह की स्थिति उनके सामाजिक बहिष्कार के विभिन्न रूप हैं। वे सामाजिक बहिष्कार की पीड़ा को सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक क्षेत्रों में बहुत गहराई से अनुभव करते हैं। उत्तर प्रदेश में जनजातियो की समकालीन स्थिति से

पता चलता है कि वे शैक्षिक रूप से अशिक्षित , आर्थिक रूप से गरीब और सामाजिक रूप से बहिष्कृत रहे हैं। कम भूमि का होना , साक्षरता के निम्न स्तर के साथ, वे तेजी से औद्योगिक विकास की कमी और राज्य में गरीबी रेखा से नीचे होने के कारण अधिकांश रोजगार और मजदूरी के निम्न स्तर की रही हैं। उन्हें भूमि स्वामित्व, रोजगार के निम्न स्तर और आय से बहुत अधिक बाहर रखा गया है। इसके अलावा, वंचित और बहिष्कृत समूहों के रूप में, राज्य में जनजातियो का बड़ा जनसमूह उन अवसरों का उपयोग नहीं कर पाया है। जनजातियो और गैर-जनजातियो के बीच असमानता राज्य में काफी बनी हुई है। हालांकि, राजनीतिक चेतना का उदय और राज्य में जनजातियो के बीच राजनीतिक जागृति, नीचे से एक उथल-पुथल के कारण, जिसने पारंपरिक जाति पदानुक्रम पर सवाल उठाया है। जिससे नागरिक समाज के लोकतांत्रिककरण की प्रक्रिया शुरू हो गई है। इस प्रक्रिया ने सामाजिक-राजनीतिक गोलबंदी, पहचान का निर्माण, जनजातियो की संख्या में वृद्धि और दल और दल के नेतृत्व वाली पार्टियों और संगठनों के उभरने को आकार दिया है। इस संदर्भ में, इस अध्ययन का उद्देश्य पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से जनजातियो के सामाजिक समावेश में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका की जांच करना था। शोध अध्ययन 73 वें संवैधानिक संशोधन के प्रकाश में किया गया था जो स्थानीय क्षेत्रों में महत्वपूर्ण हस्तक्षेप करने वाले निकायों में से एक है। पंचायती राज संस्थानों को मुख्य रूप से उभरते जनजातियो की सेवा करने वाले संस्थानों के रूप में देखा जा सकता है। वे पंचायत चुनावों के माध्यम से जनजातियो को लामबंद करने और उच्च जातियों के साथ उनके परस्पर जुड़ाव के लिए सफल साधन साबित हो रहे हैं, जो बदले में ग्रामीण स्तर पर सामाजिक सहभागिता पैटर्न को बदल रहे हैं। इसलिए, इस शोध का मुख्य उद्देश्य यह समझना था कि चुने गए जनजाति प्रतिनिधि वास्तविक कामकाज में और विशेष रूप से पंचायतों में निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में प्रभावी रूप से भाग लेने में सक्षम हैं?

और इस भागीदारी ने ग्राम पंचायत स्तर पर उनकी सामाजिक सहभागिता को कैसे बदल दिया ? और इस प्रकार राजनीतिक समावेश के माध्यम से जनजातियो का समग्र सामाजिक समावेश हुआ। अध्ययन के मुख्य उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए कुछ उद्देश्यों को तैयार किया गया था और परिकल्पना का निर्माण किया गया था। अध्ययन के विशिष्ट उद्देश्य इस प्रकार थे: ग्राम पंचायत स्तर पर निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों के सामाजिक आर्थिक प्रोफाइल बनाना, पंचायतों की निर्णय प्रणाली में निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों की प्रभावी भागीदारी का आकलन करना, व्यक्तिगत और सामाजिक-सांस्कृतिक अंतरिक्ष स्तर पर निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों साथ ही महिला की सामाजिक सहभागिता पर प्रभावी भागीदारी के प्रभाव का आकलन करने के लिए, जनजाति और गैर-जनजाति निर्वाचित प्रतिनिधियों के बीच सामाजिक संबंधों की प्रकृति की जांच करना, निर्णय लेने और सामुदायिक लामबंदी में अपनी भूमिका के साथ अपनी स्वयं की भागीदारी और उनकी संतुष्टि के स्तर पर निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों की धारणा का दस्तावेजीकरण करना, निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों के निष्कर्षों में समस्याओं और बाधाओं की पहचान करना शामिल रहा है। उद्देश्यों के आधार पर, निम्नलिखित परिकल्पना की सटीकता का परीक्षण किया गया है :जिसमे पंचायती राज संस्थानों के स्तर पर निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों के निर्णय लेने में प्रभावी भागीदारी, उच्च स्तर पर चुने गए जनजाति प्रतिनिधियों के सामाजिक संपर्क स्तर में सुधार है।

सोनभद्र जनपद अपनी बहुआयामी ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं भौगोलिक उपलब्धियों के कारण विश्व में अपना एक अलग गौरवपूर्ण स्थान रखता है। यहाँ पृथ्वी पर जीवन के आरम्भ के समय के लगभग डेढ़ अरब वर्ष पुराने फॉसिल्स सलखन में पाये गये है। वर्तमान में यह जनपद प्राचीन जनजातीय सभ्यता संस्कृति एवं नवीन औद्योगिक सभ्यता- संस्कृति के समन्वय के प्रतीक के रूप में विश्व में अपनी एक गौरवूपर्ण पहचान बनाये हुए है।

भौगोलिक संरचना की दृष्टि से इस जनपद के सम्पूर्ण भू-भाग को दो भागों में बांटा गया है। पहला मध्यवर्तीय पठार है इसके अन्तर्गत विन्ध्य पर्वत श्रृंखलाओं के पठारी हिस्से से होते हुए कैमूर पर्वत श्रृंखलाओं की अन्तिम सीमा सोन नदी तक फैला हुआ है। रावर्ट्सगंज, घोरावल, चतरा तथा नगवाँ विकास खण्ड इस संभाग में स्थित है। दूसरा सोनघाटी है इसके अन्तर्गत सोन नदी के दक्षिण का सम्पूर्ण भू-भाग आता है इसे सोनपार भी कहा जाता है।

सोनभद्र में आदिम जनजातियों का इतिहास उतना ही पुराना है जितना की यहाँ की मानव जातियों का इतिहास पुराना है। इन आदिम जातियों की संख्या सैकड़ो में है और देश के प्रायः प्रत्येक भाग में ये आदिम जातियाँ किसी न किसी रूप में पायी जाती है। इन जातियों को विभिन्न नामों से जाना जाता है जैसे गिरिजन, आदिवासी, वनवासी, कवीले, जनजाति, आदिम, जाति आदि। इनमें से जो कुछ जातियाँ भारतीय संविधान की परिशिष्ट में अनुसूचित है उन्हें अनुसूचित जनजाति कहा जाता है। इन अनुसूचित जनजातियों को सरकार की ओर से विविध प्रकार की सुविधाए आरक्षण और सहायता प्राप्त है जिनके द्वारा यह अपना शैक्षिक, आर्थिक व्यावसायिक और सामाजिक विकास कर सकती है। जिन जातियों को सरकार की सहायता प्राप्त है उन जातियों में कोल, गोड़, खरवार, अगेरिया, घसिया, पनिका, वैसवार आदि है। भारत की आदिम जातियाँ इस देश की मूल निवासी है। कहा जाता है कि भारत में आर्यो के आगमन के पूर्व में जो जातियाँ रहती थी। उनमें से अधिकांश को आदिम जाति, जनजाति या आदिवासी नाम से जाना जाता था। भारत की जनजातियों का अतीत महान एवं गौरवशाली रहा है। इनकी सभ्यता संस्कृति, साहित्य, संगीत आदि को भी महान और उत्तम कहा जायेगा। अपितु लगातार विदेशी शासन, अशिक्षा, अज्ञानता और अजागृति के कारण इनकी शैक्षिक, आर्थिक एवं राजनैतिक दशा अब भी सोचनीय है। इसाई मिसनरियों के प्रभाव के कारण कतिपय जनजातियों में शिक्षा का प्रचार हुआ है। अतः समाज के शोषक तत्वों

तथा सरकारी अधिकारियों व कर्मचारियों द्वारा उनका दमन व शोषण अब भी जारी है और यह तब तक जारी रहेगा जब तक दलित शोषित जनजातियाँ स्वंय संगठित होकर इसके विरूद्ध खड़ी होकर संघर्ष नहीं करेगी। जनजातियों को शिक्षित होकर संगठित होना चाहिए और अपने अधिकारों तथा सम्मान के प्रति जागरूक होकर अपने ऊपर किये जा रहे दमन व शोषण के विरूद्ध ससक्त संघर्ष करना चाहिए। सांस्कृतिक और राजनीतिक भारत के इतिहास में उत्तर प्रदेश की स्थिति सदा से बड़ी ही विलक्षण एवं महत्वपूर्ण रही है। यही आर्यो का मध्य देश था। अतीत काल से वायव्य कोण से संचरित युयुत्सु जातियों के प्रवेश द्वारा से भारत के हृदय स्थल को मिलने वाले पथ से जुड़े होने के कारण पंचनद और वंगभूमि के बीच उपजाऊ मैइरल का मध्यवर्ती भाग होने के कारण उसका इतिहास उत्तर प्रदेश के सम्पूर्ण इतिहास में अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा है यद्यपि उसे प्रागैतिहासकै अथवा मिथकीय अतीत के सम्बन्ध में हम अल्प ज्ञान है।

जब सारा समाज तेजी से प्रगति की ओर अग्रसर है तो आदिवासी ही पीछे क्यों रहें। अशिक्षा, अन्धविश्वास, समाज द्वारा शोषित, पीड़ित और उपेक्षित रहा है। पिछले कुछ दशकों में उसे विकास का उन्मुक्त वातावरण मिला है। तथापि अन्य कारणों से उसके प्रगति की गति अभी भी धीमी है। अपने देश के अतिरिक्त विदेशों में भी आदिवासियों के विकास के लिए अनेक योजनाएं बनायी जा रही है। उन पर पर्याप्त धन खर्च किया जा रहा है इसलिए अभी भी हमारा उनकी प्रवृत्तियों, मूल समस्याओं, सांस्कृतिक, सामाजिक और कलात्मक गतिविधियों, उनके परम्परागत जीवन यापन के तौर तरीकों से परिचय, तालमेल या सामन्जस्य नहीं हो पाया है।

मनुष्य भौतिक सुख समृद्धि की होड़ में तमाम सामाजिक, प्राकृतिक, मानवीय मूल्यों को ताक पर रखकर स्वार्थी हो गया है उसे आचरण की पवित्रता का भी ध्यान नहीं रह गया है। प्रकृति

मानव की आदि सहचरी है संकटों में यही साथ देती है। भौतिक झंझावात से घबराकर, मनुष्य प्रकृति के बीच ही विश्रान्ति पाता है। यही कारण है कि संत महात्मा संसार से उबकर प्रकृति की गोद में जाते थे। वहाँ से ज्ञान का प्रकाश पाते और उससे जगत को प्रकाशित करते थे। अब जब प्रकृति ही प्रदूषित हो गयी है तो मनुष्य कहाँ जायेगा? उसने चाँद, सितारों पर भी निवास स्थान बनाने का प्रयास किया है। भारत की स्वतन्त्रता के समय सोनभद्र जनपद अत्यन्त पिछड़ा, अविकसित दक्षिणी भाग था। शदियों से उपेक्षित, पहाड़ो एवं घने जंगलों से आच्छादित जंगली बीहड़ क्षेत्र था। जहाँ विकास कार्यो की स्थिति नगण्य थी। जो विकास कार्य हुए थे। वे रावर्टसगंज के आस-पास के क्षेत्रों तक ही सीमित थे। यहाँ न तो अच्छी सड़के थी, न रेल मार्ग और न ही आवागमन के साधन। चिकित्सा, शिक्षा इत्यादि आधारभूत सुविधाओं का भी पूर्णतया अभाव था। कोई भी बड़ी औद्योगिक इकाई नहीं थी। यहाँ की अधिक जनसंख्या आदिवासी जनता कृषि वनोत्पाद एवं छोटे-छोटे घरेलू उद्योगों पर ही आश्रित थी।

यहाँ की औद्योगिक परियोजनाओं की स्थापना का लाभ यहाँ के मूल निवासियों को न मिलकर बाहर के शिक्षित-प्रशिक्षित लोगों को मिला। यद्यपि यहाँ की अधिकांश परियोजनाओं द्वारा विस्थापितों को उचित मुआवजा एवं सेवा योजना के साथ-साथ अत्याधुनिक सुविधाओं से युक्त पुर्नवास बस्तियों को बनाकर, विस्थापन के घाव भरने की कोशिश की गयी किन्तु यह प्रयास असफल रहा। पढ़े-लिखे न होने के कारण उन्हे अच्छे पद नहीं मिल पाये। जिससे अधिकांश आदिवासी आबादी पहले की भाँति कष्ट कर जीवन जी रही है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि स्वतंत्रता के पश्चात सोनभद्र जनपद में अभूतपूर्व प्रगति हुयी जिससे यह जनपद शीघ्र ही अपना सर्वागीण विकास कर अपने आपको देश में प्रतिष्ठापित कर सका । किन्तु पंचायत संस्थाओ के गंभीर प्रयासों से विकास तथा गम्भीर पर्यावरणीय संकट एवं ऐतिहासिक धरोहरों तथा आदिवासी जातियाँ वह उनकी संस्कृति के नष्ट होने से बचाया जा रहा है। देश एवं प्रदेश के साथ-साथ जनहित में भी औद्योगिकरण आवश्यक है। किन्तु इसका अन्धानुकरण उचित नहीं है। आवश्यकता इस बात की है कि औद्योगिक विकास को गतिशील रखा जाए। साथ ही इस बात का भी उपाय किये जाये कि इस से गम्भीर पर्यावरणीय संकट तथा पारिस्थितिक असंतुलन जैसे गम्भीर संकट न उत्पन्न होने पाये । यहाँ की ऐतिहासिक धरोहरों एवं आदिवासियों की जातियाँ एवं सांस्कृति भी सुरक्षित रहे तथा यहाँ की आदिवासी जनता को शिक्षित एवं प्रशिक्षित कर उन्हें भी विकास की मुख्य धारा से जोड़ा जाए। जिससे कि उन्हे भी उनके त्याग व बलिदान का कुछ हद तक लाभ मिल सके तथा नेहरू जी का सपना यहाँ का विकास यहाँ के आदिवासियों के साथ हो सच हो सके।

विश्लेषण से पता चला कि सोनभद्र जिले में आदिवासी ग्रामीण जनजाति ग्राम पंचायत स्तर पर निर्णय लेने में प्रभावी रूप से भाग ले रहे है और इससे व्यक्तिगत और सामाजिक-सांस्कृतिक अंतरिक्ष स्तर पर निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों की सामाजिक सहभागिता पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। सामाजिक समावेश के दो चर (राजनीतिक भागीदारी और सामाजिक सहभागिता) के बीच संबंध की प्रकृति का विश्लेषण भी शोध में किया गया है।

हालाँकि, किसी ने ठीक ही कहा है कि आँकड़े जितना प्रकट करते हैं, उससे कहीं अधिक छिपाते हैं। इस संदर्भ में उत्तरदाताओं के साथ व्यक्तिगत अवलोकन और गहन चर्चा शोधकर्ता

के बचाव में आती है। आंकड़ों का विश्लेषण करते हुए यह पाया गया है कि अधिकांश मामलों में 'अन्य' (गैर-जनजाति) की प्रतिक्रियाएं जनजातियो के कामकाज से संबंधित सवालों पर उनके जनजाति समकक्षों की तुलना में कम अनुकूल रही हैं। इसके बावजूद, गैर-जनजातियो का उच्च अनुपात इस विचार का था कि अब चुने गए जनजाति प्रतिनिधि प्रभावी रूप से अपने कार्य और कर्तव्यों का पालन कर रहे थे और इसने व्यक्तिगत और सामाजिक-सांस्कृतिक अंतरिक्ष स्तर पर जनजातियो की सामाजिक सहभागिता में सुधार किया। सर्वेक्षण के दौरान, जनजाति और गैर जनजाति प्रतिनिधियों के बीच मौजूदा सामाजिक और आर्थिक अंतर के बारे में सूचनाओ की प्राप्ति के लिये चुने गए प्रतिनिधियों की सामाजिक आर्थिक प्रोफ़ाइल को ध्यान में रखा गया था। यह देखा गया कि निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधि अपने गैर-जनजाति समकक्षों की तुलना में अपेक्षाकृत कम थे। यह मुख्य रूप से इस तथ्य के कारण था कि युवा जनजाति प्रतिनिधि पुराने जनजाति प्रतिनिधियों की तुलना में अधिक शिक्षित थे। शिक्षा ने तर्कवाद और जागरूकता के विकास मार्ग को अपनाया है, जिसने युवा पीढ़ी के जनजातियो के विचारों, भावनाओं और विचारों को प्रभावित किया है। इस प्रक्रिया ने राजनीतिक चेतना और राजनीतिक समाजीकरण के विकास में भी मदद की, जिसने बदले में राजनीतिक गतिशीलता और राजनीतिक मुखरता का मार्ग प्रशस्त किया। यह भी देखा गया कि अविवाहित जनजाति प्रतिनिधियों का अनुपात गैर-जनजाति प्रतिनिधियों की तुलना में अधिक था। इस प्रकार, यह इंगित करता है कि युवा और अविवाहित जनजाति ग्रामीण शक्ति संरचना में अपना हिस्सा लेने के लिए अत्यधिक मुखर थे। हालाँकि, समग्र रूप से चुने गए गैर जनजाति प्रतिनिधियों की तुलना में चुने हुए जनजाति प्रतिनिधियों के मामले में शैक्षिक स्तर कम थी। चुने गए गैर-जनजाति प्रतिनिधियों की तुलना में लगभग 30 प्रतिशत चुने हुए जनजाति प्रतिनिधि निरक्षर या सिर्फ साक्षर की श्रेणी में थे,

लेकिन शैक्षिक प्राप्ति में सबसे अधिक अपमानजनक स्थिति सोनभद्र की जनजाति आदिवासी महिला प्रतिनिधियों की रही है। उत्तरदाताओं के बहुमत के लिए प्राथमिक व्यवसाय कृषि था। श्रेणीवार भी, उनकी सामाजिक श्रेणियों के बावजूद, अधिकांश जनजाति और गैर-जनजाति प्रतिनिधि कृषि गतिविधियों में लिप्त पाए गए है । यह पाया गया कि कृषक कार्य वाले गैर-जनजाति प्रतिनिधियों की संख्या अधिक थी और चुने गए जनजाति प्रतिनिधियों की तुलना में मजदूरी में शामिल लोग कम थे। अधिकांश जनजाति महिला प्रतिनिधि मज़दूर थीं, जबकि अधिकांश गैर-जनजाति महिला प्रतिनिधि घरेलू कामों में लगी थीं। इसने प्राथमिक व्यवसाय के संबंध में असमानता को स्पष्ट रूप से प्रतिबिंबित किया। यह भी देखा गया कि निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों और गैर-जनजाति प्रतिनिधियों के बीच मौजूदा आय असमानताएं थीं। जनजाति प्रतिनिधियों का बहुमत वार्षिक आय कम था, जबकि गैर-जनजाति प्रतिनिधि बहुसंख्यक अपेक्षाकृत अधिक आय श्रेणी में आते हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है कि कुल मिलाकर गैर-जनजाति प्रतिनिधियों की स्थिति अपने जनजाति समकक्षों से बेहतर थी।

ऐसा प्रतीत हुआ कि राजनीति से जुड़ा पारिवारिक माहौल राजनीति के करियर के लिए एक महत्वपूर्ण कारक हो सकता है। शोध से पता चला की लगभग 58 प्रतिशत निर्वाचित प्रतिनिधियों के पास उनके परिवार के सदस्य में से कोई था, जो पहले कभी पंचायत चुनाव लड़े थे। यह गैर-जनजाति प्रतिनिधियों के मामले में उनके जनजाति समकक्षों की तुलना में अधिक स्पष्ट था। यह पाया गया है कि सीट का आरक्षण भी जनजाति प्रतिनिधियों को चुनाव लड़ने के लिए प्रेरित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा था। इसके विपरीत, उनके गैर-जनजाति समकक्षों को आमतौर पर स्व-प्रेरित होने का दावा किया गया था। इस प्रकार, आरक्षण ने जनजाति प्रतिनिधियों और महिला प्रतिनिधियों के लिए भी एक महत्वपूर्ण

भूमिका निभाई है, क्योंकि इसने राजनीति में जमीनी स्तर पर उनके प्रवेश की सुविधा प्रदान की है। यह देखा गया है कि कम शिक्षा स्तर, वित्तीय संसाधनों की कमी और जाति से संबंधित प्रतिरोध चुनाव लड़ने के दौरान निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों द्वारा सामना किए गए प्रमुख अवरोध थे। उनके गैर-जनजाति समकक्षों के लिए इसके विपरीत चुनाव लड़ते समय राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता प्रमुख समस्या थी। पंचायतों में चुने गए प्रतिनिधियों का प्रदर्शन और उनकी ग्राम विकास में सार्थक योगदान करने की क्षमता, उनके कानूनों और नियमों से हो रहा है। यह उनकी शक्तियों और जिम्मेदारियों के बारे में जागरूकता और निर्वाचित प्रतिनिधियों के रूप में उनकी भूमिकाओं की महत्वपूर्णता पर उनकी संवेदनशीलता को दर्शाता है। निर्वाचित प्रतिनिधियों में से अधिकांश पंचायत अधिनियमों और इसके प्रावधानों से पूरी तरह या आंशिक रूप से अवगत थे। इसी तरह, पंचायत के कार्यों और शक्तियों की अच्छी समझ के मामले में जनजाति पुरुष प्रतिनिधि अपने गैर-जनजाति पुरुष समकक्षों से पीछे नहीं थे। लेकिन, महिला प्रतिनिधि, जनजाति और गैर-जनजाति, दोनों अपने पुरुष समकक्षों के समान बुद्धिमान नहीं थे। चुने गए आदिवासी जनजाति प्रतिनिधियों के बीच जागरूकता में अन्तर का प्रमुख कारण उन्हें समुचित प्रशिक्षण या अभिविन्यास कार्यक्रम से जोड़ने को माना जा सकता है।

प्रभावी भागीदारी की प्रकृति की जांच करने और इस तरह गांवों में चुने हुए जनजाति प्रतिनिधियों की स्थिति पर असर पड़ने के लिए, शोधकर्ता ने विभिन्न संकेतकों पर चुने गए जनजाति प्रतिनिधियों का साक्षात्कार लिया, ताकि वे अपनी भागीदारी के बारे में अपनी धारणा जान सकें और गाँव में अपनी सामाजिक सहभागिता में बदलाव ला सकें। आगे सोनभद्र जिले के ग्राम पंचायत स्तर पर मौजूदा सामाजिक अंतःक्रियात्मक पैटर्न का निरीक्षण करने के लिए, दूसरों की राय, यानी गैर-जनजातियो की राय लेना भी बहुत आवश्यक था। अतः यह हमें जनजाति प्रतिनिधियों के बारे में गैर-जनजाति मानसिकता में अंतर्दृष्टि भी प्रदान

किया। कुल मिलाकर विभिन्न आयामों में चुने गए जनजाति प्रतिनिधियों की भागीदारी की गुणवत्ता यथोचित रूप से अच्छी रही। कुल उत्तरदाताओं में से 75 प्रतिशत ने बताया कि चुने गए जनजाति प्रतिनिधि नियमित रूप से ग्राम सभा की बैठकों में भाग ले रहे थे। उत्तरदाताओं में से अधिकांश, जिन्होंने नकारात्मक (25%) में जवाब दिया, उनकी सामाजिक श्रेणी के बावजूद, जनजाति प्रतिनिधियों द्वारा बैठकों में कम प्रभावी भागीदारी के लिए शिक्षा की कमी को प्रमुख कारण बताया। इसके बाद अन्य कारण थे जैसे वित्तीय संसाधनों की कमी, जानकारी की कमी, प्रमुख जातियों का डर और पुरुष वर्चस्व एक कारण था । एक जनजाति प्रतिनिधि के अनुसार, जिन्होंने नकारात्मक में उत्तर दिया कि, उनका कहना था की "हमें बैठकों में हमसे जुड़े मुद्दों पर एक शब्द भी बोलने की अनुमति नहीं है, अगर हम उनका विरोध करने की हिम्मत करते हैं (प्रमुख जातियों के लोग), तो हमें गंभीर परिणाम भुगतने की धमकी दी जाती है"। एक अन्य जनजाति प्रतिनिधि ने दावा किया कि "हमन के लोग ई लोगन डाबा के राखेला" ये प्रमुख जाति के व्यक्ति हमें दबाकर रखते हैं)। जबकि, गैर-जनजाति प्रतिनिधि में से एक ने प्रमुख जातियों के डर को कम करने का कारण बताया, जैसे 'इनहैंके (जनजाति) खातिर ता सारा कानुन है, केके जेल मैं जाए के' (सभी कानून उनके पक्ष में हैं, जो चाहते हैं जेल जाना)। अधिकांश महिला प्रतिनिधि, चाहे उनकी सामाजिक श्रेणी, जो कि जनजाति और गैर-जनजाति हों, ग्राम सभा की बैठकों में पुरुष वर्चस्व के अलावा, अन्य कारणों के अलावा, ग्राम सभा की बैठकों में निर्वाचित जनजाति महिला प्रतिनिधियों की प्रभावी भागीदारी का प्रमुख कारण है। महिला प्रतिनिधियों में से एक ने कहा कि, 'महिला प्रतिनिधि अपने पति के साथ आती हैं। वे नहीं बोलते हैं, उनके पति करते हैं'। यह दर्शाता है कि जनजाति महिला प्रतिनिधि अपने पति या परिवारों के पुरुष सदस्य के लिए परदे के पीछे काम करती हैं।

ग्राम सभा की बैठकों में गाँव के जनजाति नागरिकों की भागीदारी काफी अधिक (50% से अधिक) बताई गई थी, जो निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों द्वारा बेहतर सामुदायिक जुटाव की ओर इशारा करता था। यह पाया गया है कि अधिकांश उत्तरदाताओं (80.26%) का विचार था कि निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधि ग्राम विकास कार्यों को प्रभावी ढंग से लागू कर रहे थे। लेकिन, लगभग 20 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने भी नकारात्मक उत्तर दिया। इसके विपरीत, एक जनजाति प्रधान ने कहा है कि, "जनजाति प्रतिनिधि बहुत सक्षम हैं और अपनी जिम्मेदारियों और ग्राम विकास कार्यों को बहुत प्रभावी ढंग से निष्पादित करते हैं"। हालांकि, कुल मिलाकर यह दर्शाता है कि गैर-जनजाति अब धीरे-धीरे स्वीकार करने लगे हैं। निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों द्वारा निभाई गई भूमिका, जो पंचायती राज संस्थाओं के पहले के दिनों में नहीं थी।

इसी तरह, उत्तरदाताओं का काफी अधिक प्रतिशत (71.49%) इस बात से सहमत था कि जनजाति प्रतिनिधि अपने दम पर निर्णय लेते हैं और इस संबंध में गैर-जनजाति प्रतिनिधियों से प्रभावित नहीं थे। लेकिन, 28.51 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने भी नकारात्मक में सूचना दी, अर्थात्, वे इस दृष्टिकोण से असहमत थे कि निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधि प्रभावी रूप से निर्णय लेने में सक्षम थे। उनकी असहमति के कारणों को जनजाति और गैर-जनजाति प्रतिनिधियों द्वारा प्रदान किए गए निम्नलिखित विचारों में प्रभावी रूप से प्रतिबिंबित किया गया था। चुने गए गैर-जनजाति प्रतिनिधियों में से एक ने कहा कि, "जनजाति प्रतिनिधि ज्यादातर मामलों में निरक्षर होते हैं और निरक्षर होने के कारण उन्हें काम करने में परेशानी होती है। वे चर्चा किए गए मुद्दों से जूझने में असफल होते हैं और इसलिए निर्णय लेने में संकोच करते हैं"। उनके गाँव की स्थिति का वर्णन करने वाले प्रतिनिधियों ने कहा कि, "यहाँ प्रमुख जाति हावी हैं और अपने लोगों के लाभ के लिए कार्यक्रमों और नीतियों का निर्धारण

करते हैं जबकि अधिकांश गरीब और कमजोर लोग उनका विरोध करने से डरते हैं। उन्हें बैठकों में बोलने की अनुमति नहीं है "। इसी तरह, एक जनजाति प्रधान ने कहा कि, "मेरे गाँव के एक दबंग ने ग्राम सभा की भूमि में अवैध निर्माण शुरू कर दिया, जब मैंने उसका विरोध किया तो उसने मुझे गंभीर परिणाम भुगतने की धमकी दी और यहाँ तक कि मेरे खिलाफ अविश्वास प्रस्ताव लाने की भी कोशिश की लेकिन किसी तरह असफल रहा" । जहाँ पहले की सत्ता साधन संपन्न उच्च जातियों के हाथों में केंद्रित थी, आज ग्राम पंचायत गैर-उच्च जातियों द्वारा नियंत्रित है और पारंपरिक अभिजात वर्ग को ग्रामीण शक्ति संरचना स्तर पर पृष्ठभूमि में धकेला जा रहा है।

राजनीतिक पदाधिकारी होने के नाते, निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों को नियमित रूप से ग्राम पंचायत गतिविधियों से संबंधित स्थानीय नौकरशाही के साथ बातचीत करनी होती थी। इसलिए, जिस हद तक जनजाति प्रतिनिधि स्थानीय सरकारी अधिकारियों के साथ बातचीत करते हैं, वह ग्राम पंचायत स्तर पर उनकी प्रभावी भागीदारी का एक महत्वपूर्ण संकेतक था। इस संदर्भ में, यह देखा गया है कि अधिकांश निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों के सामाजिक समावेश की प्रकृति और सीमा पर अध्ययन ने पंचायत स्तर पर निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों की सामाजिक सहभागिता प्रक्रिया पर ग्राम पंचायत गतिविधियों में उनकी प्रभावी भागीदारी के प्रभाव का आकलन करने के साथ अपनी सक्रियता दिखाई है। यह देखा गया कि पंचायती राज अधिकारी के रूप में चुने जाने और काम करने का सकारात्मक प्रभाव था। यह इस तथ्य से स्पष्ट था कि उत्तरदाताओं के एक बड़े अनुपात का मतलब था कि पंचायत स्तर पर प्रभावी भागीदारी से निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों के आत्मसम्मान और विश्वास में वृद्धि हुई। ग्राम पंचायत बैठकों में जनजाति प्रतिनिधियों की स्वीकार्यता थी। इसका मतलब यह था कि जनजाति प्रतिनिधि ग्राम पंचायत बैठकों के दौरान स्वतंत्र रूप से मुद्दों को

उठाने में सक्षम थे और खुले तौर पर और खुलकर अपने विचार भी रखते थे। यहां अधिकांश पुरुष प्रतिनिधि (92.67%) 53.85 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों के खिलाफ दावे पर सकारात्मक थे। यह दर्शाता है कि महिला प्रतिनिधियों को अभी भी पंचायत स्तर पर भेदभाव का सामना करना पड़ रहा था, खासकर जनजाति महिला प्रतिनिधियों को। यह दर्शाता है कि जनजाति महिलाओं को जाति और पितृसत्ता के दोहरे भेदभाव का सामना करना पड़ रहा है। ग्राम पंचायत सदस्य के रूप में निर्वाचित होने के साथ-साथ ग्राम समुदाय के विकास को सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण पहल करने की ज़िम्मेदारी उनके साथ आई। यह प्रक्रिया आसान हो गई अगर चुने गए जनजाति प्रतिनिधि पूरे गाँव समुदाय से समर्थन पाने में सफल रहे। काफी अधिक प्रतिशत (74.12%) ने दावा किया कि चुने गए जनजाति प्रतिनिधियों को पूरे गांव समुदाय का समर्थन मिल रहा था। इसके अलावा, उत्तरदाताओं के उच्च अनुपात (85.53%) ने दावा किया कि पंचायत स्तर पर प्रभावी भागीदारी के कारण अपने स्वयं के सामाजिक श्रेणी के भीतर चुने हुए जनजाति प्रतिनिधियों के संबंध में सुधार हुआ है। इसी तरह, अधिकांश उत्तरदाताओं ने दावा किया कि ग्रामीणों के बीच निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों के सम्मान में उल्लेखनीय सुधार हुआ है। लेकिन, जनजाति प्रतिनिधियों के कम अनुपात ने अपने समुदाय के बाहर ग्रामीणों के सम्मान में कोई बदलाव महसूस नहीं किया।

निर्वाचित जनजाति महिला प्रतिनिधियों में से एक के अनुसार, 'कूनो इज्जत-विज्जत नहीं बड़ल बा, बेस इहे बा हमर घर के बहार सखीला' (किसी भी मामले में कोई सुधार नहीं, केवल बदलाव यह है कि हम अपने घरों के बाहर जा सकते हैं)। इसलिए, यह इंगित करता है कि ग्रामीण स्तर पर प्रचलित कुछ रूपों में अभी भी भेदभाव। यह भी देखा गया कि निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधि पंचायती राज संस्थाओं में आरक्षण नीति के कारण सत्ता और प्रभाव का अधिक हिस्सा प्राप्त कर रहे थे। कुल मिलाकर, यह स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि आरक्षण के

उपकरण के माध्यम से, जनजातियो को पहली बार पंचायतों में प्रभावी प्रतिनिधित्व का अवसर प्रदान किया गया है, जिसने पंचायतों की सामाजिक संरचना को बदल दिया है। जो प्रतिनिधि वंचित समूह के हैं वे निर्णय लेने की संस्था में अपनी उपस्थिति और कार्यों के माध्यम से सदस्यता के सामाजिक अर्थ को बदल सकते हैं। अब तक प्रभावी राजनीतिक भागीदारी और बेहतर सामाजिक सहभागिता प्रक्रिया के माध्यम से निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों के सामाजिक समावेश का संबंध रहा है, कुल उत्तरदाताओं में से दो-तिहाई (67.11%) इस राय के थे कि चुने गए जनजाति प्रतिनिधियों को सामाजिक रूप से शामिल किया गया है समाज की मुख्यधारा में काफी हद तक जुड़ रही हैं । हालाँकि, इस मामले में लगभग 73 प्रतिशत जनजाति प्रतिनिधियों की राय थी कि वे सामाजिक रूप से मुख्यधारा के समाज में काफी हद तक (88.73% जनजाति पुरुष प्रतिनिधि और 41.67% महिला प्रतिनिधि) शामिल थे। लेकिन, सामाजिक समावेश जनजाति महिला प्रतिनिधियों का मामला थोड़ा हतोत्साहित करने वाला था, क्योंकि उनमें से लगभग 58 प्रतिशत ने अपने समावेश को कुछ हद तक या बिल्कुल भी नहीं बताया।

इस विशेष संदर्भ में, एक महिला ग्राम प्रधान द्वारा दिया गया एक बयान काफी दिलचस्प लग रहा है। यह निम्नानुसार था, "जनजाति महिला प्रतिनिधियों को अपने कार्यों को करने में विभिन्न बाधाओं का सामना करना पड़ता है। एक आम धारणा है कि जनजाति महिलाओं को प्रमुख जातियों के सामने नहीं बोलना चाहिए और उन्हें अपने घर से बाहर नहीं जाना चाहिए। वे भी मजबूर हैं। घूँघट में हो, जो उनके काम के लिए एक बाधा है। इसके अलावा, उनके अधिकांश कार्य उनके पति द्वारा संभाल रहे हैं, इसलिए उनके पास गाँव की गतिविधियों में बहुत कुछ नहीं है" जनजाति प्रतिनिधियों के दो-पांचवें (43.93%) से अधिक लोगों ने दावा किया कि उन्होंने कभी भी ग्राम पंचायत स्तर पर किसी भी जाति-आधारित भेदभाव का

सामना नहीं किया और उन्हें अनदेखा महसूस नहीं किया क्योंकि वे जनजाति थे, लेकिन फिर भी उनमें से 56 प्रतिशत ने बताया कि कभी-कभी या अक्सर जनजाति होने के कारण उन्होंने उपेक्षा महसूस की। इस प्रकार, यह एक स्पष्ट संकेत था कि अभी भी ग्राम पंचायत स्तर पर जाति आधारित भेदभाव मौजूद है और जनजाति महिला प्रतिनिधियों को अपने पुरुष समकक्षों की तुलना में अधिक जातिगत भेदभाव का सामना करना पड़ता है। भारतीय संविधान प्रत्येक नागरिक के लिए समानता का आश्वासन देता है। किसी भी मापदंड के आधार पर भेदभाव नहीं होना चाहिए। इसलिए, जब गैर-जनजाति प्रतिनिधियों द्वारा ग्राम पंचायत बैठकों के दौरान समान विमान में बैठने की अनुमति देने पर जनजाति प्रतिनिधियों की राय ली गई थी, तो यह पाया गया कि कोई भी सक्रिय भेदभाव का व्यवहार नहीं किया गया है। जनजाति उत्तरदाताओं (84.11%) के एक उच्चतर अनुपात ने दावा किया कि वे गैर-जनजातियो के बराबर पंचायतों में बैठने की जगह हैं।

भारतीय संविधान द्वारा अस्पृश्यता को कानून द्वारा समाप्त कर दिया गया है। यह ध्यान दिया गया है कि अभी भी गांवों में अस्पृश्यता की प्रथा का अस्तित्व था। लेकिन दिलचस्प बात यह है कि ग्राम पंचायतों के लिए चुने गए अधिकांश प्रतिनिधियों ने दावा किया कि उनके खिलाफ छुआछूत की प्रथा में कमी आई है। इस प्रकार, यह जमीनी स्तर पर जनजातियो द्वारा सत्ता हासिल करने के महत्व का स्पष्ट प्रकटीकरण था, जिसने जमीनी स्तर पर अन्य जाति समूहों के माध्यम से अपने सामाजिक संपर्क को महत्वपूर्ण रूप से बदल दिया। एक जनजाति वार्ड सदस्य और दूसरा जनजाति वार्ड सदस्य। पंचायत कार्यालय में जनजाति और गैर-जनजाति प्रतिनिधियों के लिए पीने के पानी के अलग-अलग कंटेनर हैं और हम पंचायत कार्यालय में चाय या पानी पीने के लिए अलग-अलग कप का उपयोग कर रहे हैं। ”लेकिन, कुल मिलाकर यह प्रतीत हुआ कि पंचायत स्तर पर अस्पृश्यता कम हो रही है।

कार्य के किसी भी क्षेत्र में समस्याओं और चुनौतियों का सामना करना पड़ेगा। किसी व्यक्ति की क्षमता किसी भी बाधा को दूर करने की क्षमता पर निर्भर करती है जो उसके रास्ते में बाधा बनती है। अड़चनों को दूर करने के उपाय करने के लिए, सबसे पहले यह पता लगाना चाहिए कि वे कौन सी अड़चनें हैं जिन्हें वह दूर करना चाहता है। एक निर्वाचित जमीनी स्तर के प्रतिनिधि के रूप में, स्थानीय समुदाय के सामने आने वाली चुनौतियाँ उनके लिए अधिक होंगी। निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधियों ने अपने प्रमुख कर्तव्यों का पालन करते हुए विभिन्न प्रमुख बाधाओं का सामना किया। बड़ी बाधा जाति आधारित भेदभाव नहीं था, जितनी कि शिक्षा की कमी रही ; गुणवत्ता प्रशिक्षण की कमी, कमजोर आर्थिक स्थिति और सरकारी अधिकारियों द्वारा लापरवाही भी देखी गयी।

हालांकि पंचायती राज संस्थाओं में जनजातियो की भागीदारी और भूमिका में कई संरचनात्मक और सांस्कृतिक बाधाएं हैं, लेकिन यह पाया गया है कि इन सभी बाधाओं के बावजूद निर्वाचित जनजाति प्रतिनिधि पंचायती राज निकायों के माध्यम से महत्वपूर्ण और सकारात्मक भूमिका निभाते हैं। जनजातियो का सामाजिक समावेश मुख्य रूप से इन पंचायती राज संस्थाओं में जनजाति स्वयं की भूमिका पर निर्भर करेगा। तेजी से यह पाया गया है कि जनजाति सिर्फ सत्ता में आने से संतुष्ट नहीं हैं। वे प्रभावी रूप से पंचायतों में भाग ले रहे हैं और अपने स्वयं के समुदाय के उत्थान के लिए और साथ ही अपने गांवों के विकास के लिए काम कर रहे हैं। उनकी भागीदारी को अधिक प्रभावी, कुशल और सफल बनाने के लिए और इसलिए गांव और समाज स्तर पर उनकी सामाजिक सहभागिता को बेहतर बनाने के लिए, समाज के पारंपरिक दृष्टिकोण और पितृसत्तात्मक मूल्यों में महत्वपूर्ण बदलाव की आवश्यकता है। जमीनी स्तर पर राजनीति में जनजातियो की भागीदारी के पक्ष में गैर-जनजातियो के सकारात्मक नजरिए और मानसिक बदलाव की भी जरूरत है। उनकी ओर से

जनजाति प्रतिनिधियों को अधिक शिक्षित होने की आवश्यकता है; स्व-प्रेरित, अपने अधिकारों के लिए अधिक मुखर बनें, और पंचायत निकायों के कामकाज में उनके अधिकारों, जिम्मेदारियों और कर्तव्यों से संबंधित उनकी क्षमता ज्ञान आधार और आवश्यक कौशल में सुधार करने के लिए उचित प्रशिक्षण दिया गया। हालांकि, इस अध्ययन से जो समग्र तस्वीर सामने आई, वह यह है कि हालांकि जनजाति अभी भी सामाजिक स्तर पर विभिन्न भेदभाव और अपमान से पीड़ित हैं, लेकिन पंचायती राज संस्थानों ने उन्हें राजनीतिक सशक्तीकरण और इसलिए राजनीतिक समावेश के लिए अवसर प्रदान किया है। जनजाति, अछूत, जो वर्ण व्यवस्था का हिस्सा भी नहीं थे, भारतीय समाज की सबसे निचली श्रेणी पीआरआई के माध्यम से एक प्रमुख भूमिका निभाते हैं। इस प्रकार, यह भारतीय लोकतंत्र की एक बड़ी उपलब्धि है और वास्तव में ग्राम स्तर पर पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से मौन क्रांति हो रही है। उत्तर प्रदेश में राजनीतिक गोलबंदी और राजनीतिक मुखरता की मौजूदा स्थिति ने जनजातियो को ग्राम पंचायत स्तर पर उच्च प्रभावी भागीदारी के लिए सुविधा प्रदान की है और इसलिए, इससे व्यक्तिगत और सामाजिक-सांस्कृतिक अंतरिक्ष स्तर पर जनजातियो की सामाजिक सहभागिता में सुधार होता है। प्रभावी राजनीतिक भागीदारी और इसलिए बेहतर सामाजिक सहभागिता निश्चित रूप से मुख्य धारा के समाज में जनजातियो के समग्र सामाजिक समावेश को जन्म देगी।

जनजातीय विकास को एक ऐसे दृष्टिकोण के रूप में माना गया है जो जनजातीय लोगों को केंद्र स्तर पर रखता है। आदिवासी लोग पूरे भारत में फैले हुए हैं। उनकी अपनी संस्कृति और परंपराएं हैं। हालाँकि, वे अभी भी कई समस्याओं का सामना कर रहे हैं जो उनकी प्रगति और विकास में बाधा डालती हैं जैसे, गरीबी, शैक्षिक समस्याएं, भूमि समस्याएं, स्वास्थ्य समस्याएं, नक्सलवाद, बच्चों का शोषण, अक्षम प्रशासन और शासन जिनका विश्लेषण इस

पेपर के माध्यम से किया गया है। यह पत्र सरकार द्वारा सुझाए और कार्यान्वित किए गए कई उपायों का विश्लेषण करता है, जैसे, संवैधानिक प्रावधान और सुरक्षा, शैक्षिक सुविधाएं, जनजाति सलाहकार परिषद, विधानमंडलों और पंचायतों में प्रतिनिधित्व, अनुसूचित जनजातियों के लिए आयोग, नौकरियों में आरक्षण, आर्थिक अवसर अनुसूचित और जनजातीय क्षेत्रों का प्रशासन, राज्यों में कल्याण विभाग की स्थापना और जनजातीय अनुसंधान संस्थान। यह लेख चर्चा करता है कि भारतीय समाज और राष्ट्र के सकारात्मक परिवर्तन लाने के लिए भारत के आदिवासियों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में काफी सुधार कैसे होना चाहिए।

भारत में जनजातीय लोगों को आदिवासी या जनजाति के रूप में जाना जाता है। वे 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की आबादी का 8.6% शामिल हैं। आंध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़, गुजरात, झारखंड, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, ओडिशा, पश्चिम बंगाल, उत्तर-पूर्वी राज्यों और भारत के अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में इनकी बड़ी आबादी है। वे भारत के मूल निवासी होने के कारण आदिवासी के रूप में जाने जाते हैं। उन्हें भारतीय संविधान द्वारा अनुसूचित जनजाति के रूप में वर्गीकृत किया गया है। उत्तर में जम्मू और कश्मीर से लेकर उत्तराखंड और उत्तराखंड में हिमालय के साथ एक बड़ा आदिवासी बेल्ट है, पश्चिम और असम, मेघालय, मणिपुर और उत्तर-पूर्वी भारत में नागालैंड। मध्य भारत हमारे देश की लगभग 75% आदिवासी आबादी का घर है। वास्तव में आदिवासियों की उपस्थिति देश के लगभग सभी राज्यों में अधिक या कम हद तक है। आदिवासी या आदिवासी आमतौर पर पहाड़ियों और जंगलों जैसे सुदूर और अलग-थलग क्षेत्रों में एक अलग और एकांत जीवन जीते हैं। प्रत्येक आदिवासी समुदाय की आम तौर पर अपनी अनूठी संस्कृति, भाषा और धर्म होता है। जनजातीय समाज आम तौर पर समतावादी होते हैं और वे भूमि के सामुदायिक

स्वामित्व में विश्वास करते हैं और उसका अभ्यास करते हैं। हालाँकि, 10 वीं शताब्दी की शुरुआत में भारत के मुगल आक्रमण का आदिवासियों पर गंभीर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। इससे भूमि के सामूहिक स्वामित्व की अवधारणा में गंभीर व्यवधान उत्पन्न हुआ। ब्रिटिश शासन के दौरान, आदिवासी समुदायों ने अपने वन क्षेत्र पर अपना अधिकार खो दिया। अंग्रेजों द्वारा पारित नए कानून के अनुसार, आदिवासियों के वन क्षेत्र उन जमींदारों की कानूनी संपत्ति बन गए जिन्हें उनके द्वारा नियुक्त किया गया था। इसके बाद, आदिवासी क्षेत्रों में गैर-आदिवासियों के आगमन ने उन्हें जंगल और पैतृक भूमि संसाधनों से बाहर कर दिया, जिस पर वे अपनी आजीविका के लिए निर्भर थे। जमींदारों द्वारा उनका बेरहमी से शोषण किया गया जिसका एकमात्र उद्देश्य वन संसाधनों से अधिकतम आर्थिक लाभ प्राप्त करना था। परिणामस्वरूप, आदिवासियों ने दुख, पीड़ा, अभाव और कठिनाई का जीवन व्यतीत किया। नतीजतन, क्रूर उत्पीड़न और अधीनता की प्रतिक्रिया के रूप में, उन्होंने अक्सर 18 वीं और 19 वीं शताब्दी की शुरुआत में अंग्रेजों और जमींदारों के खिलाफ विद्रोह किया। हालाँकि, उनकी स्थिति में शायद ही कोई सुधार हुआ हो क्योंकि औपनिवेशिक शासकों ने उनकी समस्याओं और जरूरतों से आंखें मूंद ली थीं।

भारत में जनजातीय आबादी के संबंध में वर्तमान परिदृश्य पर एक नज़र डालना सार्थक होगा। यद्यपि देश ने स्वतंत्रता के बाद विभिन्न क्षेत्रों में छलांग और सीमा से प्रगति की है, फिर भी आदिवासियों की स्थिति में अनुपातिक रूप से कोई बदलाव नहीं आया है। उन्हें अभी भी कई मुद्दों का सामना करना पड़ रहा है जो उनकी प्रगति और विकास में बाधा डालते हैं।

जनजातीय विकास के उपाय एवं सुझाव

यह अनिवार्य है कि भारत में आदिवासियों को राष्ट्रीय मुख्यधारा में एकीकृत करने के लिए उनकी स्थिति में काफी सुधार होना चाहिए। आजादी के बाद से सरकार द्वारा कई उपाय सुझाए और लागू किए गए हैं। आदिवासी विकास के संबंध में मुख्य उपाय निम्नलिखित हैं।

संवैधानिक प्रावधान

भारत के संविधान में अनुसूचित जनजातियों के लिए विशेष प्रावधान किए गए हैं।

संविधान के अनुच्छेद 342 ने भारत में अनुसूचित जनजाति समुदायों को निर्दिष्ट किया है।

अनुच्छेद 164 में आदिवासी बहुल राज्यों जैसे बिहार, मध्य प्रदेश और ओडिशा में आदिवासी कल्याण मंत्रालय का प्रावधान है। ये मंत्रालय अपने-अपने राज्यों में अनुसूचित जनजातियों के कल्याण की देखभाल करते हैं।

अनुच्छेद 244 उन राज्यों के प्रशासन के लिए संविधान में पांचवीं अनुसूची को शामिल करने का प्रावधान करता है जहां बड़ी जनजातीय आबादी है। इसके अलावा, अनुच्छेद 275 अनुसूचित जनजातियों के कल्याण के लिए केंद्र सरकार द्वारा राज्य सरकारों को विशेष निधि प्रदान करने का प्रावधान करता है।

शिक्षण सुविधाएं

यह एक निर्विवाद तथ्य है कि शिक्षा सामाजिक-आर्थिक प्रगति और समृद्धि की कुंजी है। इसलिए, आदिवासी लोगों के शैक्षिक स्तर में सुधार पर विशेष जोर दिया गया है। तदनुसार, उन्हें प्राथमिकता के आधार पर व्यावसायिक और तकनीकी प्रशिक्षण दिया जा रहा है। इसके अलावा, बेहतर सीखने के परिणाम के लिए उन्हें वजीफा, छात्रवृत्ति, किताबें, स्टेशनरी और

अन्य आवश्यक उपकरण प्रदान किए जाते हैं। भारत के विभिन्न हिस्सों में उनके लिए आवासीय विद्यालय भी स्थापित किए गए हैं।

जनजाति की सलाहकार परिषद

संविधान की पांचवीं अनुसूची में आंध्र प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, ओडिशा, पंजाब, राजस्थान और पश्चिम बंगाल जैसे अनुसूचित क्षेत्रों वाले राज्यों में एक जनजाति सलाहकार परिषद की स्थापना का प्रावधान है। ये परिषदें अनुसूचित जनजातियों के कल्याण और अनुसूचित क्षेत्रों के विकास से संबंधित मामलों पर सरकार को सलाह देती हैं।

विधानमंडलों और पंचायतों में प्रतिनिधित्व

भारतीय संविधान ने अनुसूचित जनजातियों की सुरक्षा और उनके शैक्षिक और आर्थिक हितों को बढ़ावा देने के लिए प्रावधान किए हैं। संविधान के अनुच्छेद 330 और 332 के तहत लोकसभा और राज्य विधानसभाओं में अनुसूचित जनजातियों के लिए सीटें आरक्षित की गई हैं। इसी प्रकार पंचायती राज व्यवस्था के अंतर्गत ग्राम पंचायतों, प्रखंड पंचायतों, जिला पंचायतों आदि में अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थान आरक्षित हैं।

अनुसूचित जनजातियों के लिए आयोग

भारत का संविधान अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए सुरक्षा उपायों से संबंधित सभी मामलों की जांच के लिए अनुच्छेद 338 के तहत एक आयुक्त की नियुक्ति का प्रावधान करता है। यह इन सुरक्षा उपायों के समुचित कार्य के बारे में राष्ट्रपति को रिपोर्ट भी करता है।

आर्थिक अवसर

भारत में जनजातीय आबादी का एक बड़ा बहुमत अपनी आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर है। हालांकि, उनके पास आम तौर पर आधुनिक और वैज्ञानिक खेती के तरीकों तक पहुंच नहीं है। बड़ी संख्या में आदिवासी लोग झूम खेती को अपनाते हैं जिसका लंबे समय में मिट्टी की उत्पादकता और फसल की उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। यह भारत के कई आदिवासी बहुल राज्यों में एक बड़ी समस्या है। इसलिए, सरकार ने इन राज्यों में स्थानांतरित खेती को नियंत्रित करने और हतोत्साहित करने के लिए एक योजना शुरू की है। इसके अलावा, बंजर भूमि को पुनः प्राप्त करने और अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लोगों के बीच वितरित करने के लिए सिंचाई सुविधाओं में सुधार के लिए कई उपाय किए गए हैं। इसके अलावा, उर्वरक, बेहतर बीज, पशुधन और कृषि उपकरण आदि की खरीद के लिए सुविधाएं प्रदान की गई हैं। पशु प्रजनन और मुर्गी पालन जो अत्यधिक लाभदायक हो सकता है, को भी इन लोगों के बीच बढ़ावा दिया जाता है। सरकार ने कुटीर उद्योगों के विकास पर विशेष बल दिया है। इस प्रकार ऋण और सब्सिडी प्रदान करने के लिए विभिन्न योजनाएं शुरू की गई हैं। बैंकों के अलावा, सहकारी समितियां भी भारत के विभिन्न राज्यों में आदिवासी लोगों को ऋण प्रदान करती हैं।

अनुसूचित और जनजातीय क्षेत्रों का प्रशासन

भारत सरकार ने "अनुसूचित क्षेत्रों" के प्रशासन के संबंध में कुछ दिशानिर्देश तैयार किए हैं। यह आदिवासी समुदायों के लिए प्रशासनिक दक्षता में सुधार और जीवन की बेहतर गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक धन प्रदान करता है।

राज्यों में कल्याण विभाग की स्थापना

भारत के संविधान के अनुच्छेद 164 (1) के प्रावधान के तहत, कई राज्यों में कल्याण विभाग की स्थापना की गई है, जहां बड़ी जनजातीय आबादी है। इन विभागों को हर राज्य में एक मंत्री के अधीन रखा गया है।

जनजातीय अनुसंधान संस्थान भारत की स्वतंत्रता के बाद, केंद्र सरकार और राज्य सरकारों ने जनजातीय लोगों के कल्याण और उत्थान के लिए जोरदार प्रयास किए हैं। उत्तरोत्तर योजनाओं में उनके विकास के लिए विशेष कार्यक्रम चलाए गए हैं। इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए, बिहार, मध्य प्रदेश, ओडिशा, राजस्थान और पश्चिम बंगाल जैसे राज्यों में जनजातीय और हरिजन अनुसंधान संस्थान स्थापित किए गए हैं। ये संस्थान आदिवासी कला, संस्कृति, रीति-रिवाजों और परंपराओं का गहन अध्ययन करते हैं।

इन सभी उपायों का उद्देश्य भारत की विशाल जनजातीय आबादी के जीवन स्तर और गुणवत्ता को ऊपर उठाना है। जिन्होंने गरीबी, पिछड़ेपन, दुख, उत्पीड़न और सामाजिक भेदभाव का जीवन व्यतीत किया है। परिणामस्वरूप, अभी भी पंचायती राज ने अपनी पूरी क्षमता से नहीं कार्य कर पायी हैं। जिस कारण आज भी आदिवासी समुदाय कई सुविधाओ से वंचित रह गयी है। यह आशा की जाती है कि पंचायती राज संस्था के प्रयासों और पहलों से इन लोगों और कल्याण में आने वाले समय में उल्लेखनीय वृद्धि होगी। हमारा राष्ट्र तब तक समृद्ध नहीं हो सकता जब तक कि जनसंख्या का एक बड़ा वर्ग और हाशिए पर रह कर जीवन व्यतीत करे। इसलिए, यह सभी के हित में है कि भारत के आदिवासियों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में पर्याप्त सुधार होना चाहिए ताकि पूरे भारतीय समाज और राष्ट्र में सकारात्मक परिवर्तन लाया जा सके। लोकतान्त्रिक विकेंद्रीकरण की नीति को सही मानते हुए अब तक जितने भी पंचायती राज व्यवस्था में संशोधन और नियम बने है। उन सभी में

सबसे निचले तबके जिनमे आदिवासी समुदाय प्रमुख रूप से आतें हैं के लिये ये संस्थाए उनके स्वाबलंबन और उनके समावेशी विकास के लिये सबसे प्रभावशाली संस्था साबित हुई है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

अवस्थी एवं अवस्थीः भारतीय प्रशासन, आगराः लक्ष्मीनारायण अग्रवाल प्रकाशन, 2019

अल्तेकर, डा. सदाशिवः प्राचीन भारतीय शासन पद्धति, वाराणसी: विश्वविद्यालय प्रकाशन, 2010

सिंह, ओम प्रकाश: प्राचीन भारतीय राज्य एवं समाज, आगरा: राम प्रसाद एण्ड सन्स, 2001

वर्मा, हरिश्चन्द्रः मध्ययुगीन भारत (भाग-एक), दिल्ली: विश्वविद्यालय, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, 2011

दत्त, डा. महेश्वर: गाँधी का पंचायती राज, दिल्ली: हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निर्देशालय, प्रथम संस्करण-2015

गाँधी, मोहनदास करमचन्दः पंचायत राज, (अहमदाबाद: नव जीवन प्रकाशन मन्दिर), 1961

सिंह, अयोध्या:भारत का मुक्ति संग्राम, दि मैकमिलन कम्पनी आफ यह इण्डिया 1977.

गाँधी, मोहनदास करमचन्दः मेरे सपनों का भारत, नई दिल्ली: डायमण्ड पाकेट बुक्स (प्रा.) लिमिटेड, 2010

प्रसाद, विरकेश्वर: भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन एवं संवैधानिक विकास, नई दिल्ली: ज्ञानदा प्रकाशन, 2013

नारंग, ए.एस: भारतीय शासन एवं राजनीति, (नई दिल्ली: गीतांजलि पब्लिशिंग हाऊस), 2015.

गाँधी, मोहन दास करमचन्द: हमारे गाँवों का पुर्ननिर्माण, (अहमदाबाद नव जीवन प्रकाशन मन्दिर), 1957.

राय, ओ.पी.: उत्तर प्रदेश ग्रामसभा, ग्राम पंचायत एवं भूमिप्रबन्ध समिति मैनुअल (नयी पंचायती राज व्यवस्था पर आधारित), इलाहाबाद ला काटेज, 2011.

मैथ्यू, जार्ज: ''पंचायत राज इन इण्डिया: नई दिल्ली, फ्राम लेजिसलेशन द मुवमेन्ट'' 1994 इन्स्टीट्यूट आफ सोशल साइंसेज, बी-7/18 सफदरगंज इक्लेव

दूबे, एस.सी., एक भारतीय ग्राम, (नई दिल्ली: नेशनल पब्लिशिंग हाऊस), 1975.

डा. अम्बेडकर: जाति भेद का उच्छेद, (दिल्ली: गौतम बुक सेन्टर), 2010.

सिंह, रामगोपाल: डा अम्बेडकर-सामाजिक न्याय एवं परिवर्तन, (जयपुर: नेशनल पब्लिशिंग हाउस), 2006.

शुक्ल, परशुराम: भारत में सामाजिक स्तरीकरण, (जयपुर: पोइन्टर, पब्लिशर्स), 2015.

दत्त, महेश्वर: गाँधी अम्बेडकर एवं दलित, (नई दिल्ली: राधा पब्लिकेशन), 2005.

पाण्डेय, ब्रज कुमार: दलित समस्या की राजनीति, (नई दिल्ली: अभिधा प्रकाशन, भारतीय सामाजिक संस्थान), 2013.

मैथ्यू, जार्ज: भारत में पंचायती राज परिपे्रक्ष्य संस्थाएँ, अतीत वर्तमान और भविष्य, (जयपुर: नेशनल पब्लिशिंग हाऊस), 2007.

मिश्र, डा. सचिदानन्द: प्राचीन भारत में ग्राम एवं ग्राम्य जीवन, (गोरखपुर: पूर्वा संस्थान), 1994.

महिपाल: पंचायती राज चुनौतियाँ एवं सम्भावनाएँ, (नयी दिल्ली नेशनल: बुक ट्रस्ट), चतुर्थ संस्करण, 2007.

राम जगजीवन: भारत में जातिवाद और हरिजन समस्या, (दिल्ली: राजपाल एण्ड सन्स), 2011.

सिंह, बच्चन: भारत में जाति प्रथा और दलित ब्राह्मणवाद, (वाराणसी: विश्वविद्यालय प्रकाशन), प्रथम संस्करण, 2006.

प्रकाश, ओम प्राचीन: भारत का सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास, (नई दिल्ली: विश्व प्रकाशन), चतुर्थ संस्करण, 2007

कुरैशी, अयाज अहमद: पंचायत राज व्यवस्था, (नई दिल्ली: अमन प्रकाशन, मेहरौली), प्रथम संस्करण, 2006.

कटारिया, डा. सुरेन्द्र: पंचायतीराज संस्थाएँ, अतीत वर्तमान और भविष्य, (जयपुर: नेशनल पब्लिशिंग हाऊस), 2017.

सिंह, बामेश्वर,: भारत में स्थानीय स्वशासन, (नई दिल्ली: राधा पब्लिकेशन्स), चतुर्थ संस्करण, 2010.

सरकार, एस. व मुनीर, जे.जे: भारत का संविधान, (इलहाबाद: आलिया ला एजेन्सी), 2005.

श्री निवास,एम.एन.: इण्डियन विलिजेज, (नई दिल्ली: एशियन पब्लिशिंग हाउस), 1960.

शर्मा, डा. के.के: भारत में पंचायतीराज, (जयपुर: कालेज बुक डिपो), 2012

बसु, डी.डी. भारतीय संविधान का परिचय, संस्करण, (नागपुर बाधवा एण्ड कम्पनी), 2017.

सिंह, एवं श्रीवास्तव: प्राचीन भारतीय राज्य व समाज, (वाराणसी: विजय प्रकाशन मन्दिर), 2015.

शर्मा, अशोक: भारत में स्थानीय प्रशासन, (जयपुर: आर.बी.एस., पब्लिशर्स), 2016.

शर्मा, ब्रजकिशोर: भारत का संविधान एक परिचय, (नई दिल्ली: पी.एच.आई), लर्निंग प्राइवेट, 2018.

सिहं, निशान्त: पंचायती राज व्यवस्था, (नई दिल्ली: राधा पब्लिकेशन), 2017.

गरोवर, बी.एल: भारतीय स्वतंत्रता संग्राम तथा संवैधानिक विकास, (दिल्ली: यशचन्द एण्ड कम्पनी लिमिटेड), छठां संस्करण, 2011.

मिश्र, जयशंकर: प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, (पटना: बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी), 2012.

बर्थवाल, डा. चन्द्रप्रकाश: स्थानीय स्वशासन, (लखनऊ: सुलभ प्रकाशन), प्रथम संस्करण, 2007.

आहूजा, राम: भारतीय समाज, (जयपुर: रावत पब्लिकेशन), 2016.

अग्रवाल, डा. जी.के., पाण्डेय डा. एस.एस.-ग्रामीण समाजशास्त्र, (आगरा: एस.बी.पी.डी. पब्लिशिंग हाऊस), 2018.

महाजन, डा. धर्मवीर व महाजन डा. कमलेश: जनजातिय समाज का समाज शास्त्र, (दिल्ली: विवेक प्रकाशन), 2016.

कौशिक, सुशीला: भारतीय शासन एवं राजनीति, (दिल्ली: हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय), दिल्ली विश्वविद्यालय, 1995.

शास्त्री, उदयवीर: कौटिल्य अर्थशास्त्र, (दिल्ली: मेहरचंद लक्ष्मणदास), 1996.

कृपलानी, जे.बी, गांधी एक राजनैतिक अध्ययन, वाराणसी: र्सव सेवा संघ प्रकाशन, 1981.

गंगल, एस.सी,: गाँधीयन वे टू वल्र्ड पीस, (मुम्बई: बोरा एंड कम्पनी पब्लिशर)

ग्रेग, रिचर्ड वी, गांधी, व्यक्तित्व विचार और प्रभाव (दिल्ली: नेशनल पब्लिशिंग हाउस), 1966.

चन्द्र, विपिन: स्वतंत्रता संग्राम, (नई दिल्ली: नेशनल बुक ट्रस्ट इण्डिया), 1992.

दीपकर: कौटिल्य कालीन भारत, लखनऊ: हिन्दी समिति सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश, 1968.

धर्माधिकारी दादा: अहिंसक क्रांति की प्रक्रिया, (वाराणसी, सर्व-सेवा संघ प्रकाशन), 1984.

नागर, पुरूषोत्तम: आधुनिक भारतीय सामाजिक राजनीतिक चिंतन राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, 1990.

विनोबा: ग्रामदान, (वाराणसी, सर्व-सेवा संघ प्रकाशन), 1968.

भार्गव, बी.एस: पावर टू दी पीपल्स, पंचायती राज माडल इन कर्नाटका, सेमीनार, रिपोर्ट, विद्यानगर, सरदार पटेल विश्वविद्यालय, 1989.

तुलसीराम (टीकाकार): मनुस्मृति, (मेरठ: स्वामी प्रेस), 1924

मजमूदार धीरेन्द्र: समग्र ग्राम सेवा की ओर काशी, (वाराणसी: सर्व-सेवा संघ प्रकाशन), 1960.

मशरूवाला, किताब घर : भावी भारत की एक तस्वीर, (अहमदाबाद: नवजीवन प्रकाशन मन्दिर), 1959.

सिंह, लक्ष्मण: आधुनिक भारतीय सामाजिक व राजनीतिक विचार, (जयपुर: कालेज बुक डिपो), 1992.

बंग, ठाकुरदास: रचनात्मक कार्यक्रम (वाराणसी: सर्व-सेवा संघ प्रकाशन), 1988.

वर्मा, वी.पी.: आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन, सत्यानारायण दूबे, (आगरा: लक्ष्मीनारायण अग्रवाल प्रकाशन)

सरकारिया, आर.एस.: केंद्र राज्य संबंध आयोग, खण्ड 1-2, नई दिल्ली, सी.जी.ओ. काम्पलैक्स, 1988, सम्पूर्ण गांधी वांडमय, खण्ड 63.

शर्मा, प्रभुदत्त: आधुनिक राजनीतिक विचारों का इतिहास, (जयपुर: कालेज बुक डिपो)

सिंह, आर.जी, भारतीय समाज, (भोपाल: मध्यप्रदेश, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी), 1997.

बैसंत्री, डी.के.: भारत के क्रान्तिकारी, (नई दिल्ली: दलित साहित्य प्रकाशन), 2011.

मिश्रा, एस.सी: नेशनल मूवमेंट इन प्रिंसली स्टेट्स, (जयपुर: पोंइटर पब्लिशर्स), 1993.

अम्बेडकर, एस. नगेन्द्रा, शैलजा, नगेन्द्रा, वीमन एण्ड पंचायती राज, एवीडी पब्लिकेशन , जोधुपर, 2008

अम्बेडकर, एस.एन. नगेन्द्रा, शैलजा, वीमन एम्पावरमेन्ट एण्ड पंचायती राज, एवीडी पब्लिकेशन , जयपुर, 2011

असलम, एम., पंचायती राज इन इण्डिया, नेशनल बुक ट्रस्ट, इण्डिया, दिल्ली, 2017

अनिता,‘‘पंचायती राज एवं महिला सशक्तीकरण’’ ,महिला सशक्तीकरण विशेषांक, मार्च,2001

आप्टे,प्रभा,भारतीय समाज में नारी,जयपुर,क्लासिक पब्लिकेशन हाऊस,1996

अनिरमन,कष्यप,गवर्नर्स रोल इन इण्डियन कन्स्टीटयूशन, न्यू दिल्ली ,लान्सर्स बुक,1999

भट्टाचार्य,मोइत्री, पंचायती राज इन बेस्ट बंगालः डेमोक्रेटिक डिसेन्ट्रलाइजेशन और डेमोक्रेटिक सेन्ट्रलिज्म न्यू दिल्ली, मयंक पब्लिकेशन, 2012

बीजू,एम.आर., डायनामिक्स आफ न्यू पंचायत राज सिस्टम, नई दिल्ली, कनिष्क पब्लिकेशन, 2010

बेलूचामी,एस., पंचायती राज इन्स्टीट्यूशस, न्यू दिल्ली , मित्तल पब्लिकेशस, 2014

बनर्जी,सोनाली,सोशियल बैक ग्राउण्ड आफ पंचायत लीडर्स इन वेस्ट बंगाल, कोलकाता, दास गुप्ता एण्ड कंपनी , 2012

बाबेल, डा. बंसतीलाल, पंचायती राज एव ग्रामीण विकास योजनाऐ, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2014

बीजू, एम.आर., दि सेन्ट्रलाइजेशनः एन इण्डियन एक्सपिरियन्स जयपुर,नेशनल पब्लिकेशस, 2017

उमेश, सी. साहू, डवलपमेन्ट,न्यू दिल्ली , रावत पब्लिकेशस, 2018

चैधरी,डी.एस.,इमिर्जिग रूरल लीडरशिप इन इण्डियन स्टेट्स, नई दिल्ली, मंथन पब्लिकेशस, 1991

चन्देल, चतुर्वेदी, डा. धर्मवीर, नत्थीलाल, भारत में पंचायती राज सिद्धान्त एवं व्यवहार, आविष्कार पब्लिकेशन डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयुपर, 2015

चैधरी,विमलेश , महिलाओ को अधिकार सम्पन्न बना नही हैः पचंयती राज व्यवस्था, राजस्थान विकास,अप्रेल-जुलाई, 2011

चक्रवर्ती के., भट्टाचार्य, लीडरशिप फंकसंन एण्ड पंचायत राज, जयपुर रावत पब्लिकेशस,1999

चतुर्वेदी, टी.एन. पंचायती राज, न्यू देहली,इण्डियन इन्स्टीटयूट आफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, 2010

चाहर,एस.एस.गवर्नेन्स एट ग्रास रूट लेवल इन इण्डिया न्यू दिल्ली, कनिष्का पब्लिकेशन , 2015

दास,प्रभाकर,इमर्जिंग पैटर्न आफ लीडरशिप इन ट्रायबल इण्डिया,नई दिल्ली, मानव पब्लिकेशस,1999

दुबे,एम.पी.और मुन्नी डेमोक्रेटिक डिसेन्ट्रलाइजेशन और पंचायती राज इन इण्डिया, न्यू दिल्ली,अनामिका पब्लिकेशन ,2012

देवपुरा, प्रतापमल, हमारा पंचायती राज, अंकुर प्रकाशन, दिल्ली, 2015

डी.,सुन्दर राम,पंचायती राज एण्ड एम पावरिंग पीपलः न्यू एजेन्डा फोर रूरल इण्डियाः एसेज इन ओनर आफ मणी शंकर अयर, न्यू दिल्ली, कनिष्का, 2010

डी, सुन्दर राम, रोल आफ पंचायती राज इन्स्टीटयूशस इन 60 ईयर्स आफ इन्डीपेन्डेन्ट इण्डियाः विजन आफ दी फ्यूचर,न्यू दिल्ली ,कनिष्का पब्लिकेशन ,2018

गौड़, के.के., भारत मे ग्रामीण नेतृत्व का उदयीमान स्वरूप, नई दिल्ली, मानव पब्लिकेशन्स, 1997

गौर, रिंकी, पोलिटिकल मोवीलाइजेशन एण्ड पंचायती राज इन्स्टीट्यूशस, सनराईज पब्लिकेशस, नई दिल्ली, 2018

गौर, मराठा, पी.पी., आर.के., लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण और ग्रामीण विकास, अर्जुन पब्लिकेशन हाऊस, नई दिल्ली, 2012

गुप्ता, भावना, पंचायती राज और कानून, इशिका पब्लिकेशन हाऊस, जयपुर, 2015

गुहा,सम्पा, पोलिटिकल पार्टीसिपेशन आफ विमैन इन ए चेंजिंग सोसायटी, नई दिल्ली, इन्टर-इण्डिया पब्लिकेशन, 1996

जोशी , आर.पी., कांस्टीट्यूनलाइजेशन आफ पंचायती राज जयपुर, रावत पब्लिकेशन, 1999

जोशी, आर.पी., नरवानी, जी.एस., पंचायती राज इन इण्डिया, रावत पब्लिकेशस, जयपुर, 2017

पलेनी थुराई, डायनामिक्स आफ न्यू पंचायती राज सिस्टम इन इण्डिया,न्यू देहलीः कन्सेप्ट पब्लिकेशन, 2018

कटारिया, डा. सुरेन्द्र, ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज, आर.वी.एम. पब्लिकेशन , जयपुर, 2018

कर्णावत, शशि , पंचायती राज व्यवस्थामें रोजगार, अर्जुन पब्लिकेशन हाऊस, नई दिल्ली, 2019

कटारिया, डा. सुरेन्द्रा, पंचायती राज संस्थाऐं, अतीत, वर्तमान और भविष्य, नेशनल पब्लिकेशन हाऊस, जयपुर, 2017

कलकल, स्नेहलता, ग्रामीण नेतृत्व की उभरती प्रवृत्तियां, क्लासिक पब्लिकेशस, जयपुर, 2016

कौषिक,आशा , ग्लोबलाइजेषन,डेमोक्रेसी एण्ड कल्चर, जयपुर,पाइन्टर पब्लिकेशन 2012

कौषिक,आशा, डेमोक्रेटिक कन्सन्सः द इण्डियन एक्सपीरिएन्स, जयपुर,आलेख 1999

कुलश्रेष्ठ, नीतिश , पंचायती राज एवं ग्रामीण विकास, योजनाऐं, रितु पब्लिकेशस, जयपुर, 2014

कुकरेजा , सुन्दर लाल, पंचायती राज व्यवस्था को मजबूत बनाने की आवष्यकता, कुरूक्षेत्र,अंक अप्रेल, 2001

खन्ना,बी.एस., पंचायती राज इन इण्डियाःरूरल लोकल सेल्फ गवर्नमेन्ट,नई दिल्ली, दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन,2004

कृष्णन,एम.जी., पंचायती राज इन इण्डिया, नई दिल्ली,मित्तल पब्लिकेशस, 2005

मोदी, अनिता, महिला सशक्तीकरण विविध आयाम, वाईकिंग बुक्स, जयपुर, 2015

मीना, लक्ष्मीनारायण, पंचायती राज तथा जन प्रतिनिधित्व दशा एवं दिशा, लिट्रेरी सर्किल, जयपुर, 2016

मकवाना, डा. रमेश एच., पोलिटिकल पार्टिसिपेशन आफ सिड्यूल कास्ट, वीमन इन पंचायत, एबीडी पब्लिकेशन , जयपुर, 2011

महिपाल, पचंयती राज चुनौतियां एव समस्याऐ, नेशनल बुक ट्रस्ट, इण्डिया, नई दिल्ली, 2014

मुलानी, डा. महमद रफीक उमराव, सेल्फ हेल्प ग्रुप्स एवं एम्पावरमेन्ट आफ वीमन, मानस पब्लिकेशन एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयपुर, 2012

मण्डल, अमल, वीमन इन पंचायती राज इन्स्टीट्यूस कनिष्का पब्लिकेशन , डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2013

मिश्रा, डा. महेन्द्र कुमार, पंचायती राज संस्थाऐं, अतीत वर्तमान और भविष्य, कल्पना प्रकाशन, दिल्ली, 2015

मोहन्ती,विजयनी फाइर्नेन्सिंग दी ग्रासरूट गवर्नमेन्ट,न्यू दिल्ली, ए.पी.एचपब्लिकेशन , 2011

मलिक,सुमेर सिंह,दी न्यू पंचायती राज,जयपुर,आलेख पब्लिकेशन ,2012

मेथियास,एडवर्ड, पंचायती राज इन्स्टीटयूशस एण्ड रोल आफ एन.जी.ओ., न्यू देहली इण्डियन सोशियल इन्स्टीटयूट, 2009

नेहरू जवाहर लाल, सामुदायिक विकास एवं पंचायत राज, नई दिल्ली,सस्ता साहित्य मण्डल,1965

पाणीग्रही, राजीव लोचन, पंचायती राज इन्स्टीट्यूशस इम्यूल्ड चैलेन्जेज, डिसकवरी पब्लिसिंग हाऊस, नई दिल्ली, 2017

प्यार, राम,हरिजन युवको का राजनीतिक समाजीकरण,नई दिल्ली,मित्तल पब्लिकेशन्स, 2009

पटवर्धन,सुनन्दा,चेंज अमंग इण्डियाज हरिजनःमहाराष्ट्र ए केस स्टडी,नई दिल्ली,ओरिएन्ट लोंगमैन,1999.

पटनायक,राइमन,लोकल गवर्नमेन्ट एडमिनिस्ट्रेशन रिफोर्म,न्यू देहली,अनमोल पब्लिकेशस,2012

पिन्टो,एम्ब्रोस वीमन इन पंचायती राज,न्यू देहली,इण्डियन हेल्मुट रिफिल्ड सोशियल इन्स्टीटयूट 2011

राठौड, कमल सिंह, महिलाओ में राजनीतिक जागरूकता, मिनर्वा पब्लिकेशन जोधपुर, 2011

रानी,नीलम,न्यू पंचायती राज इन्स्टीटयूशपःए सोशियोलोजिकल स्टडी,न्यू देहली, सन राइज पब्लिकेशस,2018

शर्मा, प्रेम नारायण, झा, संजीव कुमार, महिला सशक्तीकरण एवं समग्र विकास, भारत बुक सेन्टर, लखनऊ, 2008

शर्मा, रेखा, ग्रामीण विकास एवं नियोजन, रावत प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015

शर्मा, हरिष्चन्द्र, भारत में स्थानीय प्रशासन, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर 2013

शर्मा, रेखा, ग्रामीण महिलाऐं एवं पंचायती राज, रावत प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016

सान्याल,बी.एस.,इण्डिया दि सेन्ट्रलाइज्ड प्लानिंग,थीम्स एण्ड इशूज न्यू देहली,कन्सेप्ट,पब्लिकेशन 2011

सारस्वत, सिंह, स्वप्निल, डा., निशात, समाज राजनीति और महिलाऐं, दशा और दिशा , राधा पब्लिकेशस, नई दिल्ली, 2017

सिंगला, पामेला, वीमन पार्टिसिपेशन इन पंचायती राज, रावत पब्लिकेशस, जयपुर, 2011

सिंह, त्रिलोक, इन साइट्स इन टू पंचायती राज एण्ड गवर्नेन्स, साइबर टेक पब्लिकेशस, नई दिल्ली 2012

सिंह,जे.एल., वीमन एण्ड पंचायती राज, न्यू देहली,सन राइज पब्लिकेशन,2015

सोनी,जसप्रीतकौर गवर्नेन्स आफ पंचायती राज,न्यू देहली,आथर्स प्रेस पब्लिकेशन आफ स्कोलर्ली बुक्स,2009

सिसोदिया,यतिन्द्र सिंह, फंशनिंग आफ पंचायती राज सिस्टम,न्यू दिल्ली रावत पब्लिकेशस,2015

श्रीवास्तव,शिवानन्द, उत्तर प्रदेश पंचायती राज मेन्यूअल,इलाहाबाद हिन्द पब्लिकेशन हाऊस, 1999

साहू एन.के., इलेक्टोरल पोलिटिक्स इन फेडरल इण्डिया,एम.पी.,लोकल एरिया डबलपमेन्ट स्कीम, न्यू देहली,ज्ञान पब्लिकेशन हाउस, 2016

सिंह,सूरत, दि सेन्ट्रलाइज्ड गवर्नेन्स इन इण्डियाःमिथ एण्ड रियलिटी न्यू दिल्ली , दीप एण्ड दीप, 2014

सिंह,अवतार,लीडरशिप पैटर्न एण्ड विलेज स्ट्रक्चर,नई दिल्ली स्टर्लिंग पब्लिकेशन ,1993

सेठ,प्रवीण,विमैन एम्पावरमेन्ट एण्ड पोलिटिक्स इन इण्डिया,अहमदाबाद, कर्नावती पब्लिकेंशस,1998

सिंह,एस.एस., लेजिस्लेटिव फ्रेमवर्क आफ पंचायत राज इन इण्डिया, नई दिल्ली, इन्टेलेक्चुअल पब्लिकेशन हाउस, 1999

सिवन्ना,एन., पंचायती राज रिफोर्म्स एण्ड रूरल डवलपमेन्ट, इलाहाबाद,चुघ पब्लिकेशस,1999

शर्मा,शकुन्तला, ग्रास रूट पोलिटिक्स एण्ड पंचायती राज, नई दिल्ली, दीप एण्ड दीप पब्लिकेशस, 2004

शिव, रामाकृष्णन्,के.सी. कोट्रस पंचायत्स एण्ड नगर पालिकाज, बैंक ग्राउण्ड एण्ड रिव्यूज आफ दी केस ला, न्यू देहली,अकादमिक फाउण्डेशन,2009

सिंह,राजेन्द्र कुमार, ग्रामीण राजनीतिक अभिजन, नई दिल्ली, क्लासिकल पब्लिकेशन कम्पनी, 2006.

सिंह, यू.वी., दि सेन्ट्रलाइज्ड डेमोक्रेटिक गवर्नेस न्यू मिलेनियमः लोकल गवर्नमेन्ट इन दी यू. एस.ए.,यू. के. फ्रांस जापान रसिया एण्ड इण्डिया,न्यू देहली,कन्सेप्ट पब्लिकेशन कम्पनी 2009

श्री वास्तव,सुधारानी, भारत मे महिलाओ की वैधानिक स्थिति, नई दिल्ली, कोमन वैल्थ पब्लिकेशन ,1997

त्यागी, डा. शालिनी, पंचायती राज व्यवस्था में सत्ता शक्ति का विकेन्द्रीकरण, नवजीवन पब्लिकेशन, निवाई (टौंक) 2016

तओरी, कमल, आई.ए डिसास्टर मेनेजमेन्ट पंचायती राज, न्यू देहली एस., कन्सेप्ट पब्लिकेशन कम्पनी,2005

त्यागी, सुरेन्द्र, पंचायती राज और ग्रामीण विकास, वंदना पब्लिकेशस, नई दिल्ली, 2015

उम्मन,एम.ए.,एवं दत्ता,अभिजित, पंचायत राज एण्ड देअर फाइनेन्स,नई दिल्ली, कन्सेप्ट पब्लिकेशन ,2005

उतरेजा,राकेश ,पंचायतों में महिला आरक्षण बनाम सरपंच पति व्यवस्था,राजस्थान विकास,अगस्त-सितम्बर,2008

वेकंटेशन, वी इन्सटीटयूशनलाइजिंग पचंयती राज इन इण्डिया, न्यू देहली कन्सेप्ट पब्लिकेशन ,2002

वर्मा, वी.एम., इन्स्टीटयूशनलाइजिंग पंचायती राज इन इण्डिया,न्यू देहली कन्सेप्ट पब्लिकेशन ,2002

वर्मा,एस.एल., पंचायती राज ग्राम स्वराज्य एण्ड फेडरल पोलिटी जयपुर,रावत पब्लिककेशस,1990

व्यास, आशा , पंचायती राज में महिलाऐं, पोइन्टर पब्लिकेशन , जयपुर, 2016

व्यासुलु, विनोद, पंचायतस,डेमोकेसी एण्ड डवलपमेन्ट, जयपुर,रावत पब्लिकेशस,2013

वोनसोडे, डा. चन्द्रशेखर, सी, रोल आफ वीमन इन पंचायती राज इन्स्टीट्यूशंस, मानस पब्लिकेशन एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयपुर, 2012

दयाल राजेश्वर, 'पंचायती राज इन इंडिया', मेमो पोलिटिन बुक डिपो, लकी प्रेस, दिल्ली-7, 2010

डॉ.इकबाल नारायण, 'राजनीति शास्त्र के मूल सिद्धांत', भाग 1,नयी दिल्ली, 1989

डॉ.बी.एस.शर्मा, बृजभूषण लाल शर्मा,आशीष भट्ट, जी.एम.सरकार, 'भारतीय शासन एवं राजनीति',रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2019

विन्ता,वी.एल., इमर्जिंग ट्रेण्ड्स इन रूरल पावर स्ट्रक्चरःए स्टडी आफ ग्राम पंचायत्स,न्यू देहली, अनामिका पब्लिकेंशंस, 2016

डॉ.के.के.शर्मा, 'भारत में पंचायती राज, विश्वभारती पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2017

लुईस प्रकाश, 'भारत के अनुसूचित जनजातियों के अधिकार', मानक पब्लिकेशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 2015

डॉ.बी.एम.जैन, रिसर्च मैथडोलॉजी, रिसर्च पब्लिकेशन, 2017

डॉ.धर्मवीर, महाजन व डॉ. कमलेश महाजन, सामाजिक अनुसंधान का प्रणाली विज्ञान-विवेक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018.

डॉ.आर.एन.त्रिवेदी, डॉ.डी.पी.शुक्ल, 'रिसर्च मैथडोलॉजी', कॉलेज बुक डिपो, जयपुर, 2017

डॉ. वीरेन्द्र प्रकाश भट्ट, 2018, 'रिसर्च मैथडोलॉजी', पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 2017

अधिनियमः-

1. लखनऊ, उत्तर प्रदेश सरकार, संयुक्त प्रांत पंचायत राज अधिनियम, (1947)

2. उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत अधिनियम, (1961)

3. उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत अधिनियम, (1994)

4. बलबंत राय मेहता समिति रिपोर्ट (1957-58)

5. अशोक मेहता समिति रिपोर्ट (1978)

6. सरकारिया आयोग रिपोर्ट (1988)

7. योजनाऐं एवं गतिविधियां, इन्दिरा गाधी पंचायती राज एवं ग्रामीण विकास संस्थान,जयपुर

8. 73वां संविधान संशोधन अधिनियम (1992)

9. पंचायत उपबन्ध (अनुसूचित क्षेत्रों पर विस्तार) अधिनियम (1996)

10. वार्षिक रिपोर्ट, ग्रामीण विकास मत्रालय, नई दिल्ली (2017-2018)

11. वसु, डी.डी. भारत का संविधान

12. पाण्डे, जे.एन., भारत का संविधान सेन्ट्रल ला एजेन्सी, इलाहाबाद

पत्र- पत्रिकाऐं

1. योजना, पत्रिका के विभिन्न अंक, (योजना आयोग, नई दिल्ली)

2. कुरूक्षेत्र, पत्रिका के विभिन्न अंक, (ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली)

3. पंचायत अपडेट, पत्रिका के विभिन्न अंक, (इन्स्टीट्यूट आफ सोशल साइंस, नई दिल्ली)

4. मानुषी, नई दिल्ली

5. इकोनोमिक एण्ड पालिटिकल वीकली, मुम्बई

6. दैनिक जागरण , उत्तरप्रदेश संस्करण

7. हिन्दुस्तान टाइम्स, नई दिल्ली

8. टाइम्स आफ इण्डिया, नई दिल्ली

9. हिन्दुस्तान, उत्तरप्रदेश, नई दिल्ली

10. नवभारत टाइम्स, नई दिल्ली

11. अमर उजाला, समाचार पत्र, आगरा

12. द हिन्दू , नई दिल्ली

13. इंडियन एक्सप्रेस

14. इंडिया टुडे

15. ऑर्गेनाएजर

16. द यू.पी. जनरल आफ पोलिटिकल सांइस

17. सांख्यिकीय पत्रिका

18. इण्डिया जनरल आफ पोलिटिकल सांइस

वेब साईट :-

www.updes.up.nic.in

www.sonbhadra.nic.in

www.upelectioncommission.nic.in

https://censusindia.gov.in/2011-common/censusdata2011.html

https://sonbhadra.nic.in/notice/zila-panchyet-sonbhadra/

https://panchayat.gov.in/state/ut-pr-act